खण्ड–01 आधुनिक संस्कृत साहित्य एवं साहित्यकार

खण्ड परिचय

साहित्यशास्त्र की ही अन्य संज्ञा काव्यशास्त्र अथवा अलंकारशास्त्र है। साहित्य का सर्वप्रथम बीज हमें वैदिक वाङ्मय में मिलता है परन्तु इसकी सुदृढ़ स्थापना सर्वप्रथम हमें आचार्य भरत (ई0पू0 चौथी शती) के नाट्यशास्त्र में प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ में हमें पहली बार रस, अलंकार, छन्द, गुण एवं प्रवृत्ति जैसे काव्यशास्त्रीय तत्त्वों की समीक्षा प्राप्त होती है। नाट्यशास्त्र में मिलने वाली काव्यशास्त्रीय स्थापना ही दो सहस्त्राब्दियों तक पल्लवित एवं पुष्पित होती रही। मेधविरुद्, भामह, दण्डी, उद्भव, रुद्रट, राजशेखर, कुन्तक, महिमभट्ट, रूय्यक, मम्मट, भोज, जयदेव, विद्याधर, विश्वनाथ, विद्यानाथ, अप्पयदीक्षित एवं पण्डितराज जगन्नाथ ने अपने गूढ़ चिन्तनों से साहित्यशास्त्र को परिपुष्ट किया तथा उसकी साड.ोपांड्.ग व्याख्या की।

इस साहित्यशास्त्र का चिंतन पंडितराज जगन्नाथ (सत्रहवीं शती ई0) के बाद लगभग समाप्त सा प्रतीत होता है। परन्तु यह भ्रम है, मुगल–सल्तनत के बाद भी साहित्य–सर्जना निर्बाध गति से चलती रही। पण्डितराज के अनन्तर कितने ही आचार्यों ने स्वतन्त्र रूप से काव्य–सर्जना की, कितने टीकाकार हुए अथवा कितने आचार्यों ने काव्यशास्त्रीय तत्त्वों की समीक्षा की ? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हे, जिसका उत्तर अभी तक पूर्णतया ज्ञात नहीं है। इस प्रश्नपत्र में हम कतिपय आधुनिक कवियों एवं काव्यशास्त्रीय आचार्यों तथा उनकी कृतियों का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।

इस खण्ड में छः इकाईयाँ हैं। जिनमें हम आधुनिक संस्कृत–साहित्य का सामान्य परिचय, आधुनिक काल–विभाजन के संबंध में विभिन्न विद्वानों का मत जान पाएँगे। आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियों को तथा पाठ्यक्रम में निर्धारित कवियों के महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य तथा उनके आधुनिक लक्षण के साथ–साथ कवियों का सामान्य परिचय का भी ज्ञान होगा।

इकाई–01 आधुनिक संस्कृत साहित्य का सामान्य परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 संस्कृत–साहित्य का महत्त्व एवं प्राचीनता

1.3 संस्कृत–साहित्य का विकास

1.3.1 संस्कृत–साहित्य का आधुनिक काल–विभाजन

1.3.1.1 प्रो0 वर्णेकर का मत

1.3.1.2 डॉ0 हीरालाल शुक्ल का मत

1.3.1.3 प्रो0 राजेन्द्र मिश्र का मत

1.3.1.4 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी का मत

1.3.1.5 डॉ0 जगन्नाथ पाठक का मत

1.4 अभ्यास–प्रश्न

1.5 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1.0 प्रस्तावना

संस्कृत विश्व की प्राचीनतमा भाषा है। वर्तमान में उसकी वैज्ञानिकता भी सिद्ध हो गई। व्याकरण की दृष्टि से भी संस्कृत भाषा अत्यन्त समृद्ध है। संस्कृत भाषा में रचनाएँ की जाती रही हैं। परन्तु पण्डितराज के बाद संस्कृत रचनाओं का प्रणयन रूक सा गया। परन्तु संस्कृत–रचनाओं का सर्जन नए कलेवर में पुनः प्रारंभ हुआ।

1.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद संस्कृत साहित्य के महत्त्व एवं प्राचीनता को जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद संस्कृत–साहित्य के आधुनिक काल–विभाजन को जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद अनेक विद्वानों का काल–विभाजन के सम्बन्ध में मत जान सकेंगे।

1.2 संस्कृत–साहित्य का महत्त्व एवं प्राचीनता

आधुनिक संस्कृत साहित्य का परिचय प्राप्त करने से पूर्व आवश्यक है कि हम संस्कृत की प्राचीनता एवं महत्त्व को जान लें। संस्कृत विश्व की सबसे प्राचीनतम एवं वैज्ञानिक भाषा है। हजारों वर्षों से अनवरत संस्कृत भाषा के माध्यम से साहित्य–रचनाएँ हो रहीं हैं। ऋग्वेद को ईसा पूर्व पाँच हजार साल प्राचीन स्वीकार किया जा चुका है, ऐसे में संस्कृत को एक भाषा मानना कदापि उचित नहीं है। संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का संवाहक होने के साथ–साथ अन्य अनेक भाषाओं की जननी भी है। अतः हमारे लिए आकलनीय भी है।

संस्कृत का अर्थ है – संस्कार युक्त भाषा। संस्कृत के संस्कारयुक्त होने के कारण विश्व के लगभग दो तिहाई भाग में इसका प्रचार–प्रसार था। संस्कृत भाषा एक आदर्श भाषा मानी गई है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भी इसे विश्व की प्राचीनतम भाषा माना तथा इसी

वैज्ञानिकता एवं शब्दों के अथाह भण्डार की भी एक स्वर में प्रशंसा की है। संस्कृत भाषा को भारोपीय परिवार की अन्य भाषाओं की जननी भी माना गया है।

व्याकरण की दृष्टि से समृद्ध होने के कारण संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता को विश्व के मूर्धन्य विद्वानों ने भी स्वीकार किया है। साहित्य–सर्जना का मूल मंत्र लोकमंगल और सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् होने के कारण संस्कृत साहित्य भी अपनी कृतियों के माध्यम से अपने उद्देश्यों की पूर्ति करती है।

वैदिक ग्रन्थ ऋग्वेदादि, उपनिषद्, वेदांग, इतिहास, पुराण, महर्षि वाल्मीकि प्रणीत रामायण, महर्षि वेदव्यास विरचित महाभारत, पुराण आदि संस्कृत भाषा के ग्रन्थ हमारी अमूल्य सांस्कृतिक, आध्यात्मिक साहित्यिक विरासत हैं।

पाणिनि आदि वैयाकरणों के विलक्षण व्याकरण शास्त्र, विभिन्न कोटि के अन्य महनीय ग्रन्थ जैसे कौटिल्य का अर्थशास्त्र, चरक आदि के आयुर्वेद के ग्रन्थ, दार्शनिकों के ग्रन्थ, महाकवियों की अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं जो संस्कृत के महत्त्व को उजागर करती हैं। संस्कृ त साहित्य न केवल हम भारतीयों के अपितु पाश्चात्य विद्वानों के लिए भी समान रूप से संग्राह्य एवं शोध का विषय बना। अँगेज आफिसर सर विलियम जोन्स ने भारत में सर्वप्रथम संस्कृत भाषा का अध्ययन कर 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक का अंग्रेजी में अनुवाद किया। जॉन फास्टर ने इस अंग्रेजी अनुवाद के द्वारा पुनः इसका जर्मन भाषा में अनुवाद किया। कालान्तर में अनुक यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत अध्ययन में रुचि ली तथा संस्कृत वाड्.मय का अध्ययन किया। संस्कृत के एक विद्वान पाश्चात्य अध्येता प्रो0 विल्सन ने लिखा है कि 'संस्कृत में न जाने कैसी मिठास है कि हम विदेशी लोग भी उसके पान से निरन्तर उन्मत्त रहते हैं' इसी प्रकार पाश्चात्य विद्वान पिशेल ने भी कहा है कि 'संभवतः संस्कृत समस्त भाषाओं में सर्वाधिक सुन्दर है। यह ऐसी भाषा है जो पहले से ही उच्च कोटि की पूर्णता को प्राप्त है।'

गुरुवर्य प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने अपने पुस्तक 'नई सहस्त्राब्दी में संस्कृत' के चतुर्थ अध्याय में भारतीय भाषाओं एवं संस्कृत के सम्बन्ध को विस्तृत रूप में व्याख्यायित किया है। प्रो0 मिश्र के शब्दों में ''भारतीय भाषाओं का नाम लेते ही उन समस्त भाषाओं का बोध हो

उठता है जो आर्य परिवार से सम्बन्धित हैं जैसे – हिन्दी, बंगला, मराठी, पंजाबी, उड़िया, असमिया आदि। साथ ही, उन भाषाओं का भी बोध होता है जो आर्येत्तर भाषा परिवार से सम्बद्ध हैं जैसे दक्षिण भारत के चार प्रान्तों की भाषाएं तथा दरद परिवार की भाषाएँ – कश्मीरी, पश्तों आदि। परन्तु इन समस्त भारतीय भाषाओं का संस्कृत के साथ गहरा भाषिक सम्बन्ध है। जो भाषाएँ आर्य परिवार की हैं वे तो शत–प्रतिशत संस्कृत की अघर्मण हैं ही ध्वनिग्राम, पदरचना, वाक्यविन्यास एवं अर्थ सम्पत्ति की दृष्टि से। आश्चर्य तो तब होता है जब आर्येत्तर परिवार की भाषाओं में भी संस्कृत शब्दों की भागीदार देखने को मिलती है।''

भाषाविज्ञान के क्षेत्र में हुए गहन अध्ययन ने सिद्ध कर दिया है कि भारोपीय परिवार की भाषाएँ एक ही मूल संस्कृत से निकली हैं। विश्व की अनेक भाषाओं ने संस्कृत से शब्द लिए हैं। पोकॉक नाम के विद्वान ने माना है कि ग्रीक भाषा की उत्पत्ति संस्कृत से हुई है। उनका मानना है कि ग्रीक डिक्शनरी के दस शब्दों में से छह–सात शब्द संस्कृत के हैं।

व्याकरण की दृष्टि से संस्कृत सर्वाधिक सम्पन्न भाषा है। संस्कृत भाषा में वाक्य निर्माण करने पर त्रुटि होने की संभावना नहीं है क्योंकि संस्कृत व्याकरण वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है। सभी नियम व्याकरण की कसौटी पर कसे हुए हैं कि किस प्रकार प्रातिपदिक में सुप् अथवा तिङ्. प्रत्ययों को लगाकर पद का निर्माण करके फिर कारकों, वचनों, पुरुषों, के अनुसार क्रियारूपों का चयन करना हैं, पूर्व निर्धारित होता है। संस्कृत में प्रभूत शब्दों का निर्माण संभव है। संस्कृत में संधि तथा समास के द्वारा दीर्घ वाक्यों के प्रयोग से बचा भी जा सकता है।

संस्कृत में आध्यात्म और विज्ञान का अद्भुत समन्वय है। भारतीय संस्कृति आत्मसाक्षात्कार रूप परमपुरूषार्थ मोक्ष की प्राप्ति को ही मानव जीवन का परम लक्ष्य स्वीकार करती है। परन्तु इसके साथ ही उसने जीवन के भौतिक एवं स्थूल पक्षों को भी महत्व दिया है। वर्तमान में, प्रचलित लगभग विज्ञान की सभी शाखाओं से सम्बन्धित क्षेत्रों पर हमारे यहाँ शोध हुए हैं और उनमें संस्कृत ग्रन्थ उपलब्ध हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करने पर संस्कृत वाङ्.मय में हमें गणित, भौतिकविज्ञान, रसायनशास्त्र, जन्तुविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान, आयुर्वेद, ज्योतिष, पर्यावरण,

भूगर्भविज्ञान, योग आदि के सूत्रों के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्राप्त हुए हैं। अनेक प्रकार की चिकित्सा पद्धति–शल्य क्रिया आदि वर्णन यजुर्वेद में प्राप्त होता है।

आधुनिक संसार में जितना ज्ञान–विज्ञान है जो भी विद्याएँ या कलाएँ हैं उन सबका मूल वेदों में हैं। ऋग्वेद के काल से ही हमारे ऋषियों ने सूर्य को जगत का नियता जान लिया था – 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुश्च'। वेदों में सूर्य का महत्त्व तथा अन्य ग्रहों से उसका सम्बन्ध, सौर ऊर्जा आदि का सम्यक् वर्णन प्राप्त होता हैं। षड्वेदागों में वर्णित ज्योतिषशास्त्र के अन्तर्गत भी सूर्य सिद्धान्त, मूहूर्त विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान आदि की भी रचना संस्कृत में ही की गई है। ज्योतिष सम्बन्धी तत्त्वों के आधार पर पाश्चात्य विद्वानों ने भी स्वीकार किया है कि ज्योतिष का गुरु भारत ही है। प्रो0 लेवर और कोलब्रुक ने चीन और अरब की ज्योतिष विद्या का विकास भारत से ही होना माना है। जौन्स वेन्टले का यह कथन कि 'भारतीय विद्वानों ने न मालूम कितने वर्षों पूर्व किन साधनों से ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्तों का आविष्कार किया, इसका निर्णय करने में हम असमर्थ हैं', यह कथन भी भारत को ज्योतिष शास्त्र का गुरु सिद्ध करता है।

संस्कृत साहित्य का मूल उद्देश्य समाज में ऊँचे आदर्शों की स्थापना कर मानव मात्र को एक सुसभ्य, संस्कारवान नागरिक बनाना है। संस्कृत में वर्णित उपदेशों से हमें सरलता से ज्ञात होता है कि 'रामादिक्कवर्तिव्यं न रावणादिवत्'। इस साक्षात् प्रमाण हितोपदेश तथा पंचतंत्र की कथाएँ हैं। संस्कृत को इन्हीं कारणों से सदैव महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी माना जाता रहा है।

1.3 संस्कृत–साहित्य का विकास

अर्वाचीन संस्कृतसाहित्य को जानने से पहले हमें संस्कृत के विकासक्रम की सामान्य जानकारी आवश्यक है। संस्कृतसाहित्य का प्रारंभ निर्विवाद रूप से ऋग्वेद से माना गया है। इसके बाद संस्कृतसाहित्य का क्रमबद्ध शास्त्रीय निरुपण आचार्य भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से प्राप्त होता है। भरतमुनि का समय विद्वानों ने विक्रम से 02 शताब्दी पूर्व से लेकर 02 शताब्दी तक माना है। वाल्मीकी रामायण लौकिक संस्कृत काव्य का प्रथम आदिकाव्य माना गया है। वेद, पुराणों, आर्ष–काव्यों की भाषा के रूप में संस्कृत सदैव समादृत रही। कविकुलगुरु

कालिदास, माघ, श्रीहर्ष आदि ने लौकिक संस्कृत साहित्य का विपुल साम्राज्य खड़ा किया तो वहीं आचार्य भरत, भामह, आनन्दवर्द्धन, मम्मट, पंडितराज जगन्नाथ आदि आचार्यों ने काव्यों को शास्त्रीय दृष्टि से परखा। लगभग दो हजार वर्षों की समृद्ध परम्परा में संस्कृत वाड्.मय पुष्ट होता रहा। इतने लम्बे कालखण्ड तक किसी भाषा का उच्चतम शिखर पर स्थापित रहना कोई सामान्य घटना नहीं थी। संस्कृत साहित्यनुगारियों का आश्रय पाकर संस्कृत फलती–फूलती रही, माना जाता है कि पंडितराज जगन्नाथ के बाद अर्थात् शाहजहाँ के शासनकाल (1625–56ई0) के बाद संस्कृत काव्य–रचनाधर्मिता में एक प्रकार का ठहराव आ गया, उसका ह्रास होना आरंभ हुआ। परन्तु 18वीं शताब्दी में भी अनेक संस्कृत कवियों ने अपने काव्यों का प्रणयन किया। सन् 1784ई0 में रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल (कलकत्ता) की स्थापना होने के बाद संस्कृत का पुनर्जागरण काल प्रारंभ हुआ माना गया।

1.3.1 संस्कृत–साहित्य का आधुनिक काल–विभाजन

उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ से प्रकाशित 'संस्कृत वाङ्मय का वृहत् इतिहास' के 'आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास' नामक सातवें खण्ड में श्रद्धेय आचार्य जगन्नाथ पाठक ने संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल विभाजन और आधुनिकता पर विस्तार से लिखा है। उन्होंने लिखा है कि किस काल को आधुनिक संस्कृत का प्रारंभिक या पुनर्जागरण काल माना जाए। यह एक कठिन प्रश्न है तथा आधुनिकता क्या मात्र कालाधारित होती है? प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार ''विश्व और देश में बदलती राजनीतिक, सामाजिक स्थितियों के बोध के साथ समग्र राष्ट्र के ऐकात्म्य के प्रति दृष्टि कम से कम एक व्यावर्तक है जो काल और विषयवस्तु की दृष्टि से आधुनिक साहित्य का उपक्रम कराता है।'' ('नवोन्मेष' राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर, पृष्ठ 118)

1.3.1.1 प्रो0 वर्णेकर का मत– आधुनिक काल के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपनी–अपनी दृष्टि प्रदान की। प्रो० वर्णेकर जी ने अर्वाचीन काल कर आरंभ सत्रहवीं शताब्दी को माना है। आचार्य पं0 बलदेव उपाध्याय ने अर्वाचीनकाल 1750 ई0 से माना तथा आधुनिक संस्कृत साहित्य का कालखण्ड 1850 से 1990 ई0 से मानने की संस्तुति की।

1.3.1.2 डॉ0 हीरालाल शुक्ल का मत

डॉ0 हीरालाल शुक्ल ने अपने ग्रन्थ 'आधुनिक संस्कृत साहित्य' में 1784ई0 को संस्कृत के नव जागरणकाल का प्रारंभ स्वीकार किया। इस समय ही सर विलियम जोन्स के प्रयास से 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी' की स्थापना कलकत्ता में हुई। इसी संस्था के माध्यम से संस्कृत की हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का प्रकाशन प्रारंभ हुआ तथा संस्कृत के क्षेत्र में शोध किये जाने लगे। विलियम जोन्स संस्कृतानुरागी था, उसने स्वयं अभिज्ञानशाकुन्तलम् का अंग्रेजी में अनुवाद किया। अनेक संस्कृत साहित्य अंग्रेजी में अनुदित होकर प्रेस में मुद्रित हुए। जिससे समस्त यूरोपीय देशों का आकर्षण संस्कृत की ओर बढ़ा। 1791 ई० में अभिज्ञानशाकुन्तलम का जर्मन भाषा में भी अनुवाद होना उस समय में साहित्य की बढ़ती हुई लोकाप्रियता का द्योतक है। 1791 में ही वाराणसी में एक संस्कृत कॉलेज की स्थापना हुई। डॉ0 शुक्ल ने इन सभी घटनाओं को संस्कृत की उभरती हुई संभावना माना तथा इस काल को संस्कृत साहित्य के आधुनिककाल का आरंभ माना। 1835 से 1920 तक के काल खण्ड को दरबारी ने संस्कृत साहित्य की आधुनिक काल का विकासकाल स्वीकार किया है।

1.3.1.3 प्रो0 राजेन्द्र मिश्र का मत

प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी ने 'प्राग्वाचिकम्' देववाणी सुवासः प्रथमखण्ड की भूमिका में संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल खण्ड को तीन खण्डों में बाँटा है–

1. पुनर्जागरण काल (1784–1884)
2. स्थापना काल (1884–1946)
3. समृद्धि काल (1947 से आज तक)

प्रो0 मिश्र ने अपनी पुस्तक 'अर्वाचीन संस्कृत साहित्य : एक विश्लेषण' में लिखा है कि 18वीं शती में भी विपुल संस्कृत वाड्.मय लिखा गया। विश्वेश्वर पण्डित, रामदेव, घनश्याम, जगदीश्वर पेरुसुरि, शंकरदीक्षित, भूदेवशुक्ल, देवकवि, ट्रावनकोर के युवराज राजवर्मा

(1757–1789) ने अपनी दृश्य एवं श्रव्य कृतियों से देववाणी की समृद्ध किया। इनके अतिरिक्त सैकड़ों टीकाकारों एवं स्वतंत्र काव्यशास्त्रीय आचार्य भी इस काल खण्ड में हुये हैं।

प्रो0 मिश्र 'एशियाटिक सोसाइटी' की स्थापना और अंग्रेज विद्वानों की सहभागिता द्वारा संस्कृत साहित्य के अंग्रेजी अनुवाद तथा मुद्रण को ही संस्कृत वाङ्मय के आधुनिक काल का पुनर्जागरण काल मानते हैं। इसी कालखण्ड में संस्कृत को पुनः अपनी प्रतिष्ठा और स्वरुप प्राप्त हुआ। संस्कृत भाषा और वाङ्मय का प्रचार–प्रसार सम्पूर्ण विश्व में होने लगा। संस्कृत–रचनाधर्मिता को पुनः गति मिल गई।

पुनर्जागरण काल – पुनर्जागरण काल में पाश्चात्य विद्वानों का आकर्षण संस्कृत अध्ययन की ओर तीव्रता से बढ़ा। पारस्परिक मित्रता एवं सहयोग से पारस्परिक विचार–विनिमय एवं चिन्तन की एक नई परम्परा का विकास हुआ। इससे दोनों संस्कृतियों में समरसता उत्पन्न हुई। इस काल में भारतीय मनीषियों ने ना केवल संस्कृतसाहित्य की साधना की अपितु आंग्ल भाषा के काव्यों का भी संस्कृत में अनुवाद किया।

पं0 अंबिकादत्त व्यास, लक्ष्मणसूरि विधुशेखरभट्टाचार्य, पद्यनाथ, पंचानन, शिवेन्द्र, रामचन्द्र, केरलवर्मा, अभिनवरामनुजाचार्य आदि ने संस्कृत में रचनाएँ की वहीं आर0 कृष्णमाचारी ने शेक्सपीयर के नाटक 'मिड समर नाइट्स ड्रीम' का 'वासन्तिकस्वप्न' नाम से संस्कृत में अनुवाद किया। श्रीशैल दीक्षितार ने 'भ्रान्तिविलास' नाम से 'कामेडी ऑफ एरर्स' का अनुवाद किया। ट्रवानकोर के युवराज राजवर्मा ने शेक्सपीयर के 'ओथलो' नामक नाटक का भी रुपान्तरण किया।

स्थापना काल– प्रो0 मिश्र 1884 में कांग्रेस की स्थापना से स्वाधीनता प्राप्ति तक काल को आधुनिक संस्कृत साहित्य का स्थापना काल मानते हैं। उनका मानना है कि इस काल तक से पूर्व की अवधि में संस्कृत काव्य, महाकाव्य, खण्डकाव्य, कथा, आख्यायिका, चम्पू, नाटक, प्रकरण आदि साहित्यदर्पण की कसौटी पर कसकर ही लिखी जाती थीं। यहाँ तक की यात्रा में कई नई विधाओं का भी समावेश संस्कृतकाव्य विधाओं में हुआ अनेक मौलिक परिवर्तन हुए और नई स्थापना हुई। अन्य भाषाओं की साहित्यिक विधाएँ जैसे एकांकी, यात्रावृत्त, संस्मरण,

जीवनी, रेखाचित्र, उपन्यास, गीत–गजल आदि के लेखन की प्रवृत्ति बढ़ी। संस्कृत कवियों की रचनाएँ पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर पाश्चात्य मानकों के साथ जुड़ने लगीं। कवियों के नायकों, कथानकों आदि के चयन में सर्वथा नवीनता दिखाई पड़ने लगी। देवताओं–राजाओं में चरित वर्णन की अपेक्षा कवियों ने स्वराज्य, वीरपुरुषों, गान्धिचरित आदि को अपना वर्ण्य विषय बनाना प्रारंभ कर दिया। इस काल में इस प्रकार के काव्यों की बाढ़ सी आ गई।

समृद्धि काल– प्रो0 राजेन्द्र मिश्र स्वात्रन्र्योत्तर (1947) काल को आधुनिक संस्कृत साहित्य का समृद्धिकाल माना है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय समाज, उसके परिवेश आदि में अनेक परिवर्तन हुए जिसका स्पष्ट प्रभाव साहित्य, उसके विषय और शैली और अभिव्यक्ति पर पड़ा। पूर्व स्थापित मान्यताओं का पल्लवन भी हुआ और उनका खण्डन भी। विभिन्न प्रकार की काव्यविधाओं की सर्जना हुई। मुक्त गीतों की रचना काफी ज्यादा होने लगी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पारम्परिक शास्त्रीय बंधनों से मुक्त नवगीतों, नवकथाओं, मुक्तक आदि के कारण संस्कृत को विश्वपटल पर प्रतिष्ठा मिली। गजल आदि विधा के कारण संस्कृत अत्यन्त लोकप्रिय बन सकी।

1.3.1.4 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी का मत

प्रो0 त्रिपाठी ने 'अर्वाचीन संस्कृत साहित्य काव्य एवं काव्यशास्त्र' नामक पुस्तक में छपे अपने एक लेख के अनुसार आधुनिक संस्कृत कवियों को पाँच पीढ़ियों में बाँटा है। प्रो0 त्रिपाठी के अनुसार पहली पीढ़ी 1900 से 1920 के बीच। दूसरी पीढ़ी 1921 से 1940 के बीच जन्में, तीसरी पीढ़ी 1941 से 1960 के बीच के जन्में रचनाकारों की, चौथी पीढ़ी 1961 से 1980 के बीच जन्मे तथा पाँचवी पीढ़ी 1980 के बाद जन्म लेने वाले रचनाकारों की है।

1.3.1.5 डॉ0 जगन्नाथ पाठक का मत

डॉ0 जगन्नाथ पाठक ने आधुनिक संस्कृत काव्य के इतिहास के कालखण्ड को विभाजित करने के लिए संस्कृत रचनाकारों के युगों को आधार बनाना अधिक उपयोगी माना, जिन्होंने अपने काल को अपनी रचनाधर्मिता से सर्वाधिक प्रभावित किया हो –

1. अप्पाशास्त्री राशिवडेकर (1873–1913)

2. भट्टयुग पं० भट्ट मथुरानाथ शास्त्री (1889–1960)

3. राघवन्–युग के प्रवर्तक डॉ0 वेंकट राघवन् (1873–1913)

1. **अप्पाशास्त्री राशिवडेकर (1873–1913)–** इस युग में संस्कृत साहित्य प्रशस्तिगान वाली तथा पाण्डित्य प्रदर्शन वाली प्रवृत्ति से मुक्त हुई। प्रसाद, ओज गुण से युक्त राष्ट्रीय चेतना से युक्त रचनाएँ इस युग में की जाने लगीं। पूर्व में अप्रकाशित रचनाओं का बहुत अधिक मात्रा में प्रकाशन करवाया गया। डॉ0 कलानाथ शास्त्री ने राशिवडेकर युग को 1890 से 1930 के मध्य माना है।

2. **भट्टयुग पं० भट्ट मथुरानाथ शास्त्री (1889–1960)–** इस युग में नये कवियों के लिए संस्कृत रचना के लिए नए मार्ग नई विधाओं का मार्ग प्रशस्त हुआ। भट्ट जी ने गद्य साहित्य लेखन को गति प्रदान की। अनेक पत्र पत्रिकाओं का सम्पादन कर शिथिल पड़ रहे संस्कृत के प्रभाव को पुनः स्थापित किया। गद्य साहित्य, निबन्ध लेखन आदि में समसामयिक विषयों को स्थान मिला।

3. **राघवन्–युग के प्रवर्तक डॉ0 वेंकट राघवन् (1873–1913)–** डॉ0 वेंकट राधवन् ने संस्कृत साहित्य को समकालिक भारतीय भाषाओं के साहित्य के समकक्ष स्थान दिलाया। साहित्य–अकादमी की पत्रिका 'संस्कृत–प्रतिभा' का सम्पादन कर उसे अखिल भारतीय स्तर पर प्रतिष्ठित किया तथा अखिल भारतीय स्तर के साहित्य का एक ही स्थान से प्रकाशन प्रारंभ करवाया। डॉ0 राघवन् ने आलोचनात्मक लेखन के साथ–साथ नाटकों का भी लेखन और मंचन किया। जिसे संस्कृत की सर्वग्राह्यता बढ़ी।

इस प्रकार आचार्य पाठक का यह युग विभाजन व्यक्ति विशेष पर आधारित है। जिस युग में जिस व्यक्ति विशेष का प्रभाव संस्कृत काव्यों पर गया, उसके आधार पर 1980 के बाद के युग का भी नाम किसी विशिष्ट व्यक्ति के नाम पर किया जाना चाहिए। इस युग में नई विधाओं के नये प्रतिमानों के काव्यों से संस्कृत साहित्य को श्रीवृद्धि हुई।

हर्ष देव माधव जी के एक पत्र में कहा गया है कि वर्तमान संस्कृत साहित्य को यदि किसी व्यक्ति विशेष के नाम से अभिहित करने की बात कही जाये तो 1980 के बाद का युग अभिराज युग कहा जा सकता है।

आधुनिकता को कभी काल विशेष के निर्णायक तत्व के रुप में विभक्त किया गया तो कभी विषय और परिवेश आदि के द्वारा। अलग–अलग दृष्टिकोण से इसकी व्याख्या की जा सकती है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में कविता में एक नवीन स्तर मुखर हुआ, एक नई चेतना ने जन्म लिया। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ। इस कालखण्ड में काव्यरचना की एक नई शैली सामने आई। अनेक नई विधाएँ, नये स्वरुप में कवियों के समक्ष उपस्थित हो गईं, जो पुरातन से सर्वथा भिन्न थीं। संस्कृतसाहित्य की प्रवृत्तियों में बड़ा परिवर्तन आ गया। कथानकों के विषय बदल गए, विधाएँ बदल गई, कविता के मानक बदल गए, रसचर्वणा का रुप परिवर्तित हो गया, नवीन छन्दों के प्रयोग होने लगे। यहाँ तक की छन्द मुक्त रचनाओं का भी प्रचलन हो गया। इस युग में गद्य लेखन को बढ़ावा मिला। गद्य लेखन की नई विधाओं जैसे उपन्यास, कहानी, लघुकथा, स्पशकथा, टुप्कथा आदि में प्रचुर मात्रा में लेखन होने लगा। गद्य लेखन की विधा विन्ध्याटवी के जंगलों से निकल कर रोजमर्रा की जिन्दगी के चारो ओर घूमने लगी। पद्यात्मक काव्य में भी नवगीत, लोकगीत, गजल, सोहर, सोरठा आदि लिखे जाने लगे। मेघदूत के अनुकरण पर अनेक संदेशकाव्यों का प्रणयन हुआ। संस्मरणात्मक यात्रावृत्तान्त की बाढ़ सी आ गई। इसके साथ ही पाश्चात्य काव्य के प्रभाववश लयबद्ध गीति काव्यों की एक नई विधा का जन्म हुआ। वर्तमान संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन ने गीति काव्यों को अधिक व्यापक स्तर पर आधुनिकता के सोपानों पर पहुँचाया है।

लघुकाव्यों के साथ ही खण्डकाव्यों को कवियों ने अपनाया। इस युग में कई खण्ड काव्य लिखे गए आधुनिक कालावधि में लघुकाव्यों के साथ ही कई चम्पूकाव्यों का भी प्रणयन हुआ।

नाट्य–साहित्य भी इस युगान्तकारी परिवर्तन से अछूता न रहा। रुपक के भेदों के साथ–साथ एकांकी की नई विधा भी ऊभर कर सामने आई। लक्षण के आधार पर विद्वानों ने इसका अन्तर्भाव प्रहसन आदि क्षेत्रों में ही मान लिया है।

इक्कीसवीं शती या बीसवींशती के उत्तरार्द्ध में लिखी गई रचनाओं के वर्ण्य विषय सीमाओं की परिधि से स्वतंत्र हैं। मनुष्य के जीवन में जो कुछ भी घटता है या फिर मुनष्य के जो अच्छे–बुरे भाव हैं वो सभी काव्य के कथानक बन चुके हैं।

इस प्रकार यदि संस्कृत साहित्य की आधुनिकता को मापना हो तो तीन आधार पर इसे तौलना होगा।

1. युगीन आधुनिकता
2. काव्यशास्त्रीय मानदण्ड
3. शिल्प

1. **युगीन आधुनिकता**– ऐसे कवि जिनका कवित्व संसार संस्कृत के पुनर्जागरण काल के बाद निर्मित हुआ, परन्तु वे परम्परा के पोषक रहे, उनके काव्यों को युगीन आधुनिक काव्य माना गया जो केवल युगे के आधार पर आधुनिक हैं। जैसे म0म0 मथुरानाथ दीक्षित, म0म0 भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, पण्डिता क्षमाराव, पं.0 अबिकादत्त व्यास, पं0 उमापति द्विवेदी आदि।

2. **काव्यशास्त्रीय मानदण्ड–** आधुनिक काव्यों के संदर्भ में प्राचीन काव्य के लक्षण अप्रासंगिक हो गए हैं। संस्कृत नवलेखन काव्यशास्त्रीय मानदण्डों का उल्लंघन करता हुआ सा प्रतीत होता है। संस्कृत में काव्य, पौराणिक कथाएँ, स्तोत्र, भक्ति साहित्य, गीतिकाव्य, एकांकी, रेडियो–रुपक के रूप में निर्मित हो रही रचनाओं को काव्यशास्त्रीय मानदण्ड पर कस कर उनके काव्यत्व–अकाव्यत्व का विचार करना संभव ही नहीं है। प्राचीनकाल में जहाँ महाकाव्य का नायक कोई देवता या क्षत्रिय नरेश होता था, वहीं आधुनिकता के इस वर्तमान युग में प्राचीन काल की रचनाओं के धीरोदात्त, धीरोद्धत

नायक का स्थान अब नित्यप्रति की जिन्दगी जीने वाले एक साधारण नायक ने ले लिया है।

3. **शिल्प–** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र की विचारधारा, चिंतन सामाजिक परिवेश आदि में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। अनेक नई समस्याओं ने समाज को प्रभावित किया जैसे दलितों का उद्धार, विधवा विवाह, सती प्रथा, शिक्षा, दहेज प्रथा, साम्प्रदायिक विवाद, राष्ट्रीय चेतना आदि। इन सभी कुरीतियों की ओर तत्कालीन कवियों का भी ध्यान आकृष्ट हुआ और उन्होंने अपना काव्य में जीवन की विसंगतियों एवं कुरीतियों पर करारा प्रहार किया। आधुनिक कवियों ने पौराणिक परम्परा से बाहर निकल कर युगधर्मानुरुप चरित्रों में भी परिवर्तन कर उसका नाम, नया स्वरुप उपस्थित किया।

आधुनिक कविता में कवि अपने भावों को खुलकर प्रगट कर रहा। प्राचीन काव्य रस और भाव के बन्धनों में जकड़ी थी, परन्तु वर्तमान युग का कवि पूरे मनोयोग से अपने समस्त भावों का वर्णन करता है। रस के प्रति भी कवि शास्त्रीय मानदण्डों से स्वंय को मुक्त कर चुका है।

वर्तमान में काव्य की कई नवीन विद्या प्रचलन में है। छन्दोमुक्त काव्यों को गेयता के आधार पर प्रसिद्धि मिली है। प्रो0 राजेन्द्र मिश्र अनेक लोकगीतों (नक्तकम्, सूतगृहगीतम्, प्रचरणम्, उत्थापनम्, कजरी आदि) की रचना संस्कृत में की है। संस्कृत में अनेक पाश्चात्य छन्दों जैसे– तान्का, सानेट आदि को भी स्थान प्राप्त हुआ है।

1.4 अभ्यास–प्रश्न

1. आधुनिक संस्कृत–साहित्य के काल–विभाजन पर प्रकाश डालिए।
2. स्थापना–काल से क्या समझते हैं ?
3. संस्कृत–साहित्य के महत्त्व एवं प्राचीनता पर प्रकाश डालिए।

1.5 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत–वाङ्मय का बृहद् इतिहास, सप्तम खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सम्पादक – डॉ0 जगन्नाथ पाठक, प्रकाशक – उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ

2. नई सहस्राब्दी में संस्कृत, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रकाशक – अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद

इकाई–02 आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 इकाई के उद्देश्य

2.2 मूल प्रवृत्ति का आधार

2.3 आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियाँ

2.3.1 प्रवृत्ति का अर्थ

2.3.2 आधुनिकता के आधार

2.4 अभ्यास–प्रश्न

2.5 सन्दर्भ–ग्रन्थ

2.0 प्रस्तावना

किसी भी साहित्य या भाषा को जानने से पूर्व उस भाषा का परिचय जानना आवश्यक है। परिचय एवं प्रवृत्तियों को जाने बिना साहित्य एवं भाषा के महत्त्व एवं स्वरूप को जानना कठिन होगा। समाज के परिवर्तनशील होने के कारण उसकी प्रवृत्तियाँ भी परिवर्तित होती हैं। अतः संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियाँ सदैव एक सी नहीं होती हैं। उनका आधार सदैव समाज ही होता है। परन्तु स्वरूप सामाजिक प्रवृत्तियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।

2.1 उद्‌देश्य

1. इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियों का परिचय प्राप्त करेंगे।
2. आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियों को जान पाएंगें।
3. आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियों के आधार को जान पाएंगें।

2.2 मूल प्रवृत्ति का आधार

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज की स्थितियों–दशाओं को ही साहित्य में विषय वस्तु बनाया जाता है। समाज में प्रत्येक काल में घटित होने वाली घटनाएँ ही साहित्य में वर्णित होती हैं। इस प्रकार साहित्य संस्कृति का भी प्रधान वाहन होता है। समाज के रंग–रूप, वृद्धि–ह्रास, उत्थान–पतन, समृद्धि–दुरावस्था को जानने समझने का सामाजिक भावना एवं विचार को विशुद्ध रूप से अभिव्यक्त करता है। यदि समाज भौतिकवादी हो तो वहाँ का साहित्य भी भौतिकता से ओतप्रोत ही होगा। किसी भी प्रकार से उसमें आध्यात्म की प्रधानता नहीं होगी। ठीक उसी प्रकार आध्यात्मप्रधान, संस्कारयुक्त समाज का साहित्य भी वैसा ही होगा। समाज में रहने वाले नागरिकों को संस्कृति से अवगत कराने तथा किसी भी संदेश को उन तक पहुँचाने का प्रधान साधन साहित्य है।

संस्कृत साहित्य का इतिहास भी इस सिद्धान्त का पूर्ण समर्थक है। भारतीय समाज के उच्च विचारों को उद्घाटित करने वाले साधनों में संस्कृत साहित्य प्रमुख है। भारतवर्ष में सांसारिक जीवन को आनन्दमय ढ़ंग से जीने के लिए यद्यपि सभी साधन सुलभ है परन्तु भारतीय समाज प्रारंभ से ही शाश्वत आनन्द की उपलब्धि को अपना लक्ष्य मानता है। इसलिए संस्कृत–काव्य जीवन की विषम परिस्थितियों के मध्य भी परमआनन्द की खोज में सदा संलग्न रहा है। भारतीय संस्कृति सच्चिदनन्द भगवान को ही विशुद्ध आनन्द का स्वरूप स्वीकार करती है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था मुख्यतया गृहस्थाश्रम पर ही निर्भर है। भारतीय समाज में प्रवृत्ति मूलक समाज गार्हस्थ्य धर्म का पोषक है, अतः संस्कृत–साहित्य में इसका सम्पूर्ण चित्रण किया जाता रहा है। संस्कृत साहित्य का आदिमहाकाव्य वाल्मीकीय रामायण गार्हस्थ्य धर्म के चारों ओर घूमता है। दशरथ का आदर्श पितृत्व, कौशल्या का आदर्श मातृत्व, सीता का आदर्श पत्नीत्व, भरत का आदर्श भातृत्व, सुग्रीव का आदर्श बन्धुत्व तथा सबसे अधिक रामचन्द्र का आदर्श पुत्रत्व एवं आदर्श नृपत्व आदि सभी गार्हस्थ्य धर्म को वर्णित करते हैं। इससे ज्ञात होता है कि तत्कालिक समाज में इन मूल्यों का महत्व था तथा इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ ही समाज में व्याप्त थीं।

संस्कृत काव्य एक ओर संस्कृति की कथा सुनाता है तो दूसरी ओर संस्कृत नाटकों के माध्यम से भी तत्कालिक भारतीय संस्कृति का चित्रण करता है। भारतीय संस्कृति का प्राण आध्यात्मिक भावना है। त्याग से अनुप्राणित, तपस्या से पोषित तथा तपोवन में सवंर्धित भारतीय संस्कृति का रमणीय आध्यात्मिक रूप संस्कृत भाषा के ग्रन्थों में अपनी सुन्दर रूप से वर्णित होता है तथा सह्रदयों के ह्रदय को बरबस खींचता है। संस्कृत कवि समाज के वातावरण में विचरण करता हुआ सुख–दुख दोनों का अनुभव करता है। त्याग, आध्यात्म के साथ–साथ समाज में रहने वाले जनता के ह्रदय की बातों को जानकर उसी अनुरूप काव्यसर्जना करता है। उसके काव्य में समाज के भावों का यही प्रकटन होता है।

संस्कृत साहित्य के निर्माण, रूप तथा विकास के ऊपर भारतीय तत्त्वज्ञान का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। भारतीय तत्त्वज्ञान संसार का पर्यवसान दुःख में नहीं मानता है। निराशा के

भीतर आशा, विपत्ति के अन्दर सम्पत्ति को तथा दुख के भीतर सुख का उद्गम मानता है। संसार में व्याप्त दुःख, अंततोगत्वा सुख में आनन्द में परिणत होते हैं। इसी दार्शनिक विचारधारा के कारण जीवन के संघर्ष को प्रदर्शित करने वाले नाटकों का अंत भी सुखान्त ही होता है। काव्य को जीवन की पूर्ण अभिव्यक्ति माना गया है।

भारतवर्ष एक धर्मप्राण देश है और भारतीय संस्कृति धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत है। आस्किता तथा ईश्वर की सत्ता में अटूट विश्वास भारतीय धर्म का आधार है। भगवान् के प्रति भक्ति भाव से कारण संस्कृत में एक विशाल साहित्य की सर्जना हुई जिसे 'स्त्रोत साहित्य' कहा जाता है। हृदय की दीनता, आत्मनिवेदन, अपराध स्वीकार आदि कोमल भावों को विशाल राशि में प्रस्तुत करने वाला यह मनोवैज्ञानिक साहित्य संसार में बेजोड़ है। संस्कृत काव्यों का यह वैशिष्ट्य भारतीय धर्म की भक्ति प्रवणता के ऊपर आधारित है। संस्कृत भाषा की मधुरता भी संस्कृत काव्यों की गेयरूपता का एक साधन है। यही कारण है कोमल–कान्त पदावली का बाहुल्य होने के कारण इतनी अधिक भक्तिमय काव्यों का प्रणयन संस्कृत भाषा में हुआ है।

2.3 आधुनिक संस्कृत साहित्य की मूल प्रवृत्तियाँ

प्रत्येक युग अपनी कुछ विशेष प्रवृत्तियाँ लेकर आता है। ये प्रवृत्तियाँ देश काल और परिस्थितजन्य होती हैं। इन प्रवृत्तियों का अपना एक दौर होता है, उस दौर में चारों ओर इनका फैलाव होता है। कुछ प्रवृत्तियाँ पुरानी परम्पराओं को साथ लेकर चलती है तो कुछ बिल्कुल नए रूप में प्रगट होती हैं। इनके अनुरूप ही समाज और मनुष्य ढल जाता है, उन्हें पूर्णरूपेण आत्मसात् कर लेता है।

2.3.1 प्रवृत्ति का अर्थ

प्रवृत्ति का सीधा अर्थ – स्वभाव या विशिष्टता है। अमरकोश के अनुसार प्रवृत्ति का अर्थ – वार्ता या समाचार होता है – 'प्रवृत्तिसाराः खलु मादृशां गिरः'। किन्तु सामान्य अर्थ में प्रवृत्ति का अर्थ – शास्त्रीय बन्धन (नियम) तथा लोकाभिरुचि माना जा सकता है। आचार्य राजेन्द्र मिश्र जी ने इसका वर्णन अपनी पुस्तक 'नई सहस्राब्दी में संस्कृत' में किया है।

उपर्युक्त दो अर्थों से स्पष्ट ज्ञात होता है कि काव्य के नियम या शास्त्रीय कसौटी अथवा लोक अभिरुचि ही साहित्य की मूल प्रवृत्तियाँ हैं। प्रत्येक कालखण्ड में इनके परिवर्तित स्वरूप को ध्यान में रखकर ही साहित्य रचनाएँ की जाती है। भामह, दण्डी, वामन आदि ने अलंकार को ही काव्य का आत्मा स्वीकार किया क्योंकि उस युग की प्रवृत्ति अलंकार प्रधान काव्य की सर्वोत्कृष्टता थी। वहीं ध्वनि की स्थापना करने वाले आचार्य आनन्दवर्धन के युग की प्रवृत्ति व्यङ्.गयार्थ को आत्मा मानने की हो गई। हिन्दी साहित्य के विद्वानों द्वारा वीरगाथा काल, भक्तिकाल तथा रीतिकाल कहकर स्पष्ट कर दिया है कि अलग–अलग काल में समाज की अभिरुचि भी भिन्न–भिन्न थी।

साहित्य या काव्य समाज का दर्पण होते हैं। समाज में जो कुछ भी घटनाएँ घटित हो रही होती हैं, उन्हें उस युग की जो भी आकांक्षाएँ, संभावनाएँ होती हैं, उन्हें ही रचनाकार अपनी रचनाओं का वर्ण्य विषय बनाते हैं। साहित्य के द्वारा पाठक 'रामादिवद्वर्तितव्यं नरावणादिवद्' आदि जान पता है या फिर लोकव्यवहार आदि का ज्ञान प्राप्त कर पाता है। साहित्य अतीत, वर्तमान तथा भविष्य तीनों को ही पाठक के समक्ष उपस्थित कर देता है। कान्तासम्मित उपदेशों द्वारा कर्तव्य–अकर्त्तव्य का ज्ञान कराता है। परन्तु प्रत्येक युग की आकांक्षाओं, संभावनाओं, लोकव्यवहार, कर्त्तव्य आदि में समयानुसार परिवर्तन आते रहते हैं। यही परिवर्तन ही प्रवृत्ति है चाहे वह विचारधारा में हो या संस्कृति में। परिवर्तित प्रवृत्ति के समाज की रुचि के अनुरूप ही कवि अपने काव्य–संसार का निर्माण करता है, तथापि उसका एकमात्र उद्देश्य लोकारंजन ही होता है।

समाज की भांति ही साहित्य की भी प्रवृत्ति युगानुरूप बदलती रहती है। दो हजार वर्षों की संस्कृत साहित्य की इस अविन्छन्न परम्परा में समाज बहुत अधिक परिवर्तित हो गया है। लोक परम्पराओं के साथ–साथ शास्त्रीय नियमों में भी अभूतपूर्व परिवर्तन हुए जिससे सामाजिक प्रवृत्तियों या मूल्यों में भी परिवर्तन आया। जिसके कारण साहित्य की प्रवृत्तियों के स्वरूप में भी परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा जैसे – धार्मिक भावनाएँ आज भी विद्यमान हैं, परन्तु अन्धश्रद्धा का स्थान आज तार्किकता ने लिया है। कई ऐसी मान्यताएँ हैं जो वर्तमान युग में अमान्य हो गई, यहाँ तक की उनका विरोध ही मान्य हो गया। जैसे – विधवाविवाह, सतीप्रथा आदि।

आधुनिक संस्कृत साहित्य के पुनर्जागरण काल की विस्तृत चर्चा हम प्रारंभ में कर चुके हैं कि 1774 ई0 में कलकत्ता में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना के बाद अनेक वर्षों से सुसुप्तावस्था में पड़ी संस्कृत साहित्य पुनः ऊर्जावान हो उठी। इस काल में अनेक संस्कृत कवियों ने अपनी रचनाओं से समाज को उपकृत किया परन्तु ये प्रायः सभी रचनाकार परम्परा के पोषक ही रहें। इसकी साहित्यिक प्रवृत्ति या अभिरूचि भी प्राचीन ही थी।

आधुनिकता का वास्तविक स्वरूप स्वातंन्त्र्योत्तर काल में मिलता है परन्तु इससे पूर्व के युगों में भी संस्कृत–साहित्यकारों ने काव्य की नवीन प्रवृत्तियों को स्वीकार किया। देवस्तुति, राजाओं की प्रशस्ति से निकलकर कवियों ने जननायकों को अपना नायक बनाया। समासपूर्ण क्लिष्ट रचनाओं का स्थान बोधगम्य एवं प्रवाहमयी रचनाओं ने ले लिया। गद्यशैली में वैचारिक निबन्ध, पत्र–पत्रिकाओं में लेखन आदि के द्वारा मानव के सुखःदुख की अभिव्यञ्जना को काव्य में स्थान मिलने लगा। यही वह युग था जब संस्कृत रचनाकारों ने कालिदास या बाणभट्ट बनने के स्थान पर नवीन विधा में रचना करने की ओर ध्यानाकृष्ट किया।

आधुनिक युग में गद्य की अपेक्षा पद्यात्मक रचनाएँ ज्यादा होने लगीं। राष्ट्रीय नेताओं, महापुरुषों को नायक मानकर महाकाव्यों की रचना की जाने लगीं। इन सभी जननायकों का कालखण्ड ही आधुनिक है। अतः इन्हें आधार मानकर लिखे गए काव्यों की प्रवृत्तियाँ भी आधुनिक की श्रेणी में ही आयेंगी। नए विषयों तथा नई विषयवस्तु को लेकर वर्तमान परिवेश का पूरा चित्रण हमें आधुनिक संस्कृत–साहित्य में मिल रहा है। इससे स्पष्ट है कि आधुनिक संस्कृत साहित्य की प्रवृत्तियाँ भी आधुनिक युग की ही हैं। अर्वाचीन संस्कृत रचनाकारों की रचनाएँ धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, मानसिक, नैतिक आदि क्षेत्रों में अपना परचम फैला रही हैं। साथ–ही, प्राचीन कथ्य एवं परम्परागत शैली को त्याग कर नवीन युग की नवीन मान्यताओं को अपना वर्ण्य बना रही है। वर्तमान रचनाएँ व्यक्तिगत तथा सामाजिक प्रत्येक आधुनिक समस्याओं को उकेरने में समर्थ हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर काल की कविता में एक नवीन स्तर मुखर हुआ, एक नई चेतना ने जन्म लिया। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ। इस काल खण्ड में काव्य–रचना की एक नई शैली

सामने आई। अनेक नई विधाएँ नये स्वरूप में कवियों के समक्ष उपस्थित हो गई, जो पुरातन से सर्वथा भिन्न थीं। संस्कृत–साहित्य की प्रवृत्तियों में बड़ा परिवर्तन आ गया, कथानकों के विषय बदल गए, विधाएँ बदल गई, कविता के मानक बदल गए, रस–चर्वणा का रूप परिवर्तित हो गया, नवीन छन्दों के प्रयोग होने लगे। यहाँ तक की छन्द मुक्त रचनाओं का भी प्रचलन हो गया। इस युग में गद्य लेखन को बढ़ावा मिला। गद्य लेखन की नई विधाओं जैसे–उपन्यास, कहानी, लघुकथा, स्पशकथा, टुप्कथा आदि में प्रचुर मात्रा में लेखन होने लगा।

2.3.2 आधुनिकता के आधार

1. युगीन आधुनिकता
2. काव्यशास्त्रीय मानदण्ड
3. शिल्प

1. **युगीन आधुनिकता**– ऐसे कवि जिनका कवित्व संसार संस्कृत के पुनर्जागरण काल के बाद निर्मित हुआ, परन्तु वे परम्परा के पोषक रहे, उनके काव्यों को युगीन आधुनिक काव्य माना गया जो केवल युगे के आधार पर आधुनिक हैं। जैसे म0म0 मथुरानाथ दीक्षित, म0म0 भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, पण्डिता क्षमाराव, पं.0 अबिकादत्त व्यास, पं0 उमापति द्विवेदी आदि।

2. **काव्यशास्त्रीय मानदण्ड–** आधुनिक काव्यों के संदर्भ में प्राचीन काव्य के लक्षण अप्रासंगिक हो गए हैं। संस्कृत नवलेखन काव्यशास्त्रीय मानदण्डों का उल्लंघन करता हुआ सा प्रतीत होता है। संस्कृत में काव्य, पौराणिक कथाएँ, स्तोत्र, भक्ति साहित्य, गीतिकाव्य, एकांकी, रेडियो रुपक हो रही रचनाओं का काव्यशास्त्रीय मानदण्ड पर कस कर उनके काव्यत्व–अकाव्यत्व का विचार करना संभव ही नहीं है। प्राचीनकाल में जहाँ महाकाव्य का नायक कोई देवता या क्षत्रिय नरेश होता था वहीं आधुनिकता के इस

वर्तमान युग में प्राचीन काल की रचनाओं के धीरोदात्त, धीरोद्वत नायक का स्थान अब नित्यप्रति की जिन्दगी जीने वाले एक साधारण नायक ने ले लिया है।

3. **शिल्प–** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र की विचारधारा, चिंतन सामाजिक परिवेश आदि में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। अनेक नई समस्याओं ने समाज को प्रभावित किया जैसे दलितों का उद्धार, विधवा विवाह, सती प्रथा, शिक्षा, दहेज प्रथा, साम्प्रदायिक विवाद, राष्ट्रीय चेतना आदि। इन सभी कुरीतियों की ओर तत्कालीन कवियों का भी ध्यान आकृष्ट हुआ और उन्होंने अपना काव्य बनाया तथा जीवन की विसंगतियों एवं कुरीतियों पर करारा प्रहार किया। आधुनिक कवियों ने पौराणिक परम्परा से बाहर निकल कर युगधर्मानुरुप चरित्रों में भी परिवर्तन कर उसका नाम नया स्वरुप उपस्थित किया।

आधुनिक कविता में कवि अपने भावों को खुलकर प्रगट कर रहा। प्राचीन काव्य रस और भाव के बन्धनों में जकड़ी थी, परन्तु वर्तमान युग का कवि पूरे मनोयोग से अपने समस्त भावों का वर्णन करता है। रस के प्रति भी कवि शास्त्रीय मानदण्डों से स्वंय को मुक्त कर चुका है।

वर्तमान में काव्य की कई नवीन विद्या प्रचलन में है। छन्दमुक्त काव्यों की गेयता के आधार पर प्रसिद्धि मिली है। प्रो0 राजेन्द्र मिश्र अनेक लोकगीतों (नक्तकम्, सूतगृहगीतम्, प्रचरणम्, उत्थापनम्, कजरी आदि) की रचना संस्कृत में की है। संस्कृत में अनेक पाश्चात्य छन्दों जैसे– तान्का, सानेट आदि को भी स्थान प्राप्त हुआ है।

2.4 अभ्यास–प्रश्न

1. आधुनिक संस्कृत–साहित्य की मूल प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
2. मूल–प्रवृत्तियों के आधार क्या हैं ?
3. 'प्रवृत्ति' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
4. आधुनिकता का आधार क्या है ?

2.5 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, लेखक–प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र

2. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास, लेखक – डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी

इकाई–03 प्रमुख महाकाव्य एवं कवि परिचय–I

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 महाकाव्य का लक्षण

3.3 आधुनिक महाकाव्य

3.4 महाकाव्य का आधुनिक लक्षण

3.4.1 प्रो0 राजेन्द्र मिश्रकृत् महाकाव्य का लक्षण

3.4.2 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत् महाकाव्य का लक्षण

3.5 पंडिता क्षमाराव

3.5.1 कवि परिचय

3.5.2 कर्तृत्व

3.5.2.1 महाकाव्य

3.5.2.2 खण्डकाव्य

3.6 डॉ0 श्रीधरभास्कर वर्णेकर

3.6.1 कवि परिचय

3.6.2 कर्तृत्व

3.6.2.1 महाकाव्य

3.7 डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री

3.7.1 कवि परिचय

3.7.2 कर्तृत्व

3.7.2.1 महाकाव्य

3.7.2.2 खण्डकाव्य

3.8 अभ्यास–प्रश्न

3.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

3.0 प्रस्तावना

इस इकाई के अंतर्गत महाकाव्यों के आधुनिक लक्षण की चर्चा के बाद कतिपय आधुनिक आचार्यों के महाकाव्यों का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे। संस्कृत में महाकाव्य–विधा में लेखन अत्यन्त प्राचीन काल से होता रहा है। शनैः शनैः मूल प्रवृत्तियों में परिवर्तन के साथ महाकाव्यों के लक्षण में भी परिवर्तन हुआ। कुछ आधुनिक कवियों ने महाकाव्य लेखन की आधुनिक विधा में प्राचीन लक्षणों को आधार बनाकर उनमें कुछ शिथिलता के साथ अपने महाकाव्य का प्रणयन किया तो कुछ ने परम्पराओं को तोड़ते हुए सर्वथा आधुनिक लक्षणों को आधार बनाकर महाकाव्यों का प्रणयन किया।

3.1 उद्देश्य

- महाकाव्य का आधुनिक लक्षण जान सकेंगे।
- प्राचीन महाकाव्य तथा आधुनिक महाकाव्यों के मध्य अन्तर समझ सकेंगे।
- कतिपय आधुनिक महाकाव्यों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- कतिपय आधुनिक कवियों का परिचय जान सकेंगे।

3.2 महाकाव्य का लक्षण

संस्कृत काव्य का सर्वप्रथम विवरण आचार्य भरत प्रणीत नाट्यशास्त्र में प्राप्त होता। भरत अपने ग्रन्थ में दो प्रकार – पद्य (निबद्ध) और गद्य (चूर्णबन्ध) की चर्चा करते हैं और अभिनेय काव्य–रूपक के दसों भेदों का लक्षण देते हैं।

परवर्ती आचार्यों ने काव्य की पद्यात्मक एवं गद्यात्मक दोनों विधाओं के अनेक रूपों की विस्तृत व्याख्या की। पद्यकाव्य के अंतर्गत महाकाव्य, खण्डकाव्य, परिकथा की संकल्पना की तथा कथा एवं आख्यायिका का गद्यकाव्य के अंतर्गत विकास हुआ।

नाट्यशास्त्र में दिए गए नाटक के लक्षण से 'तन्नाटकं नाम' को हटा देने पर सम्पूर्ण लक्षण महाकाव्य का ही प्रतीत होता है। आचार्य भामह भी अपने ग्रन्थ 'काव्यालङ्.कार' में महाकाव्य का संक्षिप्त लक्षण देते हुए कहते हैं कि जो बृहत् रचना, सर्गबद्ध हो, महान चरित वर्णन से युक्त हो, सालंकार हो एवं रसाश्रय हो, पंचसंधि से युक्त तथा लोक स्वभावयुक्त हो, महाकाव्य कहलाती है।

लक्ष्य के आधार पर लक्षण की कल्पना के आधार पर वाल्मिकि रामायण तथा कालिदास के महाकाव्यों को दृष्टि में रखकर आलंकारिक आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में महाकाव्यों के लक्षण प्रस्तुत किए। आचार्यों में दण्डी सर्वप्रथम आलंकारिक आचार्य माने जाते हैं। जिन्होंने सबसे पहले महाकाव्य का पूर्ण लक्षण प्रस्तुत किया –

सर्गबन्धों महाकाव्यमुच्यते तस्य लक्षणम्।
आशीर्नमस्क्रियावस्तुनिदेशों वापि तन्मुखम्।।
सर्वत्र भिन्नवृत्तान्तरूपेतं लोकरजनम्।
काव्यं कल्पान्तरस्थामि जायते सद्लङ्.कृति।।

काव्यादर्श 1/14,19

उनके अनुसार महाकाव्य की रचना सर्गो में की जाती है। इस महाकाव्य का नायक कोई देवता या उदात्त गुणों से युक्त कोई धीर कुलीन क्षत्रिय होता है। महाकाव्य में वीर, श्रृंगार अथवा शान्त में से कोई एक रस प्रमुख होता है तथा अन्य रस गौण होते हैं। विषयवस्तु इतिहास प्रसिद्ध कोई घटना अथवा किसी महान व्यक्ति के चरित की गाथा होती है। सर्गो की संख्या आठ से अधिक होती है। छन्द के अनुसार घटनाओं का वर्णन किया जाता है। नायक तथा प्रतिनायक के संघर्ष का मुख्य रूप से वर्णन होता है। महाकाव्य का मुख्य उद्देश्य धर्म और न्याय की विजय तथा अधर्म एवं अन्याय के विनाश का वर्णन होता है।

आचार्य राजशेखर, आचार्य हेमचन्द्र, आचार्य विश्वनाथ आदि आचार्यो ने भी काव्य का वर्गीकरण अपने–अपने ढंग से किया है। साहित्यदर्पणकार काव्य के दो प्रकार–दृश्य एवं श्रव्य मानते हैं। दृश्य काव्य अर्थात् रूपक पुनः दस भेद माने जाते हैं। दण्डी ने गद्य, पद्य के साथ मिश्र काव्य

को भी मान्यता दी। जिसे कालान्तर में चम्पूकाव्य कहा जाने लगा – गद्यं पद्यं च मिश्रं च तत् त्रिधैव व्यवस्थितम् – (काव्यादर्श)। दृश्य काव्य के अनन्तर विश्वनाथ श्रव्य के – पद्य और गद्य दो भेद करते हैं। छन्दोबद्ध पदों वाले बन्ध को ही पद्य कहते हैं। इसके बाद आचार्य गद्य के भेदों का भी निरूपण करते हैं। पद्यकाव्यों में महाकाव्यों का प्रथम स्थान है।

3.3 आधुनिक महाकाव्य

आधुनिक युग में एक ओर तो संस्कृत काव्य प्राचीन रचना परिपाटी का अनुसरण कर रहा है तो दूसरी ओर आधुनिक कवियों की रचनाधर्मिता ने अपने को युगानुरूप साबित करने के लिए उस पारम्परिक सीमा रेखा से इतर अपना स्थान बनाया है। काव्य के प्रतिमान समय के साथ बदलते रहते हैं। बदलती अभिरूचि, बदलते युग और साहित्य के कारण साहित्य में भी परिवर्तन अपेक्षित है। काव्य उदात्त भावानुभूति अथवा रसानुभूति का माध्यम है, इस कारण काव्य में बौद्धिक प्रवृत्ति के साथ–साथ रसात्मक अनुभूति पक्ष भी बना रहता है। परम्परागत नियमों में परिवर्तन होता रहता है, यही उसकी जीवन्तता का प्रतीक है। वस्तुतः आधुनिकता के सम्बन्ध में काल विशेष को निर्णायक तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है तो कभी परिवेश को विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने विचारों के अनुसार महाकाव्य का लक्षण दिया है।

3.4 महाकाव्य का आधुनिक लक्षण

गुरुवर्य प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने अपने ग्रन्थ 'संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक कावयशास्त्र' में आधुनिक दृश्य, श्रव्य एवं मुक्तक काव्य के लक्षणों को विस्तृत रूप से व्याख्यायित किया है। प्रो0 मिश्र कहते हैं कि मुक्तक काव्य का अपने पूर्व के पद्य या पश्चाद् के पद्य से सम्बन्ध नहीं होता है परन्तु प्रबन्धकाव्य का पद्य अपने से पूर्व तथा पश्चात के पद्यों पर आधारित होता है। किसी नायक के सम्पूर्ण जीवन का सर्गात्मक वर्णन ही महाकाव्य होता है तथा जीवन के किसी अंश या किसी घटना विशेष का सर्ग विहीन वर्णन खण्डकाव्य कहलाता है। प्राचीन समय के नायकत्व में विद्यमान देवत्व या नृपत्व के गुण का स्थान जननायकों ने सहजता से ले लिए क्योंकि राजतंत्र का अस्तित्व मिट गया है। अब महाकाव्यों

का प्रणयन नवीन सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप होने लगा था तो लक्षण भी उसी के अनुरूप किया जाने लगा। प्रो0 मिश्र ने अपने आधुनिक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ में महाकाव्य का लक्षण इस प्रकार किया है –

3.4.1 प्रो0 राजेन्द्र मिश्रकृत् महाकाव्य का लक्षण

सर्गबन्धो महाकाव्यं लोकवन्द्यजनाश्रयम्
ख्यापयद्विश्वबन्धुत्वं स्थापयद्विश्वमङ्.लम्।।
नायकस्तत्र देवः स्यात्प्रजाबन्धुरथो नृपः।
चारूचर्योऽथवा कोऽपि सज्जनश्चरितोज्ज्वलः।।
प्रातस्सन्ध्यानिशीथेन्दुभास्करोदयातारकाः।
वनोद्यानदीसिन्धुप्रपाताद्रिबलाहकाः।।
ग्रामाश्रयपुराऽरामदुर्गसैन्यरणोद्यमाः।
पुत्रजन्मादिवृत्तान्ताः पामरावाससङ्.कथाः।।
इतिवृत्तानुरोधात्तु वर्णनीया न चाऽन्यथा।
प्रसह्य वर्णनैस्तेषां न च तृप्तिर्न वा यशः।।
यच्छिवं यच्च सत्यं स्यादथवा लोकमङ्.गलम्।
वर्णनीयं प्रकल्प्यापि कथांशीकृत्य सादरम्।।
सर्गा अष्टाधिकाः सन्तु कथाविस्तृतिसम्मताः।
अष्टत्रिगुणतां यावत्सर्गसंख्या प्रथीयसी।।
नोद्वेगः कविना कार्यः पाठकानां रसात्मनाम्।
सर्गसंख्यादिविस्तारैर्वर्णनैर्वाऽनपेक्षितैः।।
लोकवृत्तं न हातव्यं मूलवृत्तोपकारकम्।
लोकचित्रणगर्भं हि महाकाव्यं महीयते।।
त्रयाणां पुरूषार्थानां कश्चिदेको भवेद्ध्रुवम्।
महाकाव्यफलं रम्यं धर्मकामार्थसम्मतम्।।
श्रृङ्.गारवीरशान्तानां कश्चिदन्यतमो रसः।

सयत्नमङ्.गीकर्त्तव्यः कविना प्रतिभावता।।
छन्दोऽलङ्.कारसंदर्भा भूरिवैविध्यमण्डिताः।
महाकाव्ये प्रयोक्तव्या भावुकानां प्रतुष्टये।।
लोकोत्तरगुणादर्शः पुरूषो नायको भवेत्।
महीयसी पुरन्ध्री वा नाऽत्र कार्या विचारणा।।
कथावैशिष्ट्यमालक्ष्य समज्ञां नायकस्य वा।
करणीयं महाकाव्यस्याभिधानं यशस्करम्।।
प्रतिष्ठापयितुं नूत्नं महाकाव्ये स्वयं कविः।
आचार्यप्रतिभो नूनं यदि वा भवति क्षमः।।

—अभिराजयशो. (निर्मित्यु.)

प्रो0 मिश्र के लक्षण के अनुसार महाकाव्य ''लोकबन्ध नायक पर आश्रित, विश्वबधुन्त्व को प्रख्यायित करने वाला तथा विश्वमंगल की स्थापना करने वाला सर्गबन्ध (प्रबन्ध काव्य) महाकाव्य होता है।'' उनके अनुसार महाकाव्य का नायक कोई देवता या प्रजावत्सल नृप या उत्तम चरित्र वाला कोई सौम्य सत्पुरूष हो सकता है। महाकाव्य अष्टसर्गात्मक, प्रकृतिवर्णन, सामाजिक परिवेश एवं लोकमंगलकारी घटनाओं के वर्णन से युक्त, धर्म, अर्थ, काम इन पुरूषार्थों में से एक का पोषक और रसयुक्त तथा अंलड्.कार छन्द आदि से मण्डित काव्य रचना ही महाकाव्य होती है। महाकाव्य में न्यूनतम आठ सर्ग तथा अधिकतम चौबीस सर्ग होने चाहिए, ऐसा मिश्र जी का मानना है। उनके अनुसार लोकवंदित नायक पर आश्रित, विश्वबन्धुत्व को फैलाने वाला तथा विश्वमंगल की कामना करने वाला सर्गबद्ध काव्य महाकाव्य होता है। महाकाव्य का नायक कोई देव, नृप या सदाचरण करने वाला कोई भी सज्जन पुरूष हो सकता है। महाकाव्य में प्रकृति वर्णन, ग्रामीण समाज, आश्रम, दुर्ग, सैन्य, रण, पुत्रादि जन्मोत्सव, झुग्गी—झोपड़ियों आदि का वर्णन वृतान्तानुसार किया जाना चाहिए। कल्याणकारी, मंगलकारी घटनाओं में ही काल्पनिक वर्णन मिलाकर मूलकथा का निर्माण करना चाहिए। आधुनिक महाकाव्यों का नायक कोई महिला भी हो सकती है। स्त्री—पुरूष के संबंध में विचार

नहीं किया जाना चाहिए। कथा की विशेषतानुसार नायक की कीर्ति को ध्यान में रखकर ही महाकाव्य का कोई नाम रखना चाहिए।

3.4.2 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत् महाकाव्य का लक्षण

प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने अपने अर्वाचीन काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'अभिनवकाव्यालङ्.कारसूत्रम्' में काव्य के दो भेद पाठ्य और दृश्य– **'द्विविधं तत्– पाठ्य दृश्यं च'** किये हैं। प्रो0 त्रिपाठी द्वारा 'पाठ्य' नामक काव्यविधा को प्राचीन आचार्यों ने श्रव्यकाव्य कहा है। प्रो0 त्रिपाठी का मानना है कि श्रवण का वैसा प्रचलन आधुनिक काल में नहीं है। अतः 'पाठ्य' संज्ञा ही उचित है।

रंगमंच पर प्रदर्शित किये जाने वाले काव्य को वे दृश्य काव्य की श्रेणी में रखते हैं। उनका मानना है कि दृश्य में भी पाठांश होता है जिसका अभिनय नहीं होने पर पाठक उसे पढ़ता है। परन्तु अभिनेयार्थ रचना होने के कारण उसे दृश्य काव्य ही कहा जाना चाहिए।

प्रो0 त्रिपाठी काव्यविधा के कई आधार पर कई आधार पर काव्य का विभाग कहते हैं –

1. भाषा के आधार पर – संस्कृत महाकाव्य, अंग्रेजी नाटक आते हैं।
2. अर्थचमत्कृति के आधार पर – उत्तमोत्तम, उत्तम, मध्यम विभाग होते हैं।
3. कविदृष्टि के आधार पर – विषय प्रधान तथा विषयि प्रधान।
4. बन्ध के आधार पर – निबाद् और अनिबद्ध।
5. रीति के आधार पर – श्रव्य के तीन भेद – गद्य, पद्य और चम्पू।
6. इन्द्रियों के आधार पर – दृश्य और श्रव्य विभाग होते हैं।

बन्ध के आधार पर उन्होंने दृश्य और श्रव्यात्मक काव्य को दो प्रकार का माना है – निबद्ध और अनिबद्ध – **'बन्धदृष्ट्या उभयविधमपि काव्यं दृश्यश्रव्यात्मकं तावद् द्विविधम् निबद्धमनिबद्धं च। निबद्धं प्रबन्धकाव्यं मुक्तम्, गीतम्, गजलगीतिर्वेत्यादिकम्' – (अभिनवकाव्यालङ्.कार सूत्रे**

काव्यविशेषविमर्शः)। प्रबन्ध या महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक आदि निबद्ध कोटि में आते हैं। मुक्तक, गीत–गजल आदि को उन्होंने अनिबद्ध काव्य की श्रेणी में रखा है।

इस विभाग विमर्श के बाद आचार्य महाकाव्य का लक्षण देते हैं – **'पद्यात्मकं समग्रजीवन निरूपणपरं महाकाव्यम्। गीतैतिह्यपुराणलोककथाभेदादस्यनानात्वम्।' (अभिनवकाव्यालङ्.ारसूत्र – 3/1/3)**

प्रो0 त्रिपाठी ने पद्यात्मक शैली में लिखे गए और समग्रजीवन का वर्णन करने वाले काव्य को महाकाव्य माना है। गीता, ऐतिह्य, पुराण, लोककथा आदि के लक्षणों के अनुसार उन्होंने महाकाव्य के विभाग किये हैं। प्रो0 त्रिपाठी ने महाकाव्य को कवित्व की पराकाष्ठा माना है। उनका मानना है कि उसमें जीवन का समग्र वर्णित होना चाहिए।

डॉ0 रेवाप्रसाद द्विवेदी, डॉ0 शिवजी उपाध्याय, डॉ0 रहस बिहारी द्विवेदी, डॉ0 हर्ष देव माधव आदि आचार्यों ने भी काव्याशास्त्रीय ग्रन्थों का प्रणयन किया है। इन ग्रन्थों के अध्ययन द्वारा अधिक व्यापक दृष्टि प्राप्त होगी। परन्तु पाठ्यक्रम के अत्यधिक विस्तार के कारण यहाँ इन सभी के लक्षणों की यहाँ चर्चा नहीं की जा रही है।

3.5 पंडिता क्षमाराव

3.5.1 कवि परिचय

पंडिता क्षमाराव का जन्म महाराष्ट्र के सीमान्त जनपद वाडी के बाम्बोली नाम गाँव में 4 जुलाई, 1890 ई0 को हुआ था। इनके पिता विशिष्ट विद्वान श्री शंकरपाण्डुरङ्.ग पंडित थे। इनकी माता का नाम उषा था। मात्र तीन वर्ष की आयु में ही पिता के सान्निध्य से विमुख हो गई। आपका शैशवकाल माता–पिता के स्नेह से विहीन था। सौभाग्यवश आपका विवाह मुम्बई के डॉ0 राघवेन्द्रराव के साथ हुआ जो उस समय के एम0डी0 डॉक्टर थे। आपने अपने पति के साथ कई वर्षों तक विदेश में रहते हुए फ्रेंच और जर्मन भाषा सीखा तथा अंग्रेजी में अनेक कविताएं लिखीं। परन्तु 1931 ई0 के बाद आपने अपने काव्य का माध्यम संस्कृत को बनाया।

आपकी स्कूली शिक्षा मैट्रिक तक ही हो पाई थी। किन्तु आपका वैदुष्य अनुपम था। 1938 ई0 में अयोध्या की संस्कृत कल्याण संस्था द्वारा संस्कृत के क्षेत्र में आपकी असाधारण रचनाधर्मिता के लिए आपको 'पंडिता' की उपाधि से अलङ्.कृत किया गया तथा 1942 ई0 में 'साहित्य चन्द्रिका' की उपाधि से विभूषित किया गया। पंडिता क्षमाराव में स्वदेश प्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी थी। उन्होंने गाँधी जी से स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने की अनुमति माँगी किन्तु स्वास्थ्य अनुकूल न होने के कारण गाँधी जी उन्हें अनुमति नहीं प्रदान की। फलस्वरूप उन्होंने सम्पूर्ण जीवन साबरमती आश्रम में निवास किया और अपने लेखन से देश की सेवा की। इनकी अनेक प्रकाशित रचनाएँ – महाकाव्य, खण्डकाव्य, लघुकथाएँ, जीवनवृत्त आदि हैं। पं0 क्षमाराव संस्कृत जगत् की प्रतिष्ठित कवियित्री हैं। उनका अदम्य साहस ही उन्हें झांसी की रानी लक्ष्मीबाई तथा दक्षिण की चेन्नम्मा (किन्नूर) की भांति उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में खींच लाया। बाद में अनेक महिलाओं ने स्वतंत्रता–संग्राम में हिस्सा लिया किन्तु वैदुष्य की दृष्टि से क्षमाराव इन सभी से ऊपर हैं।

3.5.2 कर्तृत्व

क्षमाराव ने स्वतंत्रता संग्राम के महानायक महात्मा गाँधी के जीवन और उनके दर्शन को केन्द्र में रखकर 'सत्याग्रहीता' नामक महाकाव्य की रचना की जो 1932 में प्रकाशित हुई। 'स्वराज्यविजय' नामक महाकाव्य 1962 में प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपनी लेखनी भारतीय सन्तों के जीवन पर भी उठाई। 'तुकारामचरितम्' महाकाव्य 1950 ई0 में प्रकाशित हुआ। इसमें 09 सर्गो और 435 श्लोकों के माध्यम से महाराष्ट्र के भक्त संत तुकारामजी का सम्पूर्ण जीवन चरित वर्णित है।

3.5.2.1 महाकाव्य

<u>सत्यग्रहगीता</u>

इस महाकाव्य में पंडिता क्षमाराव ने महात्मा गॉधी जी के जीवन एवं दर्शन से प्रभावित होकर उसे ही अपना वर्ण्य बनाया। इस महाकाव्य को उन्होंने तीन भागों में लिखा है। प्रथम भाग–सत्यग्रहीता का प्रकाशन 1932 ई0 में हुआ। इस महाकाव्य का आधार श्रीमद्भगवद्गीता

है। इस भाग में उन्होंने 1931 ई0 से लेकर गॉधी इरविन पैक्ट तक की घटनाओं का 18 अध्यायों, 659 पद्यों में समग्रता से वर्णन किया है। पं. क्षमाराव ने सत्याग्रहगीता स्वतंत्रतासंग्राम के चरम उत्कर्ष काल में लिखी थी; अतः इस महाकाव्य का प्रथम प्रकाशन पेरिस से 1932 में हुआ। इस महाकाव्य का दूसरा संस्करण 1956 में बम्बई से प्रकाशित हुआ। द्वितीय भाग–उत्तरसत्याग्रहीयता में 1931 से 1944 तक (स्वतंत्रता से पूर्व तक का) वर्णन है। इसका प्रकाशन 1948 ई0 में हुआ यह काव्य स्वतंत्रता से पूर्व लिखा गया था। तृतीय अन्तिम भाग में 'स्वराज्यविजय' में भारत की स्वतंत्रता की घटनाओं का मनोरम चित्रण किया है। सम्पूर्ण महाकाव्य में अनुष्टुप छन्द का ही प्रयोग है, मात्र एक पद्य मालिनी छन्द में है। यत्र–तत्र प्रकृति वर्णन भी किया गया है। घटना प्रधान काव्य होने पर भी अलङ्कारों का वैविध्य दिखाई देता है। गीता के स्थित–प्रज्ञ के लक्षण के आधार पर क्षमाराव जी ने महात्मा गॉधी के उत्तम चरित्र को इस प्रकार पद्यबद्ध किया है –

वीतरागो जितक्रोधः सत्याहिंसाव्रतो मुनिः।
स्थितधीर्नित्यसत्त्वस्थो महात्मा सोऽभिधीयते।। (1/9)

सत्याग्रह को सर्वश्रेष्ठ बल बताते हुए लिखती हैं–

दुर्बला ननु गण्यन्ते शान्तिमार्गावलम्बिनः।
परं सत्याग्रहाद् विद्धि नास्ति तीव्रतरं बलम्।। (10/35)

अर्थात् शान्तिमार्ग का अवलम्बन करने वाले लोग दुर्बल ही गिने जाते हैं, लेकिन सत्याग्रह से बढ़कर कोई बल नहीं है, ऐसा जानो।

सत्याग्रहीता के चतुर्थ अध्याय में पंडिता क्षमाराव ने नवव्रतों का उल्लेख किया है जो भारतवर्ष के उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त करेंगे–

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्याऽपरिग्रहौ,
स्वदेशवस्तुनिष्ठा च निभीतीरुचिसंयमः।
अन्त्यजानां समुद्धारो जवैतानि व्रतानि हि,

भारतोतकर्षसिद्धध्यर्थमाश्रमस्य महात्मनः ।। (4 / 3–4)

क्षमाराव की लेखनी प्रवाहमयी होने के साथ ही प्रसादगुण से संयुक्त है। उनके महाकाव्य न केवल वर्ण्य विषय से आधुनिक है, बल्कि उनकी दृष्टि भी प्रगतिशील है। महात्मा गॉधी की अनुयायी होने का स्पष्ट प्रभाव उनकी लेखनी में दिखाई देता है। उन्होंने जाति या जीविका के स्थान पर शील को सुजात मनुष्य का चिह्न माना–

भेदः कृतो मनुष्येण न धात्रा समदर्शिना।
शीलं चिह्नं सुजातस्य न जातिर्न च जीविका।।

श्रीरामदासचरितम्

'श्रीरामदासचरितम्' महाकाव्य का प्रकाशन 1954 ई0 में हुआ। इस महाकाव्य में 13 सर्ग हैं। इस महाकाव्य में शिवाजी के गुरू श्रीरामदास जी का चरित वर्णित है। किस प्रकार महान संत श्रीरामदास जी ने अपने शिष्य क्षत्रपति शिवाजी को देश रक्षा के लिए उद्धत किया और अपने आशीर्वाद से उन्हें कैसे सम्बल प्रदान किया आदि घटनाओं और भारत के अनेक पवित्र स्थानों का वर्णन इसमें किया गया है।

श्रीज्ञानेश्वरचरितम्

'श्रीज्ञानेश्वरचरितम्' महाकाव्य का प्रकाशन 1954 ई0 में हुआ। इस महाकाव्य में 8 सर्ग तथा 406 श्लोक हैं। इस महाकाव्य में गीता पर 'ज्ञानेश्वरी' टीका लिखने वाले महान संत ज्ञानेश्वर जी का चरित वर्णन है। संत ज्ञानेश्वर को अनेक सामाजिक अत्याचारों से जूझना पड़ा था परन्तु उन्होंने मानवमात्र के प्रति करुणा की भावना का त्याग नहीं किया। इस महाकाव्य में कवयित्री क्षमाराव ने मनुष्य को विलासितापूर्ण जीवन का त्याग कर अध्यात्म मार्ग पर चलने का संदेश दिया है।

शङ्करजीवनाख्याम्

'शङ्करजीवनाख्याम्' महाकाव्य में 17 उल्लास और 840 श्लोक हैं। इस महाकाव्य का प्रकाशन 1939 ई0 में मुम्बई से हुआ। इस महाकाव्य को क्षमाराव ने अपने विद्वान पिता शंङ्करपाण्डुरंग के जीवन को आधार बनाकर लिखा है। शंकरपाण्डुरंग ने मानव समाज को राष्ट्रीय भावना, राष्ट्रप्रेम की ओर प्रवृत्त किया और वेदों के अध्ययन अध्यापन की ओर भी प्रेरित किया। पुत्री क्षमा को उन्होंने जो उपदेश किया, उसे ही क्षमाराव ने इस महाकाव्य का आधार बनाया। जैसे–

यदि त्वां सज्जनः कोऽपि सौजन्याद् भोजयेत् क्षमे।
तदाऽस्मै द्विगुणैः दद्याः काले प्रत्युतपकारिणी।।

इस महाकाव्य की रचना अनुष्टुप छन्द में की है। ये तीनों महाकाव्य स्वंय उनके द्वारा किये हुए अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रकाशित हुए हैं।

3.5.2.2 खण्डकाव्य

<u>मीरालहरी</u>

'मीरालहरी' पंडिता क्षमाराव का खण्डकाव्य है। इसका प्रकाशन 1944 ई0 में हुआ। पूर्व खण्ड 91 श्लोकों तथा उत्तरखण्ड 44 श्लोकों में निबद्ध है। इस खण्डकाव्य की रचना शार्दूलविक्रीडित छन्द में हुई है तथा इसमें कवियित्री का जीवन ही मीरा के जीवन के रूप प्रतिबिम्ति है।

<u>कथापञ्चकम्</u>

इनके अतिरिक्त क्षमाराव ने 'कथापंचकम्' नामक पद्यात्मक कथासंग्रह की भी रचना की है। इस कथासंग्रह में– बालिकोद्वाहसङ्कटम्, गिरिजायाः प्रतिज्ञा, हरिसिहः, दन्तकेयूरम् तथा असूयिनी नामक कथाएँ संकलित हैं। इसका प्रकाशन 1934 ई0 में हुआ।

<u>ग्रामज्योतिः</u>

'ग्रामज्योतिः' नामक पद्यात्मक कथासंग्रह का प्रकाशन 1935 ई0 में हुआ। इसमें 'रेवा की कथा', 'कटुविपाक कथा' तथा वीरभा नामक कथाओं का संकलन है।

<u>विचित्रपरिषद्यात्रा</u>

'विचित्रपरिषद्यात्रा' में अनुष्टुप छन्द में रचे गए 105 पद्यों में कवियत्री ने त्रिवेद्रम में 1932 में सम्पन्न प्राच्य भाषा सम्मेलन के अनुभवों का वर्णन किया है।

इसके अतिरिक्त क्षमाराव जी ने सात एकांकी नाटक, तीन अंको वाले चार नाटक, 35 लधुकथाएँ (अप्रकाशित) और अनेक निबन्ध, यात्रा–विवरण, पत्र–साहित्य आदि लिखे हैं।

3.6 डॉ0 श्रीधरभास्कर वर्णेकर

3.6.1 कवि परिचय

श्रीधरभास्कर वर्णेकर का जन्म महाराष्ट्र के नागपुर में सन् 1918 में 31 जुलाई को एक संस्कृत निष्ठ ब्राह्म्ण परिवार में हुआ। आपकी सम्पूर्ण शिक्षा नागपुर में ही हुई। एम0ए0, पी0एचडी0, डी0लिट् आदि उपाधियाँ आपने नागपुर विश्वविद्यालय से प्राप्त कीं। आपने इसी विश्वविद्यालयय से अध्यापन कार्य करते हुए आचार्य पद को अलंकृत किया। 1980 ई0 में आप सेवानिवृत्त हुए। प्रारंभ से ही आपकी रुचि संस्कृत साहित्य, व्याकरण और वेदान्त में रही। डॉ0 वर्णेकर ने संस्कृत की अनेक विधाओं में लेखन किया। डॉ0 वर्णेकर ने मराठी भाषा में अपना शोध प्रबन्ध 'अर्वाचीन संस्कृत साहित्य' लिखा। इसके साथ ही आपने 'संस्कृत भक्तिव्यम्' नामक पत्रिका का सम्पादन भी किया। इन्हें कांचीपीठ के शङ्कराचार्य ने 'प्रज्ञाभारती' की उपाधि से विभूषित किया। 1993 में इनके साहित्य का संकलन 'प्रज्ञाभारतीयम्' नाम से प्रकाशित हुआ। आपको 'रामकृष्ण डालमिया श्रीवाणी सम्मान' भी प्राप्त हुआ है।

3.6.2 कर्तृत्व

डॉ0 वर्णेकर ने संस्कृत की कई विधाओं में अपना लेखन किया। महाकाव्य, नाटक के साथ–साथ आपने कई शतक काव्यों का भी प्रणयन किया है। पत्र–पत्रिकाओं में आपके लिखे

200 से भी अधिक निबन्धों का प्रकाशन हो चुका है। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं– 1. मन्दोर्मिमाला (स्फुटकाव्य चतुःशती) 2. महाभारत कथाः 3. भारतरत्नशतकम् 4. स्वातन्त्र्यवीरशतकम् 5. कालिदासरहस्यम् (शतकम्) 6. रामकृष्णपरमहंसीयम (शतकम्) 7. वात्सल्यरसायनम् (शतकम्) 8. आर्वाचीन संस्कृत साहित्य (डी0लिट्0 प्रबन्ध) 9. अभंगधर्मपद (धम्मपदस्य मराठी पद्यात्मक विवरणम्) 10.शिवराज्योदयम् महाकाव्यम् 11. विवेकान्दविजयम् महानाटकम। इसके अतिरिक्त इनकी दो रचनाएँ अप्रकाशित हैं– 1. परोक्षपाणिनीयम (हिन्दी प्रबन्ध) तथा 2. शिवराज्याभिषेक (नाटकम्)।

3.6.2.1 महाकाव्य

<u>शिवराज्योदम् महाकाव्य</u>

छत्रपति शिवाजी के जीवन, उनके गौरवमय चरित पर आधारित 'शिवराज्योदयम्' महाकाव्य बीसवीं शतीं के महाकाव्यों के मध्य अपना उत्कृष्ट स्थान रखता है। आकार की दृष्टि से यह एक बृहदाकार महाकाव्य है। यह 68 सर्गो में उपनिबद्ध यह महाकाव्य 1972 ई0 में पूना के शारदा गौरव ग्रन्थमाला से प्रकाशित हुआ। इस महाकाव्य के प्रणयन के लिए डॉ0 वर्णेकर को 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' (नई दिल्ली) प्राप्त हुआ। काव्य–सौष्ठव से युक्त यह महाकाव्य प्रारंभ से अंत तक शिवाजी के यशोगान के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के भावों को व्यक्त करता है। यह काव्य महाकाव्य के राष्ट्रीय लक्षणों पर खरा उतरता है। 4 हजार श्लोकों में कवि ने स्वंय के अंतर्मन में निहित उस महान चरित्र के प्रति अपनी अतिशय श्रद्धा की भावाभिव्यक्ति दी है। यह महाकाव्य ऐतिहासिक शैली का काव्य है। डॉ0 वर्णेकर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है– 'पुण्यश्लोक छत्रपति शिवाजी महाराज के वीररसोज्जवलात्मक चरित्र पर आधारित महाकाव्य लिखने की प्रेरणा किसी अतर्क्य हेतु से ही उनके हृदय में समुद्भूत हुई थी। गच्छताकालेन वह वल्लरी उनके पावन चरित्र का बारंबार श्रवण, मनन और वाचन से प्रस्तुत महाकाव्य के रुप में आज वृद्धिगत होकर सहृदयों के सम्मुख वीररसोद्रेक कर रही है।

इस महाकाव्य में कवि ने शिवाजी के जीवन की घटनाओं को ऐतिहासिक क्रम में पिरोया है। इसके साथ ही वस्तु विन्यास, रस, काव्यशास्त्रोचित नाट्य संधियों का भी ध्यान

रखा है। इस बृहदाकार महाकाव्य की कथा के वर्णन में पात्रों की संख्या अधिक है परन्तु नायक सिर्फ शिवाजी ही हैं। कवि ने किसी भी काल्पनिक पात्र को नहीं रखा है। धीरोदात्त नायक के रुप में शिवाजी के अनेक वीरोचित उदात्त गुणों के वर्णन से यह महाकाव्य अत्यधिक समृद्ध है– 'स्वधर्मसाम्राज्यसंस्थापनम्दृढ़व्रतम्'– (16.38)।, 'आ बाल्यतो वीररसैकसक्तः' (5.19)।, 'गोरक्षणार्थ घृतबालरुपः कृष्ण स्वयं भूमितलेऽवतीर्णः' (7.52)।, एक स्थान पर कवि ने अफजल खाँ के मुख से शिवाजी के शारीरिक सौष्ठव की प्रशंसा करवाई है– 'आजानुबाहुं ककुदुन्नतासं प्रसन्नशार्दुलविशालनेत्रम्'– (29.3)। शिवाजी के अनेक गुणों का वर्णन वर्णेकर जी ने अपने महाकव्य में किया है। शिवाजी के लिए उन्होंने अनेक विशेषणों का प्रयोग किया है। जैसे– मेरुस्थिरान्तःकरणः, निसर्गधीरः, प्रकृतिधीरः, धीरधुरंधरः, निश्चलधैर्यशाली, कर्त्तव्यनैष्ठिकः, अन्यायनिराकरिष्णुः, स्वजनैक्यप्रियः, वदान्यशिरोमणिः, गूढ़रन्ध्रोरिपुरन्ध्रदर्शी, नीतिमर्मज्ञः आदि।

महाकाव्य का प्रारम्भ सह्याद्रि के वर्णन से होता है। अष्टसिद्धि सम्पन्न विनायक, दक्षिणाभिमुख हनुमान, भगवान पाण्डुरङ्ग, संत ज्ञानेश्वर, तुकाराम और रामदास आदि के वर्णन के साथ अटवी वर्णन है। डॉ0 वर्णेकर ने वर्ण्य विषय के अनुरुप ही घटनाओं के वर्णन को संकोच या विस्तार दिया है। जीजाबाई–शाहजी का विवाह, माता जीजा द्वारा बालक शिवाजी को उपदेशित करना, उनमें संस्कारो का बीजारोपण करना, बिजापुर यात्रा, गोद्यातक का हस्च्छेद वर्णन, रोहितेश्वर मंदिर में प्रतिज्ञावर्णन, शाहजी ही का कारावास वर्णन तथा उससे मुक्ति का वर्णन, अफजल खाँ का वध आदि घटनाओं का अत्यंत कमनीयता से वर्णन किया है।

यह ओज प्रधान महाकाव्य वैदर्भी शैली में है। अलंकार का प्रयोग काव्यसौन्दर्य को लालित्य प्रदान कर रहा है। मुख्य रस वीर तथा गौण रस के रुप में श्रृंगार के स्थान पर 'राष्ट्रभक्ति रस' की धारा सम्पूर्ण काव्य में प्रवाहित है। सरस और उपदेशात्मक सुक्तियों से भरा हुआ यह महाकाव्य सदाचार और नीति की शिक्षा देता है। उदाहरणस्वरुप– 'अप्रणम्य न गन्तव्यं दैवतं पुरतः स्थितम् 'गुरोराज्ञा गरीयसी', 'कं दुनोति न सुतो विरोधकः', निजसदनमुपेतुं कस्य नात्राभिलाषः', सुपुत्रो मातृदैवतः' आदि।

डॉ0 वर्णेकर ने शब्दों के प्रयोग में बहुत सावधानी रखते हैं तथा उन्होंने शब्दों के चमत्कार एवं क्लिष्ट दुरुह प्रयोगों से सदैव दूरी बनाई है। अनेक असंस्कृत शब्दों का भी प्रयोग दिखाई देता है। कई नूतन शब्दों का भी प्रयोग किया है। इस महाकव्य में अनुष्टुप, उपजाति छन्दों के अतिरिक्त वियोगिनी, शार्दूलविक्रीडित आदि छन्दों का प्रयोग किया है। कवि की भाषा प्रसाद गुण से युक्त है तथा उपमादि के प्रयोगों में कुशल है।

3.7 डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री

3.7.1 कवि परिचय

डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री का जन्म 1930 में लाहौर जो वर्तमान में पाकिस्तान में है, में हुआ था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आपने अम्बाला और जालंधर में अपने पिता के संरक्षण में अध्ययन किया। डॉ0 शास्त्री के पिता चारुदेव शास्त्री पाणिनी व्याकरण के क्षेत्र में मूर्धन्य विद्वान थे। विशेष अध्ययन शोधकार्य आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से किया। आप संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी तीनों भाषाओं पर अधिकार रखते हैं। 1959 में आपने दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में अध्यापन करना प्रारंभ किया। बाद में आचार्य पद से आपने अवकाश प्राप्त किया। आपको 'श्रीगुरुगोविन्द सिंह चरित' (खण्डकाव्य) नामक रचना के लिए 1968 में 'साहित्य अकादमी पुरुस्कार' प्राप्त हुआ। 'श्रीगुरुगोविन्द सिंह चरित' का प्रकाशन 1967 में हुआ।

3.7.2 कर्तृत्व

डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री प्रणीत तीन महाकाव्य उपलब्ध हैं। 1. श्रीबोधसत्त्वचरित 2. इन्दिरागॉधीचरितम् 3. श्रीरामकीर्तिमहाकाव्य। श्रीगुरुगोविन्दसिह चरितम् (खण्डकाव्य), द रामायण ए लिंग्विस्टिक स्टडी (अंग्रेजी भाषा में लिखा शोध परक ग्रंथ), एसेज ऑन इण्डोलॉजी, वैदिक व्याकरण (आर्थर एन्थोनीमेकडानल विरचित 'ए वैदिक ग्रामर फॉर स्टूडेन्ट' नामक ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद), षड्ऋतु वर्णन (खण्डकाव्य), बृह्त्तर भारतम् (शतक काव्य), शमर्ण्यदेश

सुतरां विभाति (यात्रा विवरणात्मकं खण्डकाव्य) तथा शोधपरक लेख और निबन्धादि आपकी रचनाएँ हैं।

3.7.2.1 महाकाव्य

श्रीबोधिसत्त्वचरित

इस महाकाव्य में चौदह सर्गो में बुद्ध के बोधिसत्व बनने तक की घटनाओं तथा कथाओं का वर्णन है। इस महाकाव्य का कथानक पालि साहित्य और संस्कृत साहित्य में प्राप्त होने वाली जातक कथाओं पर आधारित है। इस महाकाव्य में बुद्धत्व प्राप्ति से पूर्व, बुद्ध के पूर्वजों की कथाएँ वर्णित हैं। बोधिसत्व अनेक जन्मों में उद्दात्त कर्म करता है और अंत में बुद्धत्व को प्राप्त होता है। इस महाकाव्य में दूसरे से पॉचवें सर्ग तक बोधिसत्व के राजा के रुप में, दो सर्ग पहले और तेरहवें सर्ग में वर्णिक् के रुप में, छठें, बारहवें तथा चौदहवें सर्ग में क्रमशः भिक्षुक, कृषक और शिक्षक के रुप में चित्रित किया गया है। इन सभी रुपों के माध्यम से कवि ने बौद्ध धर्म के कुछ आदर्शों को भी समाज के समक्ष रखा है। इन कथाओं के माध्यम से बोधिसत्व के प्रत्येक जन्म के उद्दात्त कार्यों का वर्णन किया है। सभी कथाओं में बोधिसत्व का चरित्र प्रतिष्ठित होता है और अपने लक्ष्य–बुद्धत्व की प्राप्ति की ओर बढ़ता है। अनेक जन्मों की कथाओं में भिन्न–भिन्न वृत्तियों में संलग्न बोधिसत्व नायक के रुप में बौद्धधर्म के अष्टाङ्गमार्ग का अनुसरण करता है।

इस प्रकार बोधिसत्त्वचरित महाकाव्य वृत्त प्रधान धार्मिक काव्य है। इस महाकाव्य में भिन्न–भिन्न भूमिकाओं के पात्र बौद्ध सिद्धान्त में अनुस्युत दिखाई देते हैं। इसका नायक या तो प्रारंभ से बौद्ध धर्म का अनुयायी होता है या फिर इसके महत्व को जानकर बाद में स्वीकार कर लेता है। इस काव्य में कवि ने पात्रों का चरित्र उपस्थित करने की दो विधि अपनायी है। प्रथम–पात्रों के गुणों को कवि के मुख से शब्दतः कहलवाया है और द्वितीय–पात्रों के कार्यव्यापार द्वारा उनके व्यक्तित्व अथवा स्वभाव को बताया गया है। इस महाकाव्य में बोधिसत्व का चरित ही मुख्यतः प्रतिपादित है।

कवि का भाषा पर असाधारण अधिकार इस महाकाव्य में दिखाई पड़ता है। इस काव्य में कहीं–कहीं वर्णिक छन्द भी हिन्दी मात्रिक–छन्द के समान अन्त्यानुप्रास से समन्वित है। प्रत्येक सर्ग में कवि ने मानव–मूल्यों की स्थापना की है। यमक अंलकार का प्रयोग शास्त्रीय नियमों के आधार पर किया है। सम्पूर्ण महाकाव्य में प्रेरणादायक सूक्तियाँ हैं। जैसे–

हिंसैव वर्धते बहवी हिंसक प्रति हिंसया।

सुखमात्यन्तिक लब्धुमहिंसैव गरीयसी।।

(श्रीबोधि0 3/80)

आपातरम्या विषया स्फुरन्त समन्ततोऽन्ते परितापयन्ति।

न बुद्धिमॉस्तेष्वधिकं रमेत सुदुस्त्यजांस्तान् न च रोचयेत।।

स्वप्नोपमाः सन्ति घनान्धाकाराः कामादयोऽनिष्टकरा विकारा।

(श्रीबोधि0 6/27–29)

सम्पूर्ण काव्य में जीवन की निःसारता और क्षणभंगुरता, जीवन के दुःखों का निरुपण, उनसे मुक्ति पाने की प्रेरणा दी गई है–

ध्येयं समस्तजगत क्षणभंगुरत्वं

दुखास्पदत्वमरसत्वमसुस्थिरत्वम्।

प्रेयो विहाय परमार्थरताः प्रकामं

श्रेयस्करं कुरुत कर्म गुणाभिरामम्।।

(श्रीबोधिसत्व0 12/13)

डॉ. शास्त्री के कथानक के विकास क्रम को दर्शाते हुए अनेक पात्रों के चरित्रों के क्रमिक विकास का बहुत सुन्दर ढंग से चित्रण किया है। श्रृंगार का भी अद्भुत वर्णन इस महाकाव्य में किया गया है–

अनङ्गरङ्गस्थलमन्तरङ्गं तरङ्गयन्ती कुटिलैः कटाक्षैः।

असौ विशालायतपक्ष्मलाक्षी मनोऽहरन्मे वनकिन्नरीव।।

मणिप्रभोद्भासितकुण्डलश्रीर्होमद्युतिविद्युदिवोल्लसन्ती।
मुग्धा विदग्धोचितलीलया मां व्यलोकयत्सा चकिता मृगीव।।

(श्रीबोधिसत्व0 8/66–61)

प्राचीन लक्षणों के अनुसार महाकाव्य में या तो एक नायक का सम्पूर्ण चरित वर्णित होता है या फिर एक वंश के अनेक नायकों का। इस महाकाव्य में एक ही वंश में उत्पन्न नायकों का चरित वर्णित नहीं है वरन् सभी कथाओं का लक्ष्य एक ही है– बोधित्व की प्राप्ति। अतः सभी कथाओं और असम्बद्ध कथाओं में तारतम्यता, एकसूत्रता आ गई है। सत्यव्रत शास्त्री जी का यह महाकाव्य प्राक् महाकाव्य के लक्षण से भिन्न एक नवीन विधा का आधुनिक महाकाव्य की श्रेणी में रखा जाने वाला उत्कृष्ट महाकाव्य है।

इन्दिरागान्धीचरित

इन्दिरागाधीचरित महाकाव्य एक ऐतिहासिक महाकाव्य है। इस महाकाव्य में इन्दिरागॉधी के सम्पूर्ण चरित के विकास को शास्त्री जी ने 25 सर्गो में निबद्ध किया है। सम्पूर्ण कथानक भारतीय स्वतंत्रतासंग्राम के उस कालखण्ड का है जब महात्मा गॉधी स्वतंत्रतासंग्राम से जुड़ चुके थे और इलाहाबाद का 'आनन्दभवन' जो नेहरु परिवार का घर था, इस संग्राम का केन्द्रस्थल बन चुका था। इस महाकाव्य के पहले सर्ग से लेकर बीसवें सर्ग तक इन्दिरा गान्धी के प्रारंभिक चरित के विकास को दिखाया गया है। बाल्यकाल में उन्होंने अपने दादाजी तथा पिता से उदारता, अदम्य–साहस, स्वाध्याय में रुचि, पितामही से भक्ति और दृढ़ आस्था के संस्कार प्राप्त किये, तो वहीं अपनी माता से प्राचीन मान्यताओं के प्रति विश्वास और प्रेम तथा सुकुमारता प्राप्त की। कवि ने अद्भुत सरलता और सहजता से मनोभावों का वर्णन किया है। अंतिम पांच सर्गों में इन्दिरागॉधी को मंत्रित्व पद प्राप्त होने से लेकर 1976 तक की घटना का वर्णन किया है। वर्णन में स्वाभाविकता के साथ संक्षिप्तता भी है। महाकाव्य में कई स्थलों के रमणीक वर्णन भी किये गये हैं।

इस महाकाव्य को छोटे–छोटे सर्गो में बॉटकर कवि ने अपने युग के एक प्रखर व्यक्तित्व का चित्रण किया है। उनका यह महाकाव्य आश्रयदाता के प्रशिस्तगानात्मक शैली से भिन्न आधुनिक महाकाव्य है।

श्रीरामकीर्ति महाकाव्य

श्रीरामकीर्ति महाकाव्य सत्यव्रतशास्त्री जी की एक अद्भुत रचना है, जो थाई देश के रामायण को उपजीव्य बनाकर लिखी गई है। इस महाकाव्य में राम के जीवन की उन घटनाओं को वर्णित किया गया है जो श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण अथवा अन्य भारतीय रामायणों में प्राप्त नहीं होती। विशेषतः उन कथाओं का वर्णन है जो थाई रामायण से ली गयी हैं। जिसमें राम का कथागत वैशिष्ट्य दिखाई देता है। 'रामकीर्ति' रामायण की कथाओं का अवलम्बन मात्र लेकर कवि ने नई शैली में काव्य का प्रणयन किया है।

प्रथम सर्ग के प्रारम्भिक पाँ पद्य कवि ने अपनी रचना 'थाईदेशविलास' से लिखा है। इन पद्यों में कविन ने थाईदेश की राजधानी बैंकाक का इतिहास, रामकीर्ति के नाम से प्रसिद्ध रामगाथा का इतिवृत्त तथा रामगाथा के प्रति वहाँ के स्थानीय लोगों के आत्मीयता का सुन्दर वर्णन किया है।

महाकाव्य में पात्रों जो वाल्मीकि रामायण और रामकीर्ति रामायण में एक समान हैं, उनके नाम कवि ने वाल्मीकि रामायण के अनुरुप ही रखा है किन्तु जो नाम रामकीर्ति में प्राप्त हैं, उन्हें उसी रुप में ले लिया है। इस महाकाव्य में ऐसी घटनाओं का वर्णन है, जो संभवतः भारतीय रामकथाओं से हमें ज्ञात नहीं है। अतः कथानक में नवीनता एवं औत्सुक्तय की निरंतरता बनी है। कवि ने मूलकथा की इतिवृतात्मक को बनाए रखा है। अनके मार्मिक प्रसंगो अवर्णित तथा महत्वपूर्ण घटनाओं का सामान्य वर्णन से लक्षित कर दिया गया है।

3.7.2.2 खण्डकाव्य

श्रीगुरुगोविन्दसिंहचरितम्

गुरुगोविन्दसिंहचरितम् खण्डकाव्य का प्रकाशन 1967 ई0 में हुआ और इसी खण्डकाव्य के लिए आपको 1968 में साहित्य अकादमी पुरुस्कार प्राप्त हुआ। यह खण्डकाव्य बीसवीं शतीं का सुप्रसिद्ध काव्य है जिसमें गुरुगोविन्दसिंह जी के समग्र जीवन का पद्यात्मक वर्णन किया गया है। यह खण्डकाव्य चार खण्डों में उपनिबद्ध है। प्रथम खण्ड में गुरुगोविन्द सिंह जी के जन्म, बाल्यकाल, शिक्षा–दीक्षा, उनके पिता गुरु तेगबहादुर सिंह के बलिदान का वर्णन है। इसी खण्ड में पिता की शहादत के पश्चात् गुरुगोविन्दसिंह को गुरु की गद्दी की प्राप्ति तथा गुरु द्वारा शिष्यों को सैन्य–शिक्षा प्रदान करने आदि घटनाओं को समाहित किया है। द्वितीय खण्ड में उनके विवाह, पोण्टा साहब नामक रमणीक पर्वतीय स्थल पर उनके निवास, विद्याधर नामक बृहत् ग्रन्थ का पंडितों द्वारा प्रणयन, म्याँ खाँ (औरंगजेब का प्रतिनिधि) के विरुद्ध युद्ध में बिलासपुर नरेशों की सहायता, पर्वतीय नरेशों का उनके साथ युद्ध एवं उनकी पराजय आदि का वर्णन है। तृतीय खण्ड में सत्यव्रत शास्त्री जी ने खालसा पंथ के संगठन, पर्वतीय नरेशों का औरंगजेब से मिलकर गुरुगोविन्दसिंह जी की नगरी आनन्दपुर पर आक्रमण तथा गुरुगोविन्दसिंह का उस नगरी को छोड़कर चले जाने का वर्णन किया है। चतुर्थ खण्ड में चालीस सिखों द्वारा मुगल सेना से चमकौर में युद्ध, गुरुगोविन्दसिंह के दो पुत्रों का इस युद्ध में वीरगति को प्राप्त होना, दो छोटे पुत्रों के सरहिन्द के दरबार में मारे जाने, बन्दाबैरागी से भेंट होने पर उसे उपदेश देकर पंजाब लाने की घटना, देश–भ्रमण, एक पठान द्वारा गुरुजी पर प्रहार और उनके निर्वाण तक की घटना वर्णित है।

सत्यव्रतशास्त्री जी की भाषा प्रसादमयी एवं स्वाभाविक है। कथाओं के संयोजन में गतिशीलता हैं। अलंकारों का प्रयोग स्वभाविक ढंग से किया गया है। कवि की प्रकृति वर्णन करने की शक्ति अद्भुत है। शास्त्रीजी का यह खण्डकाव्य एक ऐतिहासिक काव्य है जिसमें अलंकार और काव्यगुण सन्निहित हैं।

3.8 अभ्यास–प्रश्न

1. महाकाव्य के आधुनिक लक्षणों की व्याख्या कीजिए।
2. पंडिता क्षमाराव के जीवन के विषय में क्या जानते हैं ?

3. पंडिता क्षमाराव के महाकाव्यों में आधुनिकता को स्पष्ट कीजिए।

4. डॉ0 श्रीधरवर्णेकर के कर्तृत्व पर प्रकाश डालिए।

5. डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री के कर्तृत्व पर प्रकाश डालिए।

6. आधुनिक महाकाव्य के निर्णायक बिन्दुओं पर प्रकाश डालिए।

3.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, लेखक – म0म0 प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र

2. नई सहस्राब्दी में संस्कृत – लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र

3. अर्वाचीन संस्कृत काव्यशास्त्र – संपादक – डॉ0 स्मिता अग्रवाल

4. संस्कृत–वाड्.मय का बृहद् इतिहास, सप्तम खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास – सम्पादक – डॉ0 जगन्नाथ पाठक

5. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास, लेखक – डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी

इकाई–04 प्रमुख महाकाव्य एवं कवि परिचय – II

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

4.2.1 कवि परिचय

4.2.2 कर्तृत्व

4.2.2.1 महाकाव्य

4.2.2.1.1 उत्तरसीताचरितम्

4.2.2.1.2 स्वातन्त्र्यसम्भवम्

4.3 अभिराज राजेन्द्र मिश्र

4.3.1 कवि परिचय

4.3.2 कर्तृत्व

4.3.2.1 महाकाव्य

4.3.2.1.1 जानकीजीवनम्

4.3.2.1.2 वामनचरितम्

4.4 डॉ0 रामकरण शर्मा

4.4.1 कवि परिचय

4.4.2 कर्तृत्व

4.5 अभ्यास–प्रश्न

4.6 सन्दर्भ–ग्रन्थ

4.0 प्रस्तावना

इस इकाई में आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी, अभिराज राजेन्द्र मिश्र तथा डॉ0 रामकरण शर्मा के जीवन–वृत्त एवं कर्तृत्व का अध्ययन करेंगे। प्रो0 रेवा प्रसाद द्विवेदी के दो महाकाव्यों तथा प्रो0 मिश्र के भी दो महाकाव्यों का अध्ययन करेंगे। डॉ0 रामकरण शर्मा के कर्तृत्व की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करेंगे।

4.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के जीवन–वृत्त तथा उनके महाकाव्यों का ज्ञान प्राप्त करे सकेंगे।
- प्रो0 राजेन्द्र मिश्र के जीवन–वृत्त को तथा उनके महाकाव्यों को जान सकेंगे।
- डॉ0 रामकरन शर्मा के सम्बन्ध में सामान्य ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

4.2 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

4.2.1 कवि परिचय

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी का जन्म भोपाल के निकट ''नादनेर'' ग्राम में सन् 1935 में हुआ। द्विवेदी जी की उच्चशिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हुई। तदनन्तर श्री द्विवेदी वहीं प्राध्यापक हो गए। हृदय के गूढ़ भावों के उद्बोधन में समर्थ आपकी वाणी में एक विलक्षण गाम्भीर्य परिलक्षित होता हैं **'स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमार्गी गौरवम्'** भारवि की यह उक्ति आपकी रचनाओं में पद–पद पर लक्षित होती है। इनके अनेक काव्य और मौलिक साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थ हैं। इनके दो महाकाव्य प्रकाशित हुए हैं– सीताचरित का प्रकाशन 1960 में सागर विश्वविद्यालय (सागर) की संस्कृत परिषद द्वारा किया गया। उसका षष्ठ परिष्कृत संस्करण कालिदास संस्थान, 28 महामनापुरी, वाराणसी से उत्तरसीताचरितम् के नाम से 1990 में प्रकाशित हुआ। दूसरा महाकाव्य स्वातन्त्र्यसंभव कालिदास संस्थान, वाराणसी से 1990 में प्रकाशित हुआ। कवि को इस महाकाव्य के लिए 'साहित्य अकादमी', नई दिल्ली

का प्रतिष्ठित पुरस्कार तथा के0के0 विरला फाउण्डेशन, नई दिल्ली का 'वाचस्पति पुरस्कार' प्राप्त हो चुका है।

बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में प्रकाशित महाकाव्यों के मध्य उक्त दोनों रचनाओं का अपनी मौलिकता के कारण महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। आधुनिक पद्य रचनाधर्मिता में प्रविरल काव्यत्व से लसित संस्कृत कविता जहाँ आज छन्द के सभी बन्धनों से मुक्त हो अबाध गति से प्रवाहित हो रही है। आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी ने छन्दशास्त्र के अनुशासन में रहकर प्राचीन शास्त्रीय परम्परा को अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में पुनरूज्जीवित कर पुनः शास्त्रीयता की ओर मुड़कर देखने का सार्थक प्रयास किया।

4.2.2 कर्तृत्व

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के दोनों महाकाव्य चरित्र–वर्णन से सम्बन्धित हैं। ''उत्तरसीताचरितम्' सीता के उज्जवल चरित को समुचित कल्पनालोक से विशेषरुपेण उद्भासित करता है और दूसरा महाकाव्य 'स्वातन्त्रयसम्भवम्'' स्वतंत्रता–संग्राम से सम्बन्धित अनेक राजनेताओं (स्वतंत्रता–संग्राम के सेनानियों) के देशप्रेम की ऊर्जा से संचालित कार्यकलापों द्वारा अप्रत्यक्ष रुप से उनके चरित्र को उदघाटित करता है। कवि ने यहाँ इतिहास की अपेक्षा भावात्मक तरलता को ही अधिक प्राधान्य दिया है– **'अत्रापि प्राधान्यं मनुष्यसंस्कारस्यैव, नेतिहासस्य। अतएवाऽत्र कवितेव प्रधानति, कविकर्मणो वा या पराकाष्ठा सा खलु पुरः स्फुरति।'** यह महाकाव्य कोई नीरस–सा, शुष्क घटना प्रधान इतिहास नहीं वरन् साहित्यिक शैली में निबद्ध एक रोचक एवं सरस वर्णनात्मक ऐतिहासिक महाकाव्य है। इस महाकाव्य का आधार झॉसी की रानी लक्ष्मीबाई से प्रियदर्शनी इन्दिरा गाँधी तक स्वतंत्रता–संग्राम में भाग लेने वाले सेनानियों के कार्यकलापों पर आधारित घटनाओं तथा उनके जीवन चरित्रों का सरस वर्णन है। वस्तुतः हमारे सभी प्राचीन एवं अर्वाचीन संस्कृत महाकाव्यों में किसी पौराणिक या ऐतिहासिक महापुरुषों के चरित्र का वर्णन किया जाता है।

4.2.2.1 महाकाव्य

4.2.2.1.1 उत्तरसीताचरितम्

काव्यरचना की श्रृखंला में यह कवि की प्रथम रचना है। इसका प्रारम्भ कवि के छात्र जीवन में ही हो गया था। उत्तरसीताचरित दस सर्गो में विभक्त महाकाव्य है। इसमें श्लोकों की संख्या 694 है। संस्कृत काव्य–साहित्य का प्रारंभ ही लोकोत्तर विभूति श्री रामचन्द्र के चरित्र–ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण से हुआ है। आचार्य द्विवेदी ने 'उत्तरसीताचरितम्' काव्य में सीता के उत्तरजीवनचरित से सम्बन्धित समाज में फैली भ्रामक धारणा के जाल में न पड़ कर बड़ी ही कुशलता से नवीन मौलिक कल्पना का आश्रय लेते हुए सीता के उत्तरजीवनचरित का उदात्त रूप में वर्णन किया है। आचार्य के सीता और शक्ति (लक्ष्मीबाई आदि) के चरित्र को आधार बनाकर लिखे गए दोनों काव्य अत्यन्त सामयिक हैं। युग की माँग के अनुसार विद्वान लेखक ने सीता–निर्वासन के संदर्भ में 'लोकाराधन' करने के उद्देश्य को प्रतिष्ठित कर श्रीराम के चरित्र को, उनके मुख से यह कहलवाकर कि 'जनता द्वारा की गई निंदा का कारण एवं अपराधी मैं ही हूँ, मेरी ही त्रुटि के कारण मेरी जनता अशिक्षित है – (2/24, 26) उदात्त आदर्श के साँचे में ढालने का पूर्ण प्रयत्न किया और उसमें वह सफल भी हैं। इस महाकाव्य की प्रमुख पात्र सीता करुणा का पात्र अबला नहीं है– क्योंकि कवि के अनुसार महामुनियों के शोणित से उसे ओजस् की ज्योति प्राप्त हुई है (3/46)।

सर्वसहा भगवती पृथ्वी से उसे शरीररत्न, महायोगी विदेह (जनक) से विनय–योग प्राप्त हुआ है। बुद्धि प्रधान सूर्यवंश की कुलवधू होकर चौदह वर्षों तक वनवास द्वारा पतिव्रत की सुवर्णमुद्रा परीक्षित हो चुकी है तथा वह नितान्त उदात चित्तावाली नारी है।सीता के विषय में यह श्लोक आकलनीय है–

निमिकुलतपसां वा सत्फलं, पुण्यपाको
रविकुलजनुषां वा जानकीत्यार्यलक्ष्मीः।
व्यरुचदवनिपालस्यार्थमुद्रासनस्था
श्रितवपुरिव लोकस्योदयायौषसी श्रीः।।

उ0सी0चरितम्–1/68

अर्थात् तब राजा राम के आधे आसन पर विराज रही, निमिकुल की तपस्याओं का सुफल या सूर्यवंशीय महात्माओं के पुण्यों का परिपाक जानकी नामक अभिलक्ष्मी ऐसी लग रही थी जैसे संसार के मंगलविधान के लिए शरीर धारण करके उपस्थित हुई उषा की श्री हो। अपने सम्बन्ध में फैली लोकनिन्दा (परिवाद) को लेकर विलाप करके परिवारजनों के बीच परित्याग के निर्णय को न कह पा रहे राम की मनःस्थिति से अवगत होकर सीता स्वयं वन जाने का अपना निर्णय सुनाती है–

यामिमातर इतः स्वतस्ततो यामि, यामि विपिनं न मेव्यथा।
कीर्तिकायमवितुं सुमानुषा मृत्युतोऽपि न हि जातु बिभ्यति।।

3/31

(माताओं, मैं यहाँ से जाती हूँ, स्वयं की जाती हूँ, और मुझे इसकी कोई व्यथा नहीं। अपनी कीर्ति की रक्षा के लिए अच्छे दम्पति और सत्पुरूष मृत्यु से कभी नहीं डरते)

अग्रज की आज्ञा से विवश लक्ष्मण सीता की उर्मिला आदि बहनों से भेंट करवाते हैं अन्ततः गर्भवती सीता को वन में छोड़ आते हैं। सम्पूर्ण महाकाव्य कवि श्री रेवा प्रसाद द्विवेदी की नवोन्मेषिणी प्रतिभा से प्रसूत होकर मानव–मन पर एक अलग ही प्रभाव छोड़ती है। महाकवि ने सीता के मधुर कथोपकथन के द्वारा नारी की सत्ता, सम्मान तथा दाम्पत्य के आधार के रूप में नारी को ही उच्च स्थान दिया है।

दस सर्गो से विभक्त 694 श्लोकों से ग्रंथित यह 'उत्तररामचरितम्' महाकाव्य में देवी सीता के उत्तरजीवन अर्थात् रावण–वध के पश्चात् अयोध्यागमन (सीता के साथ अर्धसिंहासनाररूढ़ राम के लौकिक मंगलगान–ध्वनि के मध्य राष्ट्रपति के रूप में निर्वाचित होने) से प्रारंभ होकर सीता के समाधिस्थ होने तक की मंगलान्तक कथा का वर्णन प्राप्त होता है। कवि ने कथानक को आधार बनाकर सर्गों का नामकरण किया है तथा सम्पूर्ण महाकाव्य को निम्नानुसार दस सर्गों में विभक्त किया है –

सर्गो के नाम

प्रथम सर्ग– 'राष्ट्रपतिनिर्वाचनम्' (आधुनिक लोकतन्त्र की रीति से रामचन्द्र का राज्याभिषेक)। द्वितीय सर्ग– 'जानकीकौलीनम्' (सीता चरित्र की निन्दा)। तृतीय सर्ग– 'जानकीपरित्याग'।चतुर्थसर्ग– 'साकेत परित्याग' (सीता का साकेत छोड़कर जाना)। पंचमसर्ग– 'कुमारप्रसवः' (लव–कुश का जन्म) (सीता का मुनिवृत्ति ग्रहण करना)। सप्तम् सर्ग– 'विद्याधिगमः' (कुश–लव का विद्याध्ययन)। अष्ट्मसर्ग– 'कुमारायोधनम्' (दो कुमारो का युद्ध वर्णन)। नवमसर्ग– 'मातृप्रत्यभिज्ञानम्' (माँ सीता की पहचान)। दशमसर्ग– 'समाधिमांगल्यम्' (सीता की शुभावहा समाधि)। दस सर्गो में विभक्त महाकाव्य की कथा–वस्तु संक्षेप में इस प्रकार है–

कथा–वस्तु

लोकतन्त्रात्मक रीति से श्रीराम का राज्याभिषेक होने के पश्चात् राजा राम के आधे सिंहासन पर स्थित पटमहिषि राज्ञी सीता के सम्बन्ध में लोकापवाद फैलने की अग्नि में राम की कीर्ति पताका की रक्षा हेतु सीता स्वंय ही वन जाने का निर्णय लेती है। माताओं, राम आदि बन्धु–बान्धवों की उपस्थिति में लक्ष्मण के द्वारा प्रेरित किए जाने पर अपनी बहनों से भेंट करती हैं तथा उसके पश्चात् वन चली जाती हैं। भागीरथी के तट पर बिना कष्ट के प्रकृति के गोद में दो पुत्रों (लव–कुश) को जन्म देती हैं। उसके पश्चात् विशेष आग्रह पर वाल्मीकी मुनि के आश्रम में रहना स्वीकार करती हैं। पुत्रों के बड़े होने पर सीता उन्हें विद्याध्ययन के लिए वाल्मीकी मुनि को सौंप देती हैं। वे दोनों बालक अल्पसमयावधि में ही सारी विद्याएं प्राप्त कर लेते हैं। कालान्तर में राम दिग्विजय हेतु लक्ष्मण–पुत्र चन्द्रकेतु के नेतृत्व में अश्वमेघ–यज्ञ का अश्व छोड़ते हैं। दोनों बालकों द्वारा अश्व पकड़ लिए जाने पर चन्द्रकेतु से उनका भयंकर युद्ध होता है। श्रीराम शम्बूक को मुनिवृत्ति से निवृत्त कर वाल्मीकी मुनि के आश्रम पहुँचते हैं। मुनि द्वारा राजा जनक की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया जाता है। इस सभा में सैनिक, मुनिगण, माताएँ, लोक–समुदाय आदि बंधु–बांधव के साथ–साथ भूर्जपत्रों से आच्छादित सीता पर मधुवर्षा करती हुई वन–देवियाँ उपस्थित होती हैं। महर्षि वाल्मीकी जनापवाद के कारण सीता परित्याग को अनुचित सिद्ध करते हुए सीता को निष्पाप सिद्ध करते हैं। राम अश्रु बहाकर उनका समर्थन करते हैं। लव–कुश का परिचय राम से कराया जाता है। इसके

उपरांत पिता–पति आदि की उपस्थिति में अपने जीवन में अन्य किसी कृत्य को शेष न जानकर सीता पद्मासन लगाकर समाधिस्थ होकर लौकिक शरीर के साथ भू–गर्भ में समा जाती हैं।

सीता एवं राम का चरित्र

प्रस्तुत काव्य में राम और सीता के चरित्रों को उदान्त रूप से अंकित किया गया है। सीता का चरित्र आत्मा की पवित्रता, दृढ़ता और सहनशीलता में अद्वितीय है। इस महाकाव्य में सीता को करुण–पात्र के रूप में चित्रित न करते हुए कवि ने उन्हें शरीर में निहित चेतना की भांति तथा विद्युत के समान भासमान अंकित किया है। भगवती पृथ्वी से उत्पन्न सीता विदेह राज की पुत्री तथा सूर्यवंश की वधू हैं। कवि ने उन्हें अलौकिक शक्ति के रुप में चित्रित किया है।

राम परहित के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठा के आदर्श वातावरण से सम्पन्न दिखाई देते हुए भी मानव सुलभ–भावात्मक दुर्बलताओं से समवेत हैं। कवि ने काव्य के द्वितीय सर्ग में उन्हें प्रेम और जनहित के प्रति विहित कर्त्तव्य पालन के जटिल संघर्ष में जुटे हुए चित्रित किया है। अंत में, जनहित की भावना विजयी होती है। अंत में, प्रजाहित में राम अपनी चेतना का त्याग करने का निर्णय लेते हैं। विषय वस्तु में महाकाव्य सम्बन्धी औचित्य प्रदान करने के लिए कवि गंगा, यमुना, सिन्धु आदि नदियों का नामोल्लेख कर अपनी प्रबन्ध–पटुता का परिचय देते हैं। प्रकृति के कोमल पक्षों पर भी कवि ने अपना ध्यान केन्द्रित रखा है। सप्तम् सर्ग के संन्ध्या, सूर्यास्त, अंधकार, चन्द्रोदय आदि का वर्णन अत्यन्त प्रभावशाली हैं।

प्रसंगानुसार कवि ने अलंकारों का प्रयोग समुचित रीति से किया है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्तादि अलंकारो का विन्यास काव्य को मनोरम बनाता है। कवि ने वस्तु–वर्णन करते समय विशेष ध्यान रखा है कि मूल कथा में अधिक व्यवधान न पड़ने पाए। कवि ने मध्ययुगीन कवियों की भांति जीवन–दर्शन, मानव–मूल्य का भी वर्णन काव्य को सुन्दर बनाने के लिए किया है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'उत्तरसीताचरितम्' की प्रासंगिकता

बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि द्विवेदी ने अपने इस काव्य में चरित्र एवं अपनी आध्यात्मिक (धार्मिक) संस्कृति पर विशेष बल दिया है। प्रस्तुत काव्य पुराणेतिहासोक्त सिद्धान्तों का ही काव्यात्मक रूपान्तर है। इसमें तप, संयम, त्याग, संकल्प आदि भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों की गौरव–गाथा वर्णित है। इसके साथ ही सम्पूर्ण काव्य में राष्ट्रीय भावना का वर्णन है। यह महाकाव्य संस्कृत काव्यों में नायिका–प्रधान काव्य है। इसमें आदि से अंत तक सीता के उदात्त चरित्र का वर्णन है। अतः काव्य के नाम की सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। इस सम्पूर्ण काव्य में सीता के चरित्र–वर्णन के द्वारा कवि श्री द्विवेदी ने आचरण की महत्ता पर बल दिया है। कवि ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि कोई भी स्त्री हो या पुरुष हो, मनुष्य अपने आचरण से महान बनता है। इस काव्य में कवि ने सीता के चरित्र को उसके आचरण, दृढ़ निश्चय, संयम आदि गुणों के द्वारा इतना सशक्त चित्रित किया है कि महर्षि वाल्मीकी भी उनके दर्शन मात्र से धन्य हो जाते हैं। उनकी बुद्धि एवं उनका हृदय उनके दर्शन मात्र से विमल हो जाता है। प्रजाहित में सीता का परित्याग कर भगवान राम द्वारा अपने सुख की, यहाँ तक कि अपने जीवन का सर्वस्व त्यागकर एक महान आदर्श प्रस्तुत किया गया है।

सीता के वनवास द्वारा कवि ने समाज में फैली हुई कुरीतियों, नारी समाज के प्रति पुरुषों के संकुचित दृष्टिकोण को व्यक्त किया है। नारी को अबला बताते हुए उन्होंने उसकी दयनीय दशा को काव्य के माध्यम से वर्णित किया है। कवि ने विश्व कल्याण के मार्ग को सूचित करते हुए आवश्यकता पड़ने पर नारी को अत्याचार के विरूद्ध आवाज उठाने की अनिवार्यता पर बल दिया। 'मात् देवो भवः', 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' आदि वाक्याशों का बहुतायत से प्रयोग करने वाले देश में भी नारी के प्रति उपेक्षा तथा हो रहे अत्याचारों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। उन्होंने नारी को स्वावलम्बन का ही मार्ग चुनने की सीख दी है। उसी में उसका कल्याण निहित है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह महाकाव्य अत्यंत प्रासंगिक है।

प्रकृति का वर्णन करते हुए डॉ0 द्विवेदी कालिदास के अनुयायी प्रतीत होते हैं। कवि ने स्पष्ट किया है कि मनुष्य समाज का भविष्य प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने में है। पर्यावरण के महत्व को दर्शाते हुए कवि ने आश्रम–संस्कृति का सजीव चित्रण किया है। इसके

माध्यम से कवि ने समाज की ज्वलन्त समस्याओं को भी संकेतित किया है, जैसे–विश्वबुधत्व की भावना–(4/53), समाजसेवा की उपयोगिता–(6/31), स्वायत्ता–(6/38, 10/8), बाल समस्या–(6/49ए 54, 58), कृषि सपर्या–(2/44, 10/8), छात्रानुशासनम्–(7/7–4,10/10), शिक्षानीतिः नारीजागरणम्–(4/57)।

मूल रस में परिवर्तन

प्रस्तुत काव्य में कवि की मौलिक प्रतिभा ने रामायण की प्रसिद्ध कथा के मूल रस में परिवर्तन करने के लिए कथा–विधान में आमूल परिवर्तन किया है। इस प्रकार यह एक नूतन प्रबन्ध–कल्पना बन गई है। समस्त कथा–विधान का प्राण रस है। मूलरस के अनुरुप ही कथा के विभिन्न प्रसंगों का वर्णन किया जाता है। प्रस्तुत काव्य की कथा रामायण की कथा पर आधारित है। रामायण का मुख्य रस करूण है, ऐसा सभी मान्य आचार्यों ने स्वीकार किया है। 'रामायणो हि, करूणो रसः स्वयमादिकविना सूत्रितः शोकः श्लोकत्वमागतः एव वादिनः।' अर्थात् रामायण में आदि कवि ने स्वयं ही यह कहकर की 'शोक श्लोक में परिणत हो गया' करुण रस सूचित किया गया है। परन्तु कवि ने अपनी मौलिक क्षमता के द्वारा कथा विधान परिवर्तन कर, काव्य को सुखान्त बनाकर आनन्द, पर्यावाची काव्य में 'शान्तरस' में परिणत कर दिया है।

अतः कवि डॉ0 द्विवेदी के अनुसार इस महाकाव्य का मुख्य रस 'शान्तरस' है तथा 'निर्वेद' उसका स्थायी भाव है। इस महाकाव्य में सीता राम से विमुक्त नहीं हुई हैं, अपितु वह आत्मदेवस्वरुप अतएव केवल दिव्य रूप के किसी लोकोत्तर राम को पाकर प्रसन्न हो गई हैं। उन्हें न विरह का भय है, न ही लोकापवाद का। वह अपनी माँ की गोद में सो गई हैं, वह मृत नहीं है। अन्य रसों में विभिन्न स्थानों पर करुण (3/22–27), वात्सल्य (10/33–38), शौर्य (8/42) आदि रसों का भी प्रयोग कवि ने किया है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि वैदर्भी रीति की प्रवाहपूर्ण प्रसादमयी शैली का यह महाकाव्य आधुनिक संस्कृत महाकाव्यों में अपना प्रमुख स्थान रखता है। कविवर द्विवेदी में कालिदास की रसपेशलता, माघ की मसृणता तथा भारवि का अर्थगाम्भीर्य एक साथ अनुभूत

किए जा सकते हैं। इसकी रचना के बाद कवि डॉ0 द्विवेदी साहित्य जगत में प्रभूत प्रतिष्ठित हुए।

4.2.2.1.2 स्वातन्त्र्सम्भवम्

'स्वातन्त्र्यसम्भवम्' महाकाव्य 28 सर्गो का एक विशाल महाकाव्य है, जिसमें झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई से लेकर प्रियदर्शिनी इन्दिरा गाँधी तक के भारत में घटित घटनाओं को ऐतिहासिक आधार बनाया गया है। यह महाकाव्य स्वतंत्रता–संग्राम से संबंधित अनेक राजनेताओं (स्वतंत्रता–संग्राम के सेनानियों) के देश–प्रेम की ऊर्जा से संचालित कार्यकलापों द्वारा अप्रत्यक्ष–रूप से उनके चरित्र को उद्घाट्ति करता है कवि ने यहाँ इतिहास की अपेक्षा भावात्मक तरलता को ही अधिक प्राधान्य दिया है– **'अत्रापि प्राधान्यं मनुष्य–संस्कारस्यैव, नेतिहासस्य। अतएवाऽत्र कवितेवप्रधानति, कविकर्मणों वा या पराकाष्ठा सा खलु पुरः स्फुरति'** (आमुख)। यह काव्य शुष्कता लिए हुए घटना–प्रधान कोई इतिहास पर आधारित काव्य नहीं है, अपितु यह विशुद्ध साहित्यिक शैली पर आधारित एक रोचक एवं सरस किन्तु गूढ़ वर्णनात्मक ऐतिहासिक महाकाव्य है। कवि ने स्वतंत्रता–संग्राम सेनानियों के चरित्रों को अलंकृत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। इस महाकाव्य को **'स्वातन्त्रयस्य संभवः जन्म महिमातिशयश्च यत्र वर्णितः तत् काव्यम्'**–अर्थात् देशभक्त सेनानायकों को देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने में प्रकट किए महिमातिशय के अपूर्व पराक्रम का वर्णन है जिसमें है, वह 'स्वातन्त्रयसम्भवकाव्य' कहा जाता है। ऐतिहासिक शैली के काव्य के सम्बन्ध में यह समझ लेना आवश्यक है कि कवि के लिए काव्य रचना में कल्पना के लिए अधिक स्थान रहता है किन्तु ऐतिहासिक शैली के काव्य के कथानक इतिहास से लिये जाते हैं परन्तु इनका वर्णन रसौचित्य दृष्टि से अलंकृत शैली में किया जाता है। इस प्रकार यह काव्य ऐतिहासिक ग्रंथ न होकर ऐतिहासिक शैली का काव्य ग्रंथ है। इस काव्य के विषय में कवि का दृष्टिकोण निम्न पंक्तियों से स्पष्ट होता है–

'झांसीश्वरी लक्ष्मीमारम्भ्य प्रियदर्शिनीमिन्दिरागान्धिदेवीं यावद्।
भारतवर्षे स्वातन्त्र्यमधिकृत यद्घटितदेवाऽत्र वस्तु।।
अत्रापि प्राधान्यं मनुष्यसंस्कारस्यैव, नेतिहासस्य।

अतएवाऽत्र कवितैव प्रधानति, कविकर्मणो वा या पराकाष्ठा,
सा खलु पुरः स्फुरति। तामिनां रसथेयुः सह्रदया अवधानने।।
लक्ष्मीन्दिरातटयुगी परिवेष्टितायाः स्वातत्र्यसम्भवकथा–त्रिदशापगायाः।
अस्या भवन्त रससेवनया विमुक्तक्लेशाश्च ह्रष्टह्रदयाश्च मनीषिमुख्याः।।

–(1 / 53)

कवि के भाव को जानने के बाद जे0एफ0डब्ल्यू0 न्यूमेन का महाकाव्य के सम्बन्ध में कहा गया यह कथन–An epic is a compromise between poetry and history–सत्य प्रतीत होता है।

सर्गो के नाम

प्रथमसर्ग–पीठिका (ईशवन्दना)। द्वितीय सर्ग– (काशी–झांसीश्वरी वर्णनम्)। तृतीय सर्ग–जनविद्रोहः, भारतीय आदर्शाः। चतुर्थसर्ग– प्रयागवर्णनम्–जवाहरस्य कमलापरिग्रहः। पंचम सर्ग–वसन्तवर्णनम्–सिसृक्षास्तुतिः, कमलादोहदः। षष्ठ सर्ग–गर्भमंगलम्। सप्तम सर्ग–कश्मीर गतोत्पलाद्रि वर्णनम्, शरदवर्णनम्। अष्टम सर्ग–ग्रामटिकार्शनम्। नवम सर्ग–जनान्दोलनम्। दशम सर्ग–इन्दिराजन्म। एकादश सर्ग–काव्यमंगलम् (सरसीकाव्यम्)। द्वादश सर्ग–कमलामहाप्रयाणम्। त्रयोदश सर्ग–मोतीलाल नेहरु महाप्रयाणम् (मृत्यु कविता)। चतुर्दश सर्ग–नोवाखालीरक्तपाते परिदेवनम्। षोडश सर्ग–स्वराज्यम्, सौराज्यम्, चीन–पाकाभिद्रोह। सप्तदश सर्ग–जवाहरलाल नेहरु परिनिर्वाणम्। अष्टादश सर्ग–श्रीलाल बहादुर शास्त्रिणः प्रधानमन्त्रित्वम्। भारतपाकसन्धिबन्धः, शास्त्रिणः प्राणोत्सर्गः। एकोनविंश सर्ग–ताशकन्दे लाल बहादुरशास्त्रिशोऽन्तिमा उच्ध्वासाः। विंशति सर्ग–विलापाः, इन्दिराया आपत्कालघोषयापरिसंहारौ। त्रयोविंश सर्ग–जनताशासनम्, मुरारजिदेसाचिनः प्रधानमन्त्रित्वम्। चतुविंश सर्ग–जनताशाअनभुतद्भंग कवेराक्रोधः। पंचविश सर्ग–श्रीवैष्णवीदर्शनम्, स्तोत्राणिं षड्विंश सर्ग–इन्दिरादेव्याः पुनः प्रधानमन्त्रित्वम्। सप्तविंशः इन्दिरादेव्याः परिनिर्वाणम्। अष्टविंश सर्ग–स्वर्गे जवाहरलाल मोक्ष, जगत्स्वस्त्ययनम्।

कथावस्तु

सर्गो के नाम से ही प्रायः सम्पूर्ण महाकाव्य की कथा स्पष्ट हो जाती है। घटनाओं के अनुसार ही कवि ने सर्गों का नामाकरण किया है। कवि ने प्रथम सर्ग में स्वतन्त्र्यसम्भवरुपी त्रिदशापगा (गङ्गा) को लक्ष्मी (झांसीश्वरी) और इन्दिरा (गान्धी) रूपी तटयुगी से परिवेष्टित कहा है। प्रारंभ में ही कवि ने सुमेरू पर्वत से लेकर दक्षिण समुद्र तक विस्तृत भारतवर्ष की वन्दना की है। भारत की विष्णु से उपमा दी है। मानव की महनीयता का भी वर्णन कवि ने किया है। इससे सम्पूर्ण कृति को राष्ट्रीय रूप प्राप्त होता है। इसके बाद वाराणसी में झॉसी की रानी लक्ष्मीबाई के जन्म का वृतान्त तथा जनविद्रोह नामक तृतीय सर्ग में भारत की धारित्रि का गुणगान एवं लक्ष्मीबाई तथा अंग्रेजों के मध्य युद्ध में रानी की वीरगति का वर्णन प्राप्त होता है तथा गुरूण्डों के शासन तथा भारत के एक नए जागरण के उदित होने का वर्णन किया गया है। इसके उपरान्त प्रयागवर्णन के क्रम में मोतीलाल नेहरु तथा उनकी पत्नी स्वरूपरानी के पुत्र प्राप्ति तथा जवाहरलाल के कमला से विवाह का प्रसंग प्राप्त होता है। षष्ठ सर्ग में कवि ने 'परा आनन्दयी' के प्रवेश के रूप में इन्दिरा के जन्म का तथा दोहद वर्णन एवं कश्मीर के सौन्दर्य का वर्णन सप्तम् सर्ग में वर्णन किया गया है। इसके बाद के सर्गो में भारत की ग्राम लक्ष्मी, जवाहर–कमला के प्रयाग लौटने, भारत के स्वतंत्रता आंदोलन, सत्याग्रह, राष्ट्रध्वज का वर्णन है। कमला की अवस्थता एवं उनके दिवंगत होने की घटना का वर्णन है। मोतीलाल एवं स्वरूपरानी की अस्वस्थता, इन्दिरा का फिरोज के साथ विवाह का वर्णन एवं राजीव के रूप में पुत्र प्राप्ति का वर्णन मिलता है। मोतीलाल के निधन के वर्णन के बाद सभी का गॉधी जी के नेतृत्व में आंदोलन करने का अन्त में स्वतंत्रता प्राप्ति तथा देश के विभाजन का वर्णन प्राप्त होता है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'स्वातन्त्र्यसंभवम्' की प्रासंगिकता

स्वतन्त्रतासंग्राम की ऐतिहासिक कथावस्तु को माध्यम बनाकर कवि ने 'स्वातन्त्र्यसम्भवम्' नाम एक वृहत् महाकाव्य की रचना 28 सर्गो में की है। यह सम्पूर्ण महाकाव्य उदात्त एवं देशभक्ति की भावना को प्रस्तुत करता है। कथावस्तु के महत्व, उसके सुव्यवस्थित गठन, मार्मिक स्थलों के सरस वर्णन, विविध मनोभावों की सरस एवं प्रभावोत्पादक अभिव्यंजना, पात्रों के चरित्र के प्रभावशाली चित्रण के साथ ही साथ प्राकृतिक दृश्यों के स्वाभाविक एवं रोचक

वर्णन ने इस महाकाव्य के महत्त्व को बढ़ाया है। इस महाकाव्य में अलंकारों का उपयुक्त एवं स्वाभाविक प्रयोग, प्रसंगानुसार छन्दों का प्रयोग कवि की उत्कृष्ट शैली को अभिव्यंजित करता है। देशभक्तों के वैदुष्यपूर्ण अभिव्यक्ति ने काव्य में गुरूता एवं गाम्भीर्य का अभिवर्धन किया है। भारतीय संस्कृति का वर्णन करने वाला यह महाकाव्य सामान्य पाठकों के अन्तःकरण में सरलता प्रविष्ट होने में सक्षम नहीं है। इस महाकाव्य के द्वारा कवि ने अपना पाण्डित्य प्रदर्शित किया है।

डॉ0 द्विवेदी की रचना समसामयिक है। कवि ने अपने महाकाव्य में तत्कालीन हृदयविदारक घटनाओं का वर्णन किया है। कवि ने भारत की पूर्व समृद्धशीलता का वर्णन अत्यन्त कुशलता से किया है। विदेशियों के शासनकाल में भारतीयों की बढ़ी हुई चारित्रिक क्षति को उजागर किया गया है। भारतीयों की अनुशासन प्रियता तथा उनके ऊपर हुए अत्याचारों का मार्मिक चित्रण करने में कवि को सफलता मिली है। कवि ने जनाक्रोश में समाज की आज की स्थिति तथा मानव प्रवृत्ति का व्यक्त किया है।

कुछ स्थानों पर भाषा सरल एवं मनोरम है। काव्य के अधिकांश भाग में भारतीय संस्कृति की काव्यात्मक झलक देखने को मिलती है। कहीं–कहीं कवि की शैली व्याख्यागम्य है।

4.2 अभिराज डॉ0 राजेन्द्रमिश्र

4.3.1 कवि परिचय

स्वतंत्रता के बाद संस्कृत साहित्य की मूर्धन्य प्रतिभाओं में ''अभिराज'' राजेन्द्र मिश्र का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सरस्वती के वरदपुत्र संस्कृत की कई विधाओं में जीवन्तता एवं नवचेतना के प्रतीक स्वरूप जाने जाते हैं। डॉ0 मिश्र का संस्कृत, हिन्दी एवं भोजपुरी पर समान अधिकार है। डॉ0 मिश्र का जन्म जौनपुर (उ0प्र0) के द्रोणीपुर ग्राम में 26 दिसम्बर, 1942 को हुआ था। इनका परिवार सनातन धर्मावलम्बी ब्राह्मण परिवार है। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा–दीक्षा द्रोणीपुर ग्राम में हुई और उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हुई। उच्च

शिक्षा प्राप्त कर डॉ0 मिश्र ने लगभग 24 वर्षो तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में अध्यापन कार्य किया। बाद में डॉ0 मिश्र हिमालय विश्वविद्यालय शिमला में संस्कृत विभाग में आचार्य एवं अध्यक्ष पद पर आसीन रहे। डॉ0 मिश्र ने सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति के गरिमामय पद को भी सम्भाला। सम्प्रति डॉ0 मिश्र शिमला में निवास करते हैं।

एक लोकप्रिय विद्वान, प्राध्यापक, अध्यवसायी–शोधकर्ता तथा जन्मजात प्रतिभाशाली कवि के रूप में डॉ0 मिश्र ने शिक्षा जगत् में असाधरण प्रतिष्ठा प्राप्त की है।

अभिराज राजेन्द्र मिश्र को काव्य–सर्जना की नैसर्गिक प्रतिभा, काव्यानुराग एवं वैदुष्य अपने पितामह स्वर्गीय पण्डित रामानन्द मिश्र एवं पितृव्य प्रो0 डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र (भूतपूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) से विरासत के रूप में प्राप्त हुई है।

4.3.2 कर्तृत्व

डॉ0 मिश्र मूलतः कवि हैं। संस्कृत, हिन्दी एवं भोजपुरी में उन्होंने अनेक रचनाएँ की हैं। संस्कृत में रचित कुछ प्रसिद्ध रचनाएँ निम्नलिखित हैं–

1. महाकाव्य –जानकीजीवनम्, वामनावतरणम्
2. खण्डकाव्य –आर्यान्योक्तिशतकम्, नवाष्टकमालिका, मृगांकदूतम्, पराम्बाशतकम्, शताब्दीकाव्यम्, चौरशतकम्
3. नाटिका –प्रमद्वरा, विद्योतमा
4. एकांकीसंग्रहः –नाट्यपंचगव्यम्, नाट्यपंचामृतम्, चतुष्पथीयम्, रूपविंशतिका, रूपरूद्रियम्।
5. गीतसंग्रह –वाग्वधूटी, मृद्वीका, श्रुतिम्भरा।
6. कथाग्रंथ –अभिनवपंचतन्त्रम्, इक्षुगन्धा, रागंडा।
7. कोशकाव्य –अभिराजसप्तशती।
8. छन्दशास्त्र –छन्छोऽभिराजीयम्।
9. इतिहास –काव्यतरंगिणी, इण्डोनेशिया की भाषा में संस्कृत साहित्य का इतिहास।

10. अनुवाद —जावी रामायण का हिन्दी रूपान्तरण।

लगभग 40 काव्यों के अतिरिक्त 500 से अधिक कविता, कहानी, लेख संस्मरण, रिपोतार्ज, यात्रा विवरण तथा शोध–निबन्ध देश की विभिन्न मानक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। इनके कथा संग्रह ''इक्षुगन्धा'' पर 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और 'जानकीजीवनम्' महाकाव्य पर के0के0 बिरला फाउण्डेशन का 'वाचस्पति–पुरस्कार' प्राप्त हुआ है। 1972 से 1982 के बीच उत्तर प्रदेश सरकार ने इन्हें 8 बार विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित किया है। इनकी कई कृतियों को उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इनका जीवन अनेक अभावों, विसंगतियों के मध्य स्वयं अपना मार्ग प्रशस्त करता है। डॉ0 मिश्र अपने निश्छल व्यक्तित्व के कारण सर्वप्रिय हैं।

डॉ0 मिश्र प्रणीत ''जानकीजीवनम्'' महाकाव्य इक्कीस सर्गो में विभक्त हैं। इसका प्रकाशन इलाहाबाद के वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है। इस महाकाव्य का पूर्वार्द्ध 1983 में ही प्रकाशित हो गया था। इस पूरे महाकाव्य में 692 श्लोक हैं। डॉ0 मिश्र द्वारा प्रणीत दूसरे महाकाव्य 'वामनावतरणमहाकाव्य' में 17 सर्ग तथा 875 श्लोक हैं। यह महाकाव्य मूलतः भागवत–कथा पर आधारित है। यह महाकाव्य 17 छन्दों में निबद्ध है।

4.3.2.1 महाकाव्य

4.3.2.1.1 जानकीजीवनम्

कवि अपनी इस रचना के माध्यम से निष्पाप जानकी को लांछित करने वाले समाज को अपराधी मानता है। कवि का मानना है कि वैदेही को अपराधी मानकर सजा देने के स्थान पर यह लोक (समाज) ही दण्डित किया जाना चाहिए। इस महाकाव्य की प्रेरणा कवि को मुख्यतया आदिकवि वाल्मीकि रामायण से प्राप्त हुई है। किन्तु यह सम्पूर्ण महाकाव्य कवि ने मौलिक एवं स्वतंत्र चिन्तन का प्रतिफल है। कवि ने सामयिक युगबोध को इस महाकाव्य का आधार बनाया है। फलतः उसी के आधार पर कथा का विन्यास है।

अयोनिजा सीता के आविर्भाव के साथ कथा का प्रारंभ होताहै। अवर्षण के कारण प्रजाजन की पीड़ा से व्याकुल राजा जनक के द्वारा सुवर्ण हल चलाते ही धरती से प्रकाश पुंज के रूप में एक कन्या पृथ्वी के गर्भ से प्रकट होती है, वही सीता कहलाती है। इसके बाद प्रभूत मात्रा में वर्षा होती है। 9 सर्गो तक में सीता की शैशवावस्था, यौवनावस्था, राघवानुराग, पूर्वराम, स्वयंवर, ससुरालगमन, वधू बनकर अयोध्या में राजभवन में प्रवेश तथा उनकक जीवनवृत्त का पूरे राजवैभव के सुख–आनन्द में वर्णन किया गया है। दशम सर्ग का नाम 'वनवास' रखा गया है। इस सर्ग में माँ सरस्वती द्वारा मन्थरा के विचारों में प्रवेश वर्णित है तथा कैकेयी द्वारा राम के लिए चौदह वर्षों के वनवास की माँग कराई है। एकादश सर्ग में सीता का रावण द्वारा अपहरण करने की योजना का वर्णन, रावण द्वारा मारीच से सहायता से माँगना, रावण का साधु वेष धारण करना, सीता के सम्मुख जाना, सीता की फटकार, सीताहरण, रावण का जटायु से युद्ध तथा जटायु का क्षत–विक्षत होकर भूमि पर गिरने का वर्णन किया गया है। द्वादश सर्ग का नाम कवि ने 'अशोका वनाश्रयः' रखा है। इस सर्ग में सीता का चित्रण कवि ने तपस्विनी के रूप में किया है। कवि ने सीता को रावण के विलास वन के पिंजरे में बन्द की गई शुकी के समान अवरूद्ध चित्रित किया है। त्रयोदश सर्ग का नामकरण कवि ने उसमें वर्णित घटना के आधार पर ''हनुमत्प्राप्ति'' रखा है। इस सर्ग में रावण द्वारा सीता हरण जटायु का राम के द्वारा दाह–संस्कार, सुग्रीव के साथ मित्रता, बाली–वध, सुग्रीव व अन्य वानरों का सीता की खोज में निकलना, सम्पाति द्वारा सीता–हरण की घटना को जानकर, हनुमान का लंका में प्रवेश, अशोक वाटिका में सीता का हनुमान द्वारा दर्शन करना, अशोक वन तक आने की पूरी घटना सीता को बताकर उन्हें सांत्वना देना, पहचान के लिए राम की मुद्रिका सीता को देना तथा राम को धैर्य प्रदान करने के लिए सीता को दी हुई चूड़ामणि ले जाने का वर्णन किया गया है। इसी सर्ग में हनुमान द्वारा अशोक वाटिका का विध्वंस, हनुमान का बंदी बनाया जाना तथा हनुमान द्वारा लंका दहन की घटना भी वर्णित है। चतुर्दश सर्ग का नाम 'लंका–विजय' है। इस सर्ग में हनुमान द्वारा राम को सीता के खोज का सम्पूर्ण वृत्तान्त तथा हनुमान द्वारा राम को सीता–प्रदत्त चूड़ामणि देने की घटना भी वर्णित है। इस सर्ग में राम का सुग्रीव की सेना के साथ लंका की ओर प्रस्थान, विभीषण की शरणागति, सीता का विलाप, मेघनाद की तपस्या तथा उसका वध, राम–रावण युद्ध तथा रावण–वध आदि घटनाएँ वर्णित हैं। पंचदश

सर्ग में सीता की अग्निपरीक्षा की घटना वर्णित है। अतः इस सर्ग का नाम 'अग्नि परीक्षा' रखा गया है। षोडश सर्ग में रामजी का राज्याभिषेक वर्णित होने के कारण इस सर्ग का नाम भी 'राज्याभिषेक' है। इस सर्ग में अग्निपरीक्षा के बाद रामादि का पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या–गमन तथा मार्ग में पूर्व दृष्ट स्थलों का वर्णन प्राप्त होता है। भरद्वाज मुनि का दर्शन भी इस सर्ग में वर्णित है। सप्तदश सर्ग का नाम कवि ने 'जनापवाद' रखा है। इस सर्ग में अयोध्या में राम के आने के बाद की घटनाएँ वर्णित हैं। इस सर्ग में अयोध्या में राम के आने के बाद की घटनाएँ वर्णित हैं। राज्य की सुव्यवस्था, सीता की गर्भावस्था, दुर्मुख का आगमन, राम का शोक तथा लक्ष्मण द्वारा कुलगुरू वशिष्ठ को समस्त घटनाओं से अवगत कराने की घटना वर्णित की गई है। अष्टादश सर्ग 'अपवाद निर्णय' में वशिष्ठ द्वारा सभा का आयोजन तथा अपवाद निराधार सिद्ध होने की घटना, धोबी की क्षमा–याचना आदि घटनाएँ वर्णित हैं। एकोनविंशति सर्ग का नाम 'लवकुश' के जन्म का वर्णन होने के आधार पर 'लवकुशोदयः' रखा गया है। इस सर्ग में कवि ने अपनी मौलिकता दर्शाते हुए लव–कुश के जन्म को अयोध्या में ही दर्शाया है। अनन्तर सीता का पुत्रों के साथ वाल्मीकि आश्रम में प्रस्थान वर्णित है। सीता का आश्रम–गमन पुत्रों की शिक्षा–दीक्षा के कारण है। यह सम्पूर्ण सर्ग नूतन कथा पर आधारित है। इसलिए स्वयं कवि ने अपने काव्य को 'नूतन घटनाओं तथा नूतन कथा–परम्परावाला' कहा है। विंश सर्ग में अश्वमेघ यज्ञ का वर्णन है। इस सर्ग में राम सुवर्णमयी सीता की मूर्ति के साथ नहीं अपितु अपनी अर्धांगिनी–विदेहनन्दिनी के साथ यज्ञ का संकल्प करते हैं। अंतिम एकविंश सर्ग में कुश तथा लव द्वारा रामकथा का गायन कवि ने वर्णित किया है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जानकीजीवनम् की प्रासंगिकता

प्रस्तुत महाकाव्य में कवि ने अपनी सहज एवं मौलिक चिन्तन शक्ति द्वारा सीता की वयःसन्धि का मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है। शैशवास्था का वर्णन लम्बा होने पर भी रस की न्यूनता प्रकट नहीं करता है। श्रृंगार रस का वर्णन कवि ने संयमित ढंग से किया है। कवि ने प्रत्येक स्थल पर मध्यम मार्ग का अवलम्बन लिया है। सभी पात्रों का चित्रण सुरूचिपूर्ण है। सीता का वर्णन कवि ने आठ रूपों में किया है। प्रत्येक अवस्था का चित्रण कवि ने अपूर्व नवीनता के साथ

किया है। पुष्पवाटिका का वर्णन करने में कवि की कल्पना दारिद्रयमुक्त है। सीता के लज्जाभाव का वर्णन कवि ने अत्यंत मनोरम ढंग से व्यक्त किया है।

सम्पूर्ण महाकाव्य एक विशाल राजप्रसाद के समान सुसज्जित है, जिसमें सभी उपयोगी वस्तुएँ यथास्थान सुसज्जित व अलंकृत है। कवि ने इस महाकाव्य की कथा वस्तु के साथ–साथ पात्रों का चरित्र भी बड़े ही मार्मिक ढंग से उकेरा है। कवि ने हृदय की अन्तर्वेदना सीता के निष्पाप चरित्र को कलंकित होता देख धधक उठती है। सीता के करूण–विलाप के रूप में स्वयं कवि का हृदय ही विलख उठा है। पन्द्रहवें सर्ग में सीता की करूण–वेदना मुखरित हुई है तो वहीं दूसरी ओर सीता का अपमानित हृदय भी स्वरयुक्त हो उठा है। आधुनिक युग की स्त्री की भांति ही कवि ने यहाँ पर सीता का व्यक्तित्व दर्शाया है। सीता कहती है–अपने सामाजिक यश के लिए इतनी आसक्ति और (पत्नीभूत), मेरे उदात्त चरित्र की ऐसी अमर्यादित लांछना! हे राघव! किस कारण से आप ऐसा कर रहे हैं? आप तो तत्त्वज्ञ हैं। निश्चय ही पति होने के ऐंठ (दुरभिमान) से आप पत्नी का (साधिकार) हनन कर रहे हैं। (15/61)

कवि ने अपना पक्ष अत्यन्त युक्तिपूर्ण ढंग से किया है। सम्पूर्ण महाकाव्य में पग–पग पर कवि अपने पूर्ववर्ती कवियों से प्रभावित सा जान पड़ते हैं। इस महाकाव्य का मुख्य रस वीर है तथा अन्य रस श्रृंगार, भयानक करूण तथा शान्त है। कवि ने अलंकारों का तथा शब्दों के चमत्कार का प्रयोग नहीं किया है। काव्य की मनोहरता एवं उसकी गतिशीलता आकर्षित करती है। इस महाकाव्य में अपने वैदुष्य से कवि ने ''मैथली'' एवं ''स्यन्दिका'' नामक छन्दों की सर्जना की है। सूक्तियों के प्रयोग से काव्य में सौन्दर्य की वृद्धि हुई है।

डॉ० मिश्र द्वारा रचित 'जानकीजीवनम्' महाकाव्य प्रारंभ से ही कवित्तपूर्ण है। श्रीराम तथा सीता के चरित्र को उन्होंने अत्यन्त पवित्रता एवं कमनीयता से अंकित किया है। इस महाकाव्य की जड़ कालिदास की कविता को माना जा सकता है, तो इसका स्कन्ध प्रदेश श्री हर्ष की वाणी है, जयदेव के संस्कृत गीत इस कविता का रूपी वृक्ष के पर्णसमूह है तो विल्हण की सूक्तियाँ इसके फूल हैं तथा पण्डितराज जगन्नाथ के कविता की गरिमा ही इस काव्य का एकमात्र

पुण्य फल है। इन सबको इस काव्य के संदर्भ में चरितार्थ माना जा सकता है। यह शास्त्रीय शैली का बीसवीं शतीं का उत्कृष्ट काव्य है।

वामनावतारम्

अभिराज डॉ० राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित ''वामनावतारम् महाकाव्य'' की कथा वामन–अवतार पर आधारित है। इस महाकाव्य का मूल हमें भागवत–पुराण में प्राप्त होता है। इस महाकाव्य की कथा को कवि ने 17 सर्गों में विभक्त किया है। इसमें 875 श्लोक हैं तथा इसमें विभिन्न छन्दों का प्रयोग किया गया है। इस महाकाव्य की रचना कवि ने इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में कविवंश का वर्णन है तथा सर्गों में – बलिप्रताप, अमरावती पर विजय, बलिप्रतिष्ठा, अदिति–पंचोव्रत, वामन–अवतार बलिनिग्रहाभियान, भगवान वामन का बलि से तीन पग पृथ्वी माँगना, शुक्राचार्य द्वारा उन्हें रोका जाना, बलि का अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहना, भगवान वामन का विराट रूप प्रदर्शन, बलि का बाँधा जाना, वामन का ज्ञानोपदेश, ऋत्तमहात्म्य, शुक्राचार्य की शरणागति और अन्त में देव–साम्राज्य की पुनः प्रतिष्ठा आदि की घटनाएँ वर्णित हैं। इन सभी घटनाओं का मूल कवि ने भागवत के अष्टमस्कन्ध–15वें अध्याय से 23वें अध्याय से लिया है। वस्तुओं के वर्णन के लिए कवि से भागवत में वर्णित नन्दन वन तथा अमरावती नगरी के सौन्दर्य वर्णन में पर्याप्त कल्पनाशक्ति का प्रयोग किया है।

इस महाकाव्य में राजा बलि के उदात्त चरित्र का वर्णन है। वामन द्वारा राजा बलि से पृथ्वी की तीन पग रूपी भिक्षा माँगकर अपने बड़े भाई इन्द्र को देने का वर्णन इस काव्य में किया गया है। इन्द्र का राज्य उनके शत्रुओं द्वारा छीन लिया गया है। इस महाकाव्य के नायक शचीपति इन्द्र हैं। इन्द्र धीरोदात्त नायक के रूप में इस काव्य में प्रतिष्ठापित किये गये हैं। उनके गए हुए स्वर्ग–राज्य की प्राप्ति ही इस काव्य का फल है। यहाँ वर्णन प्राप्त होता है कि स्वर्ग में इन्द्र का राज्य पुनः स्थापित होने पर सर्वत्र सुसम्पन्नता दिखाई देने लगी है। आसुरी राज्य और आसुरी वृत्ति का नाश हो जाने से स्वर्ग में सर्वत्र महोत्सवों और संगीत की ध्वनि पुनः सुनाई देने लगी है। इस काव्य का अंगीरस शान्त है। अन्य रसों में भय, करूण, श्रृंगार का यथास्थान चित्रण किया गया है।

निष्कर्ष रूप में, हम कह सकते हैं कि पौराणिक शैली में निबद्ध इस काव्य में अलंकारजन्य चमत्कार तथा काव्य–गुण सर्वथा निबद्ध हैं। इसकी भाषा सरल एवं प्रवाहमयी है। प्रसाद गुण के कारण काव्य आकर्षक एवं मनोरम है। बीसवीं शताब्दी की जनतान्त्रिक प्रवृत्तियों को भलीभांति 17वें सर्ग में कवि ने दर्शाया है। उन्होंने अत्यन्त सुन्दर ढंग से राज्य कार्य का विभाजन कर प्रत्येक कार्य को कार्य के अनुरुप दक्ष अधिकारी देवों को सौंपने का वर्णन किया है। यह महाकाव्य देवचरित काव्यों की पंक्ति में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस काव्य के लिए कवि को 'वाचस्पति पुरस्कार' के0के0 बिड़ला फाउण्डेशन द्वारा प्रदान किया गया।

4.4 डॉ0 रामकरण शर्मा

कवि परिचय

डॉ0 रामकरण शर्मा का जन्म बिहार के सारन जिले के शिवपुर नामक स्थान पर 1927 में हुआ था। अनेक कालजयी रचनाओं के द्वारा आपने अमरकीर्ति होकर 18 दिसम्बर, 2018 में अपना शरीर छोड़ा। रामकरण शर्मा जी महान राष्ट्र सेवक कामेश्वर प्रसाद शर्मा के पुत्र हैं। प्रारंभ से आपकी रुचि अध्ययन थी। आपने पटना विश्वविद्यालय से संस्कृत और हिन्दी दोनों विषयों में अध्ययन किया। पारम्परिक एवं आधुनिक दृष्टियों से आपने संस्कृत का अध्ययन किया। वेदान्त, नव्यव्याकरण में शास्त्री तथा साहित्य में आचार्य की उपाधि भी आपने प्राप्त की। पी–एच०डी० की उपाधि आपने प्रसिद्ध भारोपीयभाषाविद श्री एमेनिउ (Murry B. E,ermeau) के निर्देशन में बारक्ले, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया से प्राप्त की। आपको संस्कृत और अंग्रेजी दोनों पर समानाधिकार था आपने दोनों ही भाषाओं में ही रचनाएँ कीं। मौलिक काव्य रचना के अतिरिक्त आप अनुवाद, आलोचनात्मक ग्रन्थ प्रणयन में भी प्रवृत्त हुए। संस्कृत काव्यों की रचना करते हुए आपने अनेक महत्वपूर्ण पदों के गूढ़ दायित्वों का भी निवर्हन किया। आप रॉयल एसियाटिक सोसायटी (लंदन) के फेलो और अमेरिकन ओरिण्टल सोसायटी के सदस्य रहे। आप बिहार सिविल सेवा के अधिकारी थे। सरकारी सेवा के साथ–साथ अनेक शैक्षणिक संस्थानों के पदों को भी आपने अलंकृत किया। 1961–1970 तक भारत सरकार में आप विशेष सचिव (संस्कृत), 1970–1974 तक राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के फाउण्डर डायरेक्टर,

1974–1980 तक कामेश्वर सिंह दरभंगा विश्वविद्यालय के सह शिक्षा सलाहकार तथा 1984–1985 तक सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर रहें। आप शिकागो, कोलम्बिया तथा कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में भी प्रोफेसर रहे। 2006 से आप दिल्ली में रहकर आप प्रतिवर्ष कई महीनों तक जाकर विदेश में अध्यापन करते रहे।

विभिन्न विधाओं में अनेक कालजयी रचनाओं के लिए आपको अनेक सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए। 1989 में आपको साहित्य अकादमी पुरस्कार, भारती भाषा परिषद् पुरस्कार, दिल्ली से संस्कृत अकादमी पुरस्कार तथा अत्यन्त प्रतिष्ठित पुरस्कार, 'राष्ट्रीय पुरस्कार' प्राप्त हुए। संस्कृत साहित्य एवं भाषा में रचनाओं के माध्यम से संस्कृत के प्रचार प्रसार के लिए 2005 में 'कृष्ण कान्त हेण्ड्की मेमौरियल' एवार्ड तथा 2004 में 'वाचस्पति सम्मान' से आपको सम्मानित किया गया।

4.4.2 कर्तृत्व

रामकरण शर्मा जी लगभग साठ वर्षों से संस्कृत साधना में संलग्न रहे। बाल्यावस्था से ही शर्माजी ने कविता लिखना प्रारंभ कर दिया था। साहित्यिक रचनाओं के अतिरिक्त आपने अनेक इण्डियन मेडिसिन, एपिक्स तथा पुराणों से सम्बन्धित पुस्तकों का अनुवाद एवं संपादन भी किया है। इण्डोलॉजी के क्षेत्र में भी आपके महत्वपूर्ण शोधपरक आलेख प्रकाशित हुए हैं। अंग्रेजी में भी आपकी रचनाएँ प्रकाशित हैं–

- Elements of Poetry in the Mahabharata-
- Anthology of Medieval Sanskrit Literature included in volume one of Panikers anthology of Medieval Indian Literature
- Research in Indian and Buddhist Philosphy: Essays in Honour of Professor Alese Wayman

अंग्रेजी में प्रकाशित आपकी रचना Elements of Poetry in the Mahabharata को संस्कृत साहित्य की आलोचनात्मकता के क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। 1955 ई0 में इनके 'मदालसा' नामक काव्य का प्रथम सर्ग प्रकाशित हुआ। इसके बाद से निरन्तर इनकी रचनाएँ

प्रकाशित हुई। इनकी संस्कृत कविताएँ 'संस्कृत–प्रतिभा' तथा अन्य पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुई। इनके दो उपन्यास भी संस्कृत गद्यकाव्य के रुप में है। सीमा गद्यकाव्य (उपन्यास) के प्रकाशन के बाद आठ वर्षों में ही – शिवसुकीयम्, सन्ध्या, पार्थवशतकम् तथा दीपिका काव्यसंग्रह प्रकाशित हुए। 'सन्ध्या' रचना पर ही इन्हें 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। इनकी कविताएँ प्रायः आर्या छंद में हैं। इस छोटे से छन्द में उनकी भावनाएँ समाहित हैं। इन काव्य–संग्रहों में छोटी–छोटी कविताओं के साथ कुछ लम्बी कविताएँ भी हैं। 'शिवकीयम्' में 290, 'सन्ध्या' में 400, 'वीणा' में 263 तथा 'दीपिका' में 106 कविताएँ हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से लगभग प्रत्येक वर्ष उनकी एक–दो काव्य संग्रह प्रकाशित होते रहे हैं। 'मानसी' 2000 ई० में 'सिनीवाली' 2003 में, 'राका' 2004 में 'कविता' 2005 में 'सुधर्मा' 2008 में शोनुष 2009 में, 'सर्वसहा' 2010 में तथा 'वन्दना' 2011 में प्रकाशित प्रमुख रचनाएँ है।

रामकरण शर्मा जी भारतीय मूल्यों, भारतीय मनीषा, भारतीय परम्परा के प्रति आस्थावान रहे। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से वर्तमान युग में उत्पन्न हो रही विभिषिका को दिखाया है। सामाजिक मूल्यों, नैतिकता के स्खलन पर गभीर चिंतन किया है। तथा आधुनिक समाज की दशा और दिशा पर ही कविताओं के माध्यम से विचार प्रगट किया है। आधुनिक समाज में घट रही अनेक मार्मिक घटनाओं पर उन्होंने अपने भाव प्रगट किये हैं। 'सुधर्मा' काव्यसङ्कलन में उन्होंने निठारीकांड पर भी कविता लिखी है। शर्मा जी आज मनुष्य को मात्र कामना के वशीभूत होकर विध्वंस के मार्ग पर चलता हुआ पाते हैं। 'वीणा' नाम काव्यसंङ्कलन में लिखते हैं कि नवोढ़ा पत्नी के वश में जिस प्रकार मनुष्य हो जाता है. उसी प्रकार आज का मनुष्य कामना के वश में है–

अपि कामनाऽपराध्यति जनयन्ती विविदिषाः पिपासाश्च ।
अपि जननकाल एवं वन्ध्या सा कृष्णसर्पीव? ।।
नेदं कथमपि युक्तं नियतेः परमा हि कामना शक्तिः ।
सा हि नवोढेव चला संस्कार्या सुप्रणयनीत्या ।।

वीणा, पृष्ठ

'सर्वसहा' की पहली कविता 'निन्दामृतम्' में शर्मा जी निंदा की विविध छवि को दिखाते हैं। शर्मा जी ने जीवनदर्शन और चिन्तन को सहज और बोधगम्य रूप में पाठक के समक्ष इस प्रकार कविता के द्वारा प्रस्तुत किया है, जैसे वह स्वयं की अनुभूति प्रतीत होता है। आधुनिक जीवन की विडम्बना को उन्होंने 'न गवाक्षमपावृण' कविता के द्वारा प्रतीकात्मक रूप से प्रगट किया है। आधुनिक जीवन के दोहरे मानदण्डों और खोखलेपन पर अपने काव्यसंकलन 'वीणा' की कविता में करारा व्यंग्य किया है। शर्मा जी की कविताओं में प्रतिकात्मकता के साथ–साथ उत्कृष्ट बिम्बविधान भी दिखाई पड़ता है। शर्मा जी की काव्य प्रणयन शैली विशिष्ट एवं अद्भुत है। सरल, सुबोध भाषा के पक्षधर के रुप में उन्होंने कहीं भी अपने काव्य में भाषा अथवा अर्थ की जटिलता नहीं आने दी है। जटिल भावों को भी सहजता से प्रकट कर देना उनकी विशेषता रही है।

4.5 अभ्यास–प्रश्न

1. आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी की रचना उत्तररामचरितम् नामक महाकाव्य की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।
2. स्वातंत्र्यसम्भवम् महाकाव्य की आधुनिकता को स्पष्ट कीजिए।
3. प्रो0 राजेन्द्र मिश्र के महाकाव्यों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।
4. 'वामनचरितम्' महाकाव्य की कथावस्तु संक्षेप में बताइए।
5. डॉ0 रामकरण शर्मा के कर्तृत्व पर प्रकाश डालिए।

4.6 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत–वाङ्मय का बृहद् इतिहास, सप्तम खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, प्रकाशक – उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ
2. अभिराज – वाङ्गमय दर्पण – सम्पादक – प्रो0 अनिल प्रताप गिरि
3. जानकीजीवनम्, लेखक – प्रो0 राजेन्द्र मिश्र

इकाई–05 प्रमुख खण्डकाव्य, गीतिकाव्य एवं कवि परिचय - I

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 खण्डकाव्य का लक्षण

5.2.1 खण्डकाव्य का आधुनिक लक्षण

5.2.1.1 प्रो0 राजेन्द्र मिश्र कृत् खण्डकाव्य का लक्षण

5.2.1.2 डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी कृत् खण्डकाव्य का लक्षण

5.3 गीतिकाव्य

5.4 भट्ट मथुरानाथ शास्त्री

5.4.1 कवि परिचय

5.4.2 कर्तृत्व

5.5 डॉ0 बच्चूलाल अवस्थी

5.5.1 कवि परिचय

5.5.2 कर्तृत्व

5.6 रमाकान्त शुक्ल

5.6.1 कवि परिचय

5.6.2 कर्तृत्व

5.6.2.1 लघुकाव्य

5.7 आचार्य जगन्नाथ पाठक

5.7.1 कवि परिचय

5.7.2 कर्तृत्व

5.7.2.1 गजल

5.8 अभ्यास–प्रश्न

5.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

5.0 प्रस्तावना

महाकाव्य के लक्षण को जानने–समझने के बाद इस इकाई में हम खण्डकाव्य के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे। जैसा कि नाम से ही प्रतीत हो रहा है कि जब किसी भी वर्ण्य–कथावस्तु के समग्र का वर्णन ना करके किसी एक खण्ड का वर्णन काव्य में किया जाए, तो वह खण्डकाव्य होता है। खण्डकाव्य का लक्षण जानने के साथ ही इस इकाई में हम कुछ कवियों का तथा उनके द्वारा प्रणीत खण्डकाव्यों का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।

5.1 उद्देश्य

- खण्डकाव्य का लक्षण जान सकेंगे।
- प्राचीन आचार्यों का खण्डकाव्य का लक्षण जान सकेंगे।
- आधुनिक आचार्यों द्वारा दिए गए खण्डकाव्य के लक्षण को जान सकेंगे।
- कवियों का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- कतिपय खण्डकाव्य का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 खण्डकाव्य का लक्षण

साहित्यदर्पणकार ने सर्वप्रथम खण्डकाव्य की परिभाषा दी है – **'खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि यत्'।** आचार्य आनन्दवर्धन ने भी अपने ग्रन्थ ध्वन्यालोक में भी काव्य के भेदों की चर्चा की है।

5.2.1 खण्डकाव्य का आधुनिक लक्षण

पुरुषार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम से किसी एक का आंशिक वर्णन अथवा नायक के जीवन के किसी एक भाग का वर्णन किया जाता है, तो उसे खण्डकाव्य कहते हैं।

5.2.1.1 प्रो0 राजेन्द्र मिश्रकृत खण्डकाव्य का लक्षण –

कस्यचित्पुरुषार्थस्य वर्णनन्तु यदांशिकम्।

जीवनस्याथवा नेतुः खण्डकाव्यं तदुच्यते।।

खण्डकाव्यमिदञ्चैव स्वेतिवृत्तानुरोधतः।

विविधान्यभिधानानि पृथगर्थानि गच्छति।।

जिस प्रकार समग्र जीवन का वर्णन करने वाला काव्य महाकाव्य कहलाता है, उसी प्रकार से जीवन के किसी एक अंग या एक घटना का वर्णन करने वाला काव्य खण्डकाव्य कहलाता है। अलग–अलग अर्थ के अनुरूप उसके नाम में भी विविधता होती है। जैस – दूत का प्रसंग काव्य होने पर दूतकाव्य, संदेश का प्रसंग होने पर – संदेशकाव्य, गीत तत्त्व की प्रधानता होने पर गीतिकाव्य, इसी प्रकार यात्रा वर्णन होने पर विमानकाव्य और यात्राकाव्य आदि। ये सभी खण्डकाव्य में ही आते हैं।

5.2.1.2 डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत खण्डकाव्य का लक्षण –

डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी का लक्षण भी उसी भाव पर आधारित है कि जीवन के एक देश का निरूपण करने वाला काव्य खण्डकाव्य कहलाता है –

जीवनस्यैकदेशनिरूपकं खण्डकाव्यम्।

डॉ0 त्रिपाठी ने भी खण्डकाव्य के विषयों के अनुरूप इसके अनेक भेद बताए हैं – संघात, स्तोत्रकाव्य, लहरीकाव्य, सन्देशकाव्य, अन्यापदेशकाव्य, नीतिकाव्य, गतिकाव्य, रागकाव्य आदि।

देवस्तुतिपरक खण्डकाव्य होने से उसे स्तोत्रकाव्य तथा सौ से अधिक पद्य होने पर उसे शतककाव्य की श्रेणी में रखा जाता है। विषय–विशेष को लेकर लिखा गया काव्य संघात कहलाता है। जैसे – कालिदास का ऋतुसंहार। इसमें 6 ऋतुओं का वर्णन किया गया है। स्तोत्रकाव्य में इष्टदेव की स्तुति की जाती है। जैसे – पुष्पदन्त का शिवमहिम्नस्तोत्र। नीतिकाव्य का उदाहरण भतृहरि का नीतिशतक है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विदेश–यात्राओं का प्रचलन निरन्तर बढ़ने लगा। इसी क्रम में अनेक संस्कृत विद्वानों, कवियों एवं मनीषियों ने विमान द्वारा यात्राएँ की तथा उनमें से कुछ कवि–कर्म निपुण सहृदयों ने विमानयात्रा को आधार बनाकर रचनाएँ कीं। इनमें से डॉ0

राधावल्लभ त्रिपाठी ने धरित्रीदर्शनम् तथा डॉ0 राजेन्द्र मिश्र ने विमानयात्राशतकम् नामक विमानकाव्य का प्रणयन किया है।

5.3 गीतकाव्य

स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद से नई विधा का विकास हुआ जिसे गीतिकाव्य कहा गया। गीति, गीत, गेय अथवा गान शब्द संस्कृत में प्राचीनकाल से ही उपस्थित हैं। 'गेय' शब्द 'गीति' का पर्याय है। जब किसी काव्य में गेयता होती है तो उसे गीतिकाव्य कहा जाता है। संस्कृत काव्यशास्त्रीय समीक्षा में गीता को कोई विशिष्ट काव्य विधा नहीं माना गया है। पाश्चात्य विद्वानों ने गीत–गोविंद को अपने अंग्रेजी गीतकाव्य के समान समझ कर उसे गीतिकाव्य की संज्ञा दे दी। उसी आधार पर भारतीय समीक्षकों ने खण्डकाव्य और गीतिकाव्य को पर्याय मान लिया।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र का मानना है कि उनका गीतकाव्य से अभिप्राय 'गीततत्त्व–सेवलित काव्य' से है न कि कीथ–सम्मत तकनीकी गीतकाव्य से। इस प्रकार प्रो0 मिश्र ने गीतिकाव्य को अलग से स्थान न देकर उसे मुक्तक या फिर खण्डकाव्य ही माना है।

5.4 आचार्य भट्ट मथुरानाथ शास्त्री

5.4.1 कवि परिचय

आचार्य भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का जन्म साहित्यकारों एवं शास्त्रज्ञों के वंश में हुआ था। इनके पूर्वज मुगलकाल में आन्ध्रप्रदेश से उत्तर की ओर आए। पण्डितों के इस वंश को देवर्षि की उपाधि प्राप्त थी। इन लोगों ने काशी, प्रयाग, रीवा, अनूपशहर में निवास किया। बाद में बूंदी आए। बाद में देवर्षि श्री कृष्ण भट्ट गढपहरा (सागर) में निवास करने के बाद जयपुर की राजसभा में 1975 ई0 से 1761 ई0 तक रहे। इनकी ही वंश परम्परा में मण्डन भट्ट हुए थे तथा इनके ही कुल में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का जन्म 1889 ई० में हुआ। इनके पिता का नाम द्वारिकानाथ भट्ट तथा माता का नाम जानकी देवी था। भट्ट मथुरानाथ प्रारंभ से ही अत्यन्त

मेधावी थे। शिक्षा ग्रहण करके मथुरानाथ शास्त्री जयपुर के महाराजा के संस्कृत महाविद्यालय में प्राध्यापक नियुक्त हुए। 1964 ई० में पचहत्तर वर्ष की आयु में इनकी मृत्यु हुई।

5.4.2 कर्तृत्व

संस्कृत के अतिरिक्त मथुरानाथ शास्त्री जी हिन्दी तथा ब्रज भाषा में भी काव्य रचना की है। शास्त्री जी को संगीत के साथ–साथ उर्दू, बंगाली तथा गुजराती भाषाओं का मी अच्छा ज्ञान था। शास्त्रीजी ने छः रेडियो रुपक, आधुनिक कहानी, यात्रावृत्त, ललित निबन्ध तथा एकांकी आदि विधाओं में रचनाएँ की है। गीतिकाव्य के क्षेत्र में इनकी तीन रचनाएँ आत्यधिक प्रसिद्ध हैं– साहित्यवैभवम्, जयपुरवैभवम् तथा गोविन्दवैभवम्। साहित्यवैभवम् का प्रकाशन 1930 ई० में, जयपुरवैभावन का प्रकाशन 1947 ई० में तथा गोवन्दिवैभवम का प्रकाशन 1957 ई० में हुआ था। मथुरानाथ शास्त्री जी ने घनाक्षरी कवित्त, सवैया आदि ब्रज भाषा की विधाओं की रचना संस्कृत में करके एक नवीन प्रयास किया। आपने आधुनिक संस्कृत कविता में गजल और रुबाईयों की भी रचना का प्रारम्भ किया। आपने संस्कृत रत्नाकर, भारती जैसी साहित्यिक पत्रिकाओं का बड़ी कुशलता से संपादन किया तथा काव्यमालासीरीज के सम्पादन में भी सहयोग किया। आपने रसगड्.धर, गाथासप्तशती आदि प्राचीन ग्रन्थों की टीकाएँ लिखीं। इन्होंने ईश्वरविलासः नामक स्वतंत्र खण्डकाव्य तथा पद्यमुक्तावली नामक काव्यसंग्रह की रचना की है। त्रिपुरसुन्दरी स्तवनराज नामक स्तोत्र काव्य तथा मन्जुकवितानिकुन्ज नामक कविता संग्रह प्रकाशित है। इस कविता संग्रह में साहित्यवैभवम्, जयपुरवैभवम्, संस्कृत गाथासप्तशती, संस्कृत सर्वस्वम् तथा काव्यकलारहस्यम् आदि कविताओं का संकलन है।

संस्कृत कविता में नवीन छन्दों के प्रयोग एवं नवीन भावों के बोध की दृष्टि से शास्त्रीजी बहुमूल्य योगदान दिया है। आधुनिक परिवेश तथा वर्तमान के समाज का चित्रण करते हुए उन्होंने व्यंग्य, हास्य, कटाक्ष आदि का प्रयोग किया है। शास्त्री जी के काव्य में अनुभूतियों, करुणा तथा भक्तिभाव का अत्यत सहजता से चित्रण किया गया है। गजल हो या सामान्य नगरीय चित्रण उनके काव्यों में अभिव्यक्ति की सहजता बनी रहती है।

5.5 डॉ0 बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान'

5.5.1 कवि परिचय

डॉ0 बच्चूलाल अवस्थी का जन्म सन् 1918 में उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी में हुआ था। पिता का नाम श्री बदरी प्रसाद तथा माता का नाम जुगराता देवी था। आचार्य पितामह बैजनाथ अवस्थी ने इनके नाम के साथ 'ज्ञान' को जोड़ दिया था। विभिन्न शास्त्रमर्मज्ञ तथा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। आप व्याकरणशास्त्री, दर्शनाशास्त्री, साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य एम0ए0 आदि की परीक्षाएँ आगरा से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं तथा संस्कृत पाठशाला, लखीमपुरखीरी के महाविद्यालय तथा सागर विश्वविद्यालय में अध्यापन किया तथा कालिदास अकादमी, उज्जैन में आचार्यकुल के अधिष्ठाता के पद को सुशोभित किया है।

आचार्य अवस्थी को साहित्य साधना के विभिन्न पुरस्कारों एवं सम्मानों से अंलकृत किया गया है। आपको मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा सन् 1933 में 'प्रतानिनी' के लिए प्राप्त अखिल भारतीय साहित्य पुरस्कार एवं राष्ट्रपति पुरस्कार प्रमुख हैं।

5.5.2 कर्तृत्व

आचार्य अवस्थी ने समकालीन समाज, संस्कृति एवं राजनैतिक विसंगतियों तथा विडम्बना पर कटाक्ष करते हुए आचार्य ने एकदन्तवृत्तम्, शुकवृत्तम्, दस्युशुकनीयम् का गतिः हृदयपरिवर्तनम् आदि काव्यों की रचना की है। आपकी ये भी रचनाएँ समय–समय पर शोधपत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही है। इनकी सर्वाधिक मुक्तक, लघुकाव्य या गजल रचनाएँ अप्रकाशित हैं।

'नेतृस्तवः' अवस्थीजी की प्रसिद्ध रचना है। इस काव्य के माध्यम से उन्होनें नेताओं द्वारा समाज को पीड़ित किये जाने का तथा उनकी वेदना का मार्मिक चित्रण किया है। नेता किस प्रकार अपने स्वार्थ के लिए अपने रास्ते के कॉंटों को दूर करता है और स्वयं को जनता का सेवक बताते हुए नकली ऑसू बहाता है। इस प्रकार आचार्य अवस्थी ने जनमानस की पीड़ा एवं व्यथा का यथार्थ चित्रण किया है।

हिन्दी में अनेक पाण्डियपूर्ण ग्रन्थों के अतिरिक्त इनके अब तक अप्रकाशित गन्थों में 500–500 पृष्ठों के दस खण्डों में 'भारतीय दर्शनशस्त्र बृहत्कोश' हजारों पृष्ठों को अद्वितीय बृहतकोश है

तथा पाण्डित्य और अध्ययन की व्यापकता और मौलिकता का इस शताब्दी का एक महान निदर्शन है।

अवस्थी जी की अन्योक्तिपरक या प्रतीकात्मक रचनाएँ अपनी ढंग की बेजोड़ कृतियाँ हैं। इनमें कथासंविधान की उनकी मौलिकता, कल्पना, व्यंग्य का पैनापन और आज के समाज की स्थितियों पर गहरी चुटकी देखते ही बनती है। इनकी कविताओं में शैली के वैविध्य की परिधि भी सुविस्तीर्ण है। गजलों की छोटी–छोटी पंक्तियों में सरल भाषा में गूढ़ चिन्तन व्यक्त कर जाते हैं। अवस्थी जी स्त्रोतकाव्यों में चिन्तन और भावगाम्भीर्य के अनुरुप गौडी रीति, जटिल प्रौढ़ पदावली का सटीक उपयोग करते हैं।

अवस्थी जी का 'प्रतानिनी' नामक काव्य संग्रह 1996 में प्रकाशित हुआ है। इसका सम्पादन अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने किया तथा इस पर कवि को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इस काव्य संग्रह में कुल पाँच प्रतान है। 1. स्तवकप्रतानः 2. अन्योक्तिप्रतानः 3. गजलगीतिप्रतानः 4. विरागप्रतानः तथा 5. प्रकीर्णप्रतानः। इस कृति में कवि की काव्यप्रतिभा एवं शास्त्रप्रतिभा दोनों समान रुप में अपने श्रेष्ठ रूप में नजर आती हैं।

5.6 डॉ0 रमाकान्त शुक्ल

5.6.1 कविपरिचय

डॉ0 रमाकान्त शुक्ल का जन्म 1940 ई० में उत्तर प्रदेश के खुर्जा नगर में हुआ। संस्कृत रचना के प्रति अभिरुचि आपको वंश से प्राप्त हुई थी। हिन्दी के प्राध्यापक होने पर भी आपकी प्रवृत्ति राष्ट्रभक्तिपरक संस्कृत काव्य रचना के क्षेत्र में थी।

5.6.2 कर्तृत्व

डॉ0 शुक्ल राजधानी कॉलेज, दिल्ली में हिन्दी के प्राध्यापक एवं देववाणी परिषद्, दिल्ली के सचिव पर कार्यरत रह चुके हैं।

आपको राष्ट्रप्रेम की काव्य रचना के क्षेत्र में अत्यधिक प्रसिद्धी प्राप्त हुई। आपके द्वारा प्रणीत लघुकाव्य, गीतिकाव्य तथा नाट्यग्रंथ सभी राष्ट्रभक्ति से ओत–प्रोत हैं। आपकी अनेक स्फुट रचनाएँ जैसे– 'भारतजनमाऽहम्' तथा 'क्रूरहृदय मेघ' कवि सम्मेलनों में अधिक प्रसिद्ध हुई। आपने 'अर्वाचीन संस्कृतम्' पत्रिका का सम्पादन कार्य निर्वहन करते हुए अपनी तथा अन्य युगीन कवियों के साहित्यों का सम्यक् प्रकाशन किया है।

5.6.2.1 लघुकाव्य

भाति मे भारतम्– डॉ0 रमाकान्त शुक्ल के लघुकाव्यों में 'भाति मे भारतम्' अत्यधिक लोकप्रिय हुई। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन देववाणी परिषद् दिल्ली से 1980 ई० में हुआ। अत्यधिक लोकप्रिय होने कारण इस काव्य के दो संस्करण और निकाले गए। कवि ने इसमें स्रग्विणी छन्द में कुल 108 पद्यों की रचना की है, जो अत्यन्त ललित और मनोहर पदावली से युक्त है। आधुनिक संस्कृत गीतिकाव्यपरम्परा में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। भारत की गौरवगाथा का भावपूर्ण चित्रण करने के कारण इसे स्त्रोतकाव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। राष्ट्रभक्ति की भावना से ओत–प्रोत होकर कवि ने अतिशय श्रद्धाभक्तिपूर्वक भारतवर्ष का सर्वाङ्गीर्ण चित्रण किया है। इसमें देशवासियों, भारतराष्ट्र तथा भारतीय संस्कृति के आकर्षक पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। भारत के ऐतिहासिक एवं भौगोलिक स्वरूप धार्मिक एवं सांस्कृतिक गौरव, औद्योगिक एवं वैज्ञानिक विकास, बाह्य एवं आन्तरिक सौन्दर्य आदि विभिन्न पक्षों को उद्घाटित किया गया है। भारतवर्ष के प्राचीन स्वरुप के साथ वर्तमान स्वरुप का भी विस्तृत वर्णन किया है। इस काव्य के माध्यम से डॉ0 शुक्ल ने मातृभूमि के प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त करते हुए इसकी भौगोलिक विशेषताओं, यहाँ प्रवाहित विभिन्न नदियों, विभिन्न पर्वत श्रेणियों तथा धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओं और रीति–रिवाजों के वर्णन के द्वारा पाठक के हृदय में स्वदेश प्रेम की भावना का संचार करने का सराहनीय कार्य किया है। कवि ने गौरवशाली अतीत का चित्रण करके जहाँ एक ओर प्राचीन भारतीय ज्ञान विज्ञान की अद्भुत झाँकी प्रस्तुत की है, वहीं मध्यकालीन और आधुनिक महापुरुषों की गौरवगाथा का गान करके उसके प्रति भी अपनी श्रद्धाभावना व्यक्त की है। डॉ0 शुक्ल ने भारतीय संस्कृति, भाषायी विविधता, मान्यताओं के त्याग एवं बलिदान का वर्णन करके उन्होंने वर्तमान पीढ़ी के युवकों को स्वदेश प्रेम की

भावना से युक्त होकर अपना कर्तव्यकर्म करने की प्रेरणा दी है। वर्तमान भारतीय ज्ञान–विज्ञान की अद्भुत प्रगति का वर्णन कर उन्होंने विश्वपटल पर भारत की प्रतिष्ठा को रेखांकित किया है। कवि सम्मेलनों में कवि द्वारा इसके गान तथा दूरदर्शन पर प्रसारण से गेयत्ताधर्म के कारण इस काव्य ने गीत का रुप धारण कर लिया। यह एक शतक काव्य है।

जयभारत भूमे – 'जय भारतभूमे' काव्य डॉ0 शुक्ल की गीतिकाव्यात्मक रचना है। इस काव्य का प्रकाशन देववाणी परिषद्, दिल्ली द्वारा 1981 ई0 में हुआ। कवि की यह रचना भी 108 पद्यों का काव्य है परन्तु इसमें तारङ्क, भुजङ्गप्रयात, आर्या, तोटक, मालिनी, द्रुतविलम्बित, शार्दुलविक्रिडित आदि अनेक प्रसिद्ध–अप्रसिद्ध छन्दों का प्रयोग है। इन पद्यों में अन्त्यानुप्रास एवं ध्रुवा का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है। इस काव्य में सात खण्ड है। प्रत्येक खण्ड का एक शीर्षक है। 1. जयभारतभूमेः 2. भजे भारतम् 3. मम भारतं विजयते 4. भारतभूमिर्विलसित 5. जय भारत मेदिनी 6. भारतारव्यः स्वदेश तथा 7. दिव्यं मम भारतम् ।

सम्पूर्ण काव्य में प्रारम्भ से लेकर अंत तक भारतभूमि की ही महिमा एवं गरिमा का गान कवि ने किया है। काव्य के प्रत्येक पद्य में कवि भारतभूमि को प्रणाम करता है। उसकी जय जयकार करता है तथा उसकी उन्नति की कामना करता है। कवि को आशा है कि भारत की धरती से एक न एक दिन भ्रष्टाचार, अत्याचार, प्रहार आदि दोष अवश्य दूर होंगे।

डॉ0 शुक्ल द्वारा प्रणीत काव्य सहृदयों द्वारा अनेकशः समादृत होता हुआ भारत की महिमा को पूर्णतया प्रकाशित करने में सफल है। परन्तु उनके द्वारा भारत की महिमा का गान यथार्थ की धरती पर आकर खण्डित हो जाता है। कवि का अन्तर्मन दुःखित हो उठता है। अतः उन्होंने 'भाति मे भारतम्' में भारत की दुर्दशा का चित्रण किया है। इसी प्रकार 'राष्ट्र देवते' में कवि ने आतङ्कवाद के विरुद्ध तीखा स्वर अपनाया है। कवि ने प्रसाद गुण, स्वभावोक्ति अलंकार से युक्त कोमल और ललित पदावली के प्रयोग द्वारा सहजता से जनमानस को अपनी ओर आकृष्ट किया है।

5.7 आचार्य जगन्नाथ पाठक

5.7.1 कवि परिचय

आचार्य जगन्नाथ पाठक का जन्म सन् 1934 में हुआ। मूलरूप से आप बिहार के रोहतास जिले के रहने वाले हैं। आरम्भिक शिक्षा दीक्षा सासाराम में तथा उच्चशिक्षा काशी में हुई। आचार्य पाठक को संस्कृत श्लोकों की रचना की प्रेरणा उनके पितृव्य स्व. पं0 रामरूप पाठक के चरणों में मिली। सासाराम में ही उन्हें उर्दू के एक शायर स्व. अल्ताफ हुसैन 'मानूस' सहसराम से शायरी का ज्ञान प्राप्त हुआ। उच्चशिक्षा के दौरान श्री पाठक जी को चक्रवर्ती पं0 महादेव शास्त्री जी का सान्निध्य एवं दिशा निर्देशन प्राप्त हुआ। आचार्य जगन्नाथ पाठक ने हिन्दी में गद्य लेखन और संस्कृत में पद्य लेखन किया है। आचार्य पाठक ने राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय) गंगानाथ झा परिसर, इलाहाबाद के प्राचार्य पद पर आसीन रह चुके हैं। आप कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार) में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में कार्य कर चुके हैं। संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, अपभ्रंश, अंग्रेजी, बंगला, मैथिली, उर्दू, आरम्भिक पर्शियन भाषा का ज्ञान आपको है।

आपने श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली तथा प्रयाग में अवस्थित गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ में अध्यापन किया तथा गंगानाथ झा संस्कृत विद्यापीठ तथा रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ में प्राचार्य भी रहे।

आपको आपकी रचना 'कापिशायनी' के लिए 1980 में 'साहित्य–अकादमी पुरस्कार', 'मृद्वीका' के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी का विशिष्ट पुरस्कार एवं के0 के0 बिड़ला फाउण्डेशन का प्रथम 'वाचस्पति पुरस्कार', 'विच्छित्तिवातायनी' के लिए 1991 में उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी का विशिट पुरस्कार एवं राजस्थान संस्कृत अकादमी द्वारा 'अखिल भारतीय काव्य पुरस्कार', 'आर्या' के लिए उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा 'कालिदास पुरस्कार' प्राप्त हुआ है। आपकी कवित्व क्षमता एवं मौलिक रचनाओं के लिए भारत सरकार द्वारा आपको 'राष्ट्रपति सम्मान' भी दिया गया है।

अखिल भारतीय कवि–सम्मेलनों में आपके काव्य–पाठ होते हैं तथा इलाहाबाद तथा जम्मू आकाशवाणी केन्द्रों से संस्कृत काव्य–पाठ, वार्ताओं व नाटकों का प्रसारण प्रायः होता है।

5.7.2 कर्तृत्व

संस्कृत में आपकी मौलिक रचनाएँ 'कपिशायनी' सन् 1980 में 'मृद्वीका' 1983 में, 'पिपासा' सन् 1987 में, 'विच्छित्तिवातयनी' सन् 1992 में तथा 'आचार्यसहस्त्रारामम्' सन् 1995 में प्रकाशित हुई हैं। अनुवाद के क्षेत्र में आपका अद्वितीय योगदान है। सन् 2003 में आपकी 'गालिबकाव्यम्' प्रकाशित हुई जो प्रसिद्ध शायर मिर्जा गालिब के सम्पूर्ण 'दीवाने गालिब' का संस्कृत पद्यानुवाद है। कवि जयशंकर प्रसाद की अमर कृति 'कामायनी' तथा 'अश्रु' का पद्यानुवाद भी आपने किया है किन्तु किन्ही कारणों से वे दोनो रचनाएँ अप्रकाशित हैं। पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय के प्रधान सम्पादनकत्व में प्रकाशित 'संस्कृत वाङ्.मय का वृहद इतिहास' के सप्तम् खंड 'आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास' का संपादन डॉ0 जगन्नाथ पाठक ने किया है।

कपिशायनी– डॉ0 जगन्नाथ पाठक की पद्यरचना कपिशायनी का प्रकाशन 1980 में हुआ। डॉ0 पाठक अपनी प्रथम कृति 'कपिशायनी' से एक समर्थ कवि तथा नए रूप के प्रयोक्ता के रूप में स्थापित हो गए तथा 'मुद्वीका' ने उन्हें और अधिक दृढ़ कर दिया। डॉ0 पाठक ने संस्कृत–कविता में एक नई धारा का सूत्रपात किया और उसे दूर तक पहुँचाया। पाठक जी की गजलों में एक नई चेतना है।

विच्छित्तिवातायनी – डॉ0 पाठक की कालजयी कृति 'विच्छित्तिवातायनी' संस्कृत भाषा के आधुनिक साहित्य में सौन्दर्यशास्त्र परक उन कुछ रचनाओं में अपना महत्वपूर्ण स्थान सुरक्षित करती है जो संस्कृत साहित्य की क्लासिकल परंपरा तथा आधुनिक लालित्य चिंतन–योजना के बीच की कड़ी है। 'विच्छित्तिवातायनी' लगभग दो हजार आर्याओं का संकलन है। 'विच्छित्तिवातायनी' की उक्ति भंगिमा दर्शनीय है। इसमें चमत्कार अलंकारों का नहीं, उक्ति भंगिमा का है। कवि अपनी उद्भाविकाशक्ति द्वारा ऐसे चमत्कार उत्पन्न करता है कि चित्त चमत्कृत हो जाता है। इस कृति के छः भाग हैं। पहला और प्रमुख भाग विच्छिती–वातायनी है तथा अन्य पांच शतक काव्य इसमें संसक्त हैं। इनके नाम – श्रीकृष्णभावनाशतकम्, रामत्वशतकम्, कविताशतकम्, स्त्रीशतकम् तथा सौन्दर्यकारिका हैं। सम्पूर्ण कविता की रचना आर्या छन्द में कवि ने की है। ये सभी अलग–अलग लघुकाव्य हैं।

मृद्विका– डॉ0 जगन्नाथ पाठक की कृति 'मृद्विका' का प्रकाशन सन् 1983 में हुआ। पाठक जी की यह काव्य कृति वियोगिनी छन्द में रचित है। पाठक जी के सभी श्लोकों में नई शैली, नई भाव–व्यंजना, नया बिम्व, नया शिल्प एवं सबसे ज्यादा नया कथ्य दिखाई देता है। पाठक जी की कविता पढ़कर लगता है कि मानो वे अपने जीवन की अनुभूति को मूर्त रुप दे रहे हैं। इस पद्य संग्रह में 700 पद हैं। जिनमें खैय्याम की रुबाईयों, बच्चन की मधुरता तथा भर्तृहरि की रचनाओं की सुरभि है। मृद्विका की रसवन्ता स्वंय सिद्ध है।

5.7.3 गजल

पिपासा– पिपासा डॉ0 जगन्नाथ पाठक के संस्कृत गजलों का संकलन है। डॉ0 पाठक के गजलों में एक नई चेतना है। अरबी भाषा में गजल का आशय होता है–स्त्रियों के साथ सम्पन्न ऐकान्तिक वार्ता। इसमें संयोग तथा वियोग दोनों की अभिव्यक्ति हो सकती है। यदि इन भावों को हम दूसरे ढंग से देखते हैं तो इनमें हमें परमात्मा का दर्शन होता है। रहस्यवादी चिन्तन लोक और परलोक दोनों को व्यक्त करता है जिसका आनन्द सहृदय अपनी भावनानुसार प्राप्त करता है– भावना यादृशी यस्य। कविवर पाठक ने इस प्रकार के भावों को ही पिपासा के माध्यम से व्यक्त किया है। निम्न पंक्तियों में दोनों भावों की सुन्दरता व्यक्त है– वस्तु यत् त्वत्पुरः स्फुटत्यधिकम्। तन्न सर्व सुर्वणमेव स्यात्। दृष्टिपातो नैव यावत् तावको जीवाम्यहम्, योऽस्मि सोऽस्मि सुदूरवर्तिनि। तावको जीवाम्यहम्।

'कापिशायिनी', 'मृद्वीका' और 'पीपास' उत्कृष्ट गीतिकाव्य हैं। इनमें पूर्ण रागात्मकता है। डॉ0 पाठक की भाषा एवं शब्द विन्यास अद्वितीय है। कवि ने अपने–अपने एक शब्दों का प्रयोग आभूषणकार की भांति परख–परख कर, तोल–तोल कर किया है। किसी भी शब्द को अपने स्थान से हटाने पर उस शेर या गजल की सुन्दरता धुँधली–सी हो जाती है। पिपासा में भाषा की प्रांजलता तथा भावों की अभिव्यक्ति ने कवि के काव्यत्व को एक नया रुप दिया है।

गालिब–काव्यम्– डॉ0 पाठक ने मिर्जा असदुल्लाह खाँ गालिब की कृति 'दिवाने गालिब' का 'गालिब काव्यम्' के नाम से संस्कृत में पद्यानुवाद किया है। वह भारतीय भाषाओं की साझी संस्कृति का प्रतिफल माना जा सकता है।

डॉ0 पाठक उत्कृष्ट कोटि के रचनाकार ही नहीं है, शास्त्र में भी इनकी महनीय प्रविष्टि है। गालिब–काव्यम् में कवि ने कुछ शब्द भारतीय संवेदना के अनुरुप रखे हैं।

5.8 अभ्यास–प्रश्न

1. आधुनिक खण्डकाव्य का लक्षण स्पष्ट कीजिए।
2. गीतिकाव्य किसे कहते हैं ?
3. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के कर्तृत्व पर प्रकाश डालिए।
4. डॉ0 बच्चू लाल अवस्थी का जीवन–परिचय दीजिए।
5. डॉ0 रमाकान्त शुक्ल के लघुकाव्यों पर प्रकाश डालिए।
6. आचार्य जगन्नाथ पाठक के गजलों पर प्रकाश डालिए।

5.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1.

इकाई–06 प्रमुख खण्डकाव्य, गीतिकाव्य एवं कवि परिचय – II

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

6.2.1 कवि परिचय

6.2.2 खण्डकाव्य

6.3 आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी

6.3.1 कवि परिचय

6.3.2 खण्डकाव्य

6.4 अभिराज डॉ0 राजेन्द्र मिश्र

6.4.1 कवि परिचय

6.4.2 खण्डकाव्य

6.4.3 गजल का स्वरूप

6.4.3.1 गलज्जलिका संग्रह

6.5 प्रो0 हरिदत्त शर्मा

6.5.1 कवि परिचय

6.5.2 कर्तृत्व

6.5.2.1 गीतिकाव्य

6.6 आचार्य रहस बिहारी द्विवेदी

6.6.1 कवि परिचय

6.6.2 कर्तृत्व

6.6.2.1 खण्डकाव्य

6.6.2.2 अन्य रचनाएँ

6.7 प्रो0 केशवचन्द्रदाश

6.7.1 कवि परिचय

6.7.2 कर्तृत्व

6.7.2.1 लघुकाव्य

6.8 प्रो0 पुष्पा दीक्षित

6.8.1 कवि परिचय

6.8.2 कर्तृत्व

6.8.2.1 गीतिकाव्य

6.9 प्रो0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'

6.9.1 कवि परिचय

6.9.2 कर्तृत्व

6.9.2.1 गीतिकाव्य

6.10 अभ्यास–प्रश्न

6.11 सन्दर्भ–ग्रन्थ

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

6.2.1 कवि परिचय

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी ने षिक्षण तथा अध्यापन काषी हिन्दू विष्वविद्यालय में किया। कवि को विस्तृत परिचय का आपने पूर्व इकाई–03 में अध्ययन किया है। कवि ने सातवें–आठवें दषक में महाकाव्यों के साथ–साथ कई स्फुट कविताएँ भी लिखीं। आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी जी का प्रसिद्ध लघुकाव्य 'रेवाभद्रपीठकाव्यम्' है। आचार्य द्विवेदी का दूसरा लघुकाव्य 'शतपत्रम्' है। कवि द्वारा एक काव्य संकलन 'प्रमथ' भी प्रकाषित है।

6.2.2 खण्डकाव्य

रेवाभ्रदपीठकाव्यम्– आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के इस लघुकाव्य का प्रकाषन 1988 में हुआ। यह उनकी एक प्रसिद्ध रचना है। इस काव्य के माध्यम से अपने जन्म स्थान, गृह ग्राम का तथा नर्मदा तट पर मध्य प्रदेष के भोपालमुक्ति में स्थित नादनेर ग्राम का वर्णन किया है। इस लघुकाव्य में काव्य के नाम के अनुरुप ही रेवा नदी का सौन्दर्य वर्णित है। इस लघुकाव्य में षार्दूलविक्रीडित तथा स्नग्धरा जैसे बड़े छन्दों का प्रयोग कवि ने किया है। आचार्य रेवा प्रसाद

द्विवेदी की भाशा अत्यन्द प्रौढ़ एवं कठिन है। भाशा पाण्डितपूर्ण होने पर भी विदग्ध्तापूर्ण है। 'रेवामद्रपीठम्' काव्य द्विवेदी की गीतिकाव्य के क्षेत्र में एक विषिश्ट रचना है। यह अनूठा काव्य अंचल विषेश की संस्कृति का चित्रण प्रस्तुत करने वाला तथा वहाँ की आंचलिकता को प्रदर्षित करने वाला उत्कृश्ट ग्रन्थ कहा जा सकता है। आंचलिकता को यथार्थरूप देने के लिए कवि ने ग्राम जीवन में प्रचलित षब्दों या लोकसभा का भी प्रयोग अनेक पद्यों में किया है। कवि की यह रचना भक्तिभावना, सरसता, लोकजीवन का सूक्ष्म अंकन तथा भाशा विन्यास की दृश्टि से उत्कृश्ट काव्य की श्रेणी में आती है।

षतपत्रम्– आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी की यह रचना 'षतपत्रम' एक लघुघुकाव्य है। इसका प्रकाषन 1987 में कालिदास संस्थान वाराणसी से हुआ। इस रचना में कवि ने कविता के विशय में 115 पद्य लिखे हैं। प्रत्येक पद्य में कवि ने कविता के स्वरुप की चर्चा की है। उन्होंने प्रत्येक पद्य में कविता के स्वरूप को अगल–बगल से रीति से प्रतिपादित किया हैं इसका प्रत्येक पद्य कविता के स्वरुप की विविध कल्पनाओं, रूपकों तथा प्रयोगों के द्वारा उद्घाटित किया है। एक सिद्ध कवि और आचार्य द्वारा इस प्रकार कविता को लक्षित करना काव्यषास्त्र में सुन्दर प्रयोग है।

प्रमथ– इस काव्य–संकलन का प्रकाषन सन् 1988 में हुआ। इस संकलन ग्रन्थ में नौ रचनाओं का संकलन किया गया है। इस संकलन ग्रन्थ की सभी नौ रचनाएँ अपने आप में अलग–अलग भावनाओं से ओत–प्रोत हैं। प्रथम 'प्रमथ' में परमाणु का प्रतीक माना गया है। इसमे परमाणु युग के लिए वांछित षांति की कामना का भाव है। प्रथम (षिवगण) को परमाणु का प्रतीक माना गया है। इसमें परमाणु युद्ध के परिणामों की आषंका की कल्पना करते हुए षिव से तांडव रोकने की प्रार्थना की गई है। प्रलापाः में देवी लक्ष्मी को चुनौती भरे षब्दों में सम्बोधन कवि विनोद प्रवृत्ति को प्रगट करती है तथा निसर्गः में मनुश्य की आंतरिक प्रवृत्ति पर पीड़ा में संतुश्टि की भावना का उत्कृश्ट चित्रण किया गया है। द्वितीय 'प्रमथ' में 'चतुर्दषी', वैराग्यमीय, तृतीय 'प्रलामाः' प्रार्थिक विशमता पर प्रहार करने की भावना, चतुर्थ 'निसर्गः' मात्सर्य के प्रति प्रतिषोध की भावना, पंचम 'किं न करोमि' नियति चक्र के विपरीत भावना को बताने वाली, शश्ठ 'नमो विशाच' समाज–समीक्षापरक, सप्तम 'मृत्यो' दार्षनिकतामय, अश्टम 'कस्त्वं

काम' मनोवैज्ञानिक तथा नवम 'भावा' आन्तरिक द्वन्द्व को चित्रित करने वाली रचना है, जिनका सकलन कवि ने प्रमथ में किया है।

6.3 आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी

6.3.1 कवि परिचय

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का जन्म 15 फरवरी, 1949 को मध्य प्रदेष में राजगढ़ जिले में हुआ। इनकी षिक्षा मध्य प्रदेष के विभिन्न नगरों में हुई। संप्रति ये सागर विष्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में आचार्य एवं अध्यक्ष हैं। पूर्व में आचार्य त्रिपाठी ने .... में कुलपति के पद को भी सुषोभित किया है। इनकी अनेक संस्कृत कविताएँ विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाषित होती रही है। अनेक विद्वतापूर्ण या समीक्षात्मक ग्रन्थों के अतिरिक्त इन्होंने हिन्दी में उपन्यास, नाटक तथा कहानी संग्रहों की भी रचना की है। अनके मुक्तक रचनाओं के अतिरिक्त इनके दो काव्य संग्रह प्रकाषित हुए हैं– (1) सन्धानम् तथा (2) लाहरीदषकम् ।

सन्धानम्– आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का प्रथम मौलक काव्य संग्रह सन्धानमः नाम से 1989 में प्रकाषित हुआ। इस काव्य संग्रह में 55 कविताओं का संकलन किया गया है। इन सभी कविताओं को पाँच खण्डों में विभक्त किया गया है– अन्तर्जवनिकम्, बहिर्जवनिकम्, तहरीलीलायितम्, गीतावल्लरी तथा नमोवाक्।

लहरीदषकम्– आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी के काव्य 'लहरीदषकम्' का प्रकाषन 1991 में संस्कृ त परिशद्, सागर विष्वविद्यालय, सागर से हुआ। यह लघुकाव्य दस लहरीकाव्यों का संकलन है। बसन्तलहरी, निदाधलहरी प्रावृड.लहरी, धरित्रीदर्षनलहरी, जनतालहरी, रोटिकालहरी, नर्मदालहरी मृत्तिकालहरी, अद्यापिलहरी एवं प्रथानलहरी ये दस लहरी काव्य उस काव्य के अंष है।

लहरीकाव्य में कवि समाज के वर्तमान स्वरुप के संदर्भ को उपस्थित किया है। प्रकृति चित्रण में बसन्त वर्णन में कवि ने आधुनिक औद्योगिक नगरीय सभ्यता के वर्णन में यह स्पशट किया है

कि वसन्त का सौन्दर्य आनन्द कहीं खो गया है। सारे मार्ग गाड़ियों से व्याकुल हो उठे है। वातावरण में पेट्रोल की गंध व्याप्त है। पृथिवी तारकोल के धुएँ से व्याप्त हो गई है।

कवि ने उपभाओं को भी एक नवीन स्वरुप प्रदान किया है। ग्रीश्मकाल के दाहक स्वरुप को उपमा कवि ने आतंकवादी खल से दी है। छाया का उपमान ससुराल में पीड़ित की जाती हुई बहू को बनाया है। इसी प्रकार धरित्रीदर्षनलहरी में कवि ने अपनी जर्मनी यात्रा के मध्य विमान यात्रा के अनुभवों का अत्यन्त सूक्ष्मता से वर्णन किया है। विमान से बाहर देखने पर जो अनुभव होता है उसका काल्पनिक वर्णन कवि ने किया है। जनता लहरी में कवि ने भारतीय समाज में जनता की वर्तमान दषा का विषद् वर्णन किया है। षाकुन्तल के षब्दों पर आधारित पैरोडी के रुप में कई ष्लोकों की रचना कवि ने की है। रोटिकालहरी में कवि ने मनुश्य जीवन में रोटी के महत्व को दर्षाया है। नर्मदालहारी में नर्मदा नदी के स्वरुप एवं माहात्म्य का सुन्दर एवं मनोरम वर्णन कवि ने किया है। मृत्तिकालहरी में देष की मिट्टी का वर्णन है। अद्यापि लहरी के प्रत्येक पद्य का प्रारंभ कवि ने 'अद्यापि' पद से किया है। प्रस्थानलहरी में कवि ने जीवन के अंतिम सत्य के रूप में जीवन–यात्रा की समाप्ति के बाद अंतिम प्रस्थान का वर्णन किया है।

धरित्रीदर्शनम् – धरित्रीदर्शनम् आचार्य त्रिपाठी द्वारा लिखा गया एक विमानकाव्य है। यह काव्य पाँच उन्मेषों में विभक्त है। मेघदूत के समान प्रत्यके उन्मेष में ग्यारह मन्दाक्रान्ता है तथा इस काव्य का आरम्भ भी कवि ने मेघदूत की शैली पर ही किया है। प्रथम उन्मेष में कवि का विमानदर्शन, विमानारोहण तथा विमानप्रस्थान, द्वितीय में विमान से धरती दर्शन (धरित्रीदर्शन), तृतीय में रात्रि आगमन–प्रस्थान, यात्रियों के अशनपानादि, चतुर्थ में विमान से प्रभात दर्शन तथा पंचम में विमान का पूर्व जर्मनी के हवाई अड्डे पर अवतट का वर्णन है।

कवि आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी की कविताओं में विषयवस्तु की नवीनता, आधुनिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों की विसंगतियों का व्यंग्यपूर्ण चित्रण तथा भाव प्रवणता है। कवि की कल्पना शक्ति अद्वितीय है।

6.4 अभिराज डॉ0 राजेन्द्र मिश्र

6.4.1 कवि परिचय

अभिराज डॉ0 राजेन्द्र मिश्रा मूलतः उत्तर प्रदेश के निवासी है। सम्प्रति इनका निवास शिमला में है। डॉ0 मिश्र का काव्यानुराग उन्हें पितामह परम भागवत दिवंगत पण्डित रामानन्द मिश्र एवं पितृव्य डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र (भूतपूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) के सान्निध्य एवं आशीर्वाद से प्राप्त है। डॉ0 मिश्र ने अपनी जन्मजात कवि प्रतिभा के कारण शिक्षा जगत में स्पृहणीय प्रतिष्ठा प्राप्त की है। डॉ0 मिश्र का जीवन परिचय हम पूर्व की इकाई–0३ में अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में हम उनके खण्डकाव्यों का परिचय प्राप्त करेंगे। कवि मिश्र सस्कृत कविता के युग निर्माता कवि की श्रेणी में अग्रगण्य हैं। आपने अपना सम्पूर्ण जीवन सुरभारती के चरणों में कविता रुपी पुष्पांजली अर्पित करने में व्यतीत किया है। महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, नाटक, कथा–काव्य, स्फुट काव्य के साथ–साथ अनेक विधाओं में साहित्य सर्जना की है। इन काव्यों के आपने भाव, भाषा, शैली, लय, छन्द आदि के क्षेत्र में नवीन प्रयोग किए हैं। कवि अभिराज राजेन्द मिश्र भाषा और भाव दोनों के ही अनन्य साधक है वे संस्कृत भाषा में भावपूर्ण शब्दों को गढ़ लेने वाले कुशल शिल्पी हैं। उन्हें जब भी प्रयोग करते समय शब्दों की जरुरत होती है तो वह शब्द किसी अन्य भाषा से उधार नहीं लेते अपितु संस्कृत शब्दों में भाव को उतार कर ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं कि पाठक चमत्कृत हो जाता है। भले ही वह उर्दू हो अथवा अंग्रेजी उनके भावों के लिए तो भाषा में अनुवर्तिनी ही हो जाती है। कहीं–कहीं पर उनकी भाषा में भोजपुरी का प्रभाव परिलक्षित होता है। उर्दू की भाव प्रवणता और नजाकत उनकी गजलों में दिखाई देती है। परन्तु शब्द और प्रत्यक्षतः अपना अस्तित्व नहीं बदलते। इस विषय में आचार्य कवि राधावल्लभ त्रिपाठी का मत है कि राजेन्द्र मिश्र की रचनाओं में हिन्दी वाक्य रचना एवं मुहावरों का प्रयोग बड़ी मात्रा में हुआ है परन्तु इससे संस्कृत का अपनापन लुप्त नहीं हुआ है। वरन् क्षेत्रीय से बोली नई पदावली पाकर यह सम्पन्न बनी है। परन्तु कहीं–कहीं पर अंग्रेजी भाषा के शब्द वहाँ की क्षेत्रीय भाषा से प्रभावित दिखाई देते हैं।

6.4.2 खण्डकाव्य

आर्यान्योक्तिशतकम् – अन्योक्ति आर्यान्योक्तिशतकम् नाम से 1975 में प्रकाशित यह शतक काव्य अन्योक्ति के उद्भव एवं विकास का आलोचनात्मक अध्ययन है। यह सम्पूर्ण काव्य आर्या छन्द में है तथा इसमें सुन्दर अन्योक्तियों का संकलन किया गया है। इस काव्य संकलन में अन्यापदेश रीति से आह्लादकारिणी शैली में जीवन के कटु सत्यों एवं अनुभवों को कवि ने व्यक्त किया है। अनेक प्रसंगों में कवि ने तीखे व्यंग्यों तथा कटाक्ष के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये हैं। इस शतक काव्य का अन्योक्तियों के अनुरुप वर्गों में विभाजित किया गया है जैसे– विबुधवर्ग, मानववर्ग, यशुवर्ग विहगवर्ग, प्राणिवर्ग, विटपिवर्ग तथा प्रकीर्णवर्ग ।

नवाष्टकमालिका– 1976 ई० में प्रकाशित नवाष्टकमालिका नामक रचना में देवस्तुतियों तथा कविकृत आत्मनिवेदनों का संकलन किया गया है। कवि का मानना है कि श्रुति काव्य का प्राणतत्व आत्माभिप्राय निवेदन ही होता है। इस संकलन में परमेश्वर के प्रति की गई स्तुतियों को कवि ने नौ शीर्षकों जैसे– मरन्द्माधुरीस्तवमन, दुकूलचौरचरितम् आदि में विभक्त किया है। प्रत्येक में ग्यारह श्लोक हैं। इस काव्य में स्थान–स्थान पर कवि के अन्तर्मन में निहित पितृविहीनता की वेदना व्यक्त होती है और वह माँ दुर्गा से अपना आर्तनाद करता है। इस स्तवन श्रृंखला में कवि ने शंकर, विष्णु, राम, कृष्ण आदि नौ देवों की वंदना की है। कृष्ण लीला का भी मनोरम चित्रण कवि ने इस काव्य में किया है। वर्णन के अनुरुप कवि ने कोमल एवं कठोर भाषा का प्रयोग किया है। नौ अष्टकों के अन्त में कवि ने 'आत्मनिवेदनम्' में आठ अत्यन्त मार्मिक पद्यों की रचना की है जो स्वयं कवि की व्यक्तिगत अनुभूतियों से ओतप्रोत है।

पराम्बाशतकम्– पराम्बाशतकम् यह शतककाव्य कवि ने भगवती रुद्राणी को समर्पित किया है। कवि का यह मौलिक स्तोत्र काव्य 1981 में प्रकाशित हुआ। कवि ने स्वयं को अनाथ, दीन–हीन, अशरण मानकर अपनी रक्षा के लिए भगवती से प्रार्थना की है– **त्वमेव त्वमेव त्वमेवाम्ब पाहि।**

कवि भगवती के चरणों में सर्वात्मका समर्पित है तथा उसे ही अपने जीवन का आश्रय मानता है। इस सम्पूर्ण स्तोत्र काव्य में प्रो0 मिश्र देवी के विविध रुपों का बखान करता है, उनके वंश का वर्णन करते हैं तथा पूरे काव्य में देवी की स्तुति करता है। इस स्तोत्र काव्य को संस्कृत

के स्तोत्र काव्यों में समादरणीय स्थान प्राप्त है। इस शतक एक प्रकार से माँ–बेटे का संवाद–सा प्रतीत होता है।

अभिराजसप्तशती– यह अभिराज राजेन्द्र मिश्र के सात शतक काव्यों का संग्रह है। इस सप्तशती काव्य का प्रकाशन 1987 में हुआ। अन्य सप्तशतक काव्यों की भांति इस काव्य का वर्ण्य विषय एक नहीं है। अपितु यह काव्य भिन्न प्रवृत्ति वाले, भिन्न विषयों वाले, भिन्न वृत्तों वाले, सात शतक काव्यों का संग्रह है। प्रत्येक शतक काव्य को एक लघुकाव्य माना जा सकता है। इन सभी सात शतक काव्यों के नाम हैं– 1. नव्यभारतशतकम् 2. मातृशतकम् 3. प्रभातमङ्गलशतकम् 4.सुभाषितोद्धारशतकम् 5. चतुर्थीशतकम् 6. भारतदण्डकम् तथा 7. सम्बोधनशतकम्।

नव्यभारतशतकम् में कवि ने भारत की दुर्दशा का वर्णन करते हुए उस पर दुःख व्यक्त किया है। भारत की जर्जर शोचनीय सामाजिक एवं राजनीतिक दशा पर कवि ने अपनी चिंता व्यक्त की है। मातृशतकम् के सभी सौ पद्यों में कवि मात्रस्वरूपा भगवती को संसार की सर्वोत्कृष्ट शक्ति मानकर उनकी आराधना की है। प्रभातमङ्गलशतकम् में कवि ने अनेक देवी–देवताओं के माहात्म्य का वर्णन किया है तथा उनसे प्रातःकालीन मंगलकामना की है। प्रयाग से दीर्घकाल तक जुड़े रहने के कारण कवि ने अपने पद्यों में प्रयाग की धरती का वर्णन किया है तथा भगवती सरस्वती से शुभप्रभात प्रदान करने की याचना की है। सुषापितोद्धारशतकम् की रचना कवि ने अनुष्ट्प छन्द में की है। इस शतककाव्य के पूर्व के सुभाषित श्लोकों को नए संदर्भों से जोड़कर व्यंग्य शैली में प्रस्तुत किया है। वर्तमान में हो रहे अयोग्य जनों की नियुक्ति पर कवि ने कटाक्ष किया है। चतुर्थीशतकम् काव्य की रचना भी अनुष्टुप छन्द में ही की गई है जिनसे सज्जनों का जीवन ऐसे दुर्जनों के प्रति व्यंग्य किया है जिनसे सज्जनों का जीवन प्रभावित होता है। भारतदण्डकम् में कवि ने दण्डक छन्द में भारत के वृहद स्वरुप का वर्णन किया है तथा भारत की महिमा का गान किया है। 'सम्बोधनशतकम्' इस शतक काव्य में कवि ने चेतन अथवा अचेतन प्राणी को सम्बोधित कर अपने मन की व्यथा का वर्णन किया है। कवि ने रात्रि मृत्यु, पर्वत, घनश्याम, दूर्वा, प्रयाग, प्रसून, चातक भ्रमर आदि को सम्बोधित कर अपनी मनोव्यथा को प्रकट किया है।

'शताब्दीकाव्यम्' में कवि ने इलाहाबाद के शताब्दी समारोह का वर्णन पाँच सर्गों में किया है। इस काव्य में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अतीत एवं वर्तमान के विविध पक्षों की काव्यमयी समीक्षा एवं वर्णन प्रस्तुत की गई है।

विमानयात्राशतकम्

विमानयात्राशतकम् में कवि ने नई दिल्ली से बाली द्वीप की राजधानी डेनपसार तक की अपनी विमान यात्रा का वर्णन किया है। इसमें दिल्ली से सिंगापुर तक की यात्रा में विमान की खिड़की से देखते हुए प्राकृतिक दृश्यों का मनोरम वर्णन है।

विमान यात्रा के अनुभव का वर्णन करते हुए आचार्य मिश्र ने विमानकाव्य नामक नयी विधा को जन्म दिया। कवि द्वारा विमान में बैठे–बैठे विभिन्न मनोदशाओं को पद्यात्मक स्वरूप प्रदान करना कठिन कार्य है। कवि ने 'विमानयात्राशतकम्' काव्य को 'पञ्चकुल्या' नामक काव्य संग्रह में संकलित किया है। विमानयात्रा के प्रसंग में कवि ने नये उपमानों की बड़ी स्वाभाविकता के साथ वर्णन किया है। 'पञ्चकुल्या' में पांच शतक काव्य हैं – 1. विमानयात्राशतकम् 2. बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम् 3. यवसाहित्यशतकम् 4. सुरभारतीदण्डकम् तथा 5. देववाणीहुङ्कारशतकम्।

देववाणीहुङ्कारशतकम् काव्य में संस्कृत भाषा के बहिष्कार के कारण कवि ने अपना क्रोध प्रकट किया है। यह शतककाव्य कवि ने बाली द्वीप के प्रवास काल में लिखा था। 'बालीविलासम्', 'बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम्' तथा 'यवसाहित्यशतकम्' इन तीनों लघुकाव्यों में कवि ने बाली द्वीप के आन्तरिक एवं बाह्य सौन्दर्य का वर्णन किया है। इस अवधि में कवि ने 'मृगाङ्कदूतम' नामक दूतकाव्य की भी रचना की है। इन सभी के अतिरिक्त कवि मिश्र ने नवाष्टकालिका, पराम्बाशतकम्, शताब्दीकाव्यम्, अभिराजसप्तशती, धर्मानन्दचरितम्, अभिज्ञानशतक, कस्मै देवाय हविषा विधेम आदि लघुकाव्यों का प्रणयन भी किया है। संस्कृत जगत को कवि की रचनाओं के रूप में अनेक बहुमूल्य रत्न प्राप्त हुए हैं। कवि ने संस्कृत साहित्य का श्रीवर्द्धन किया है।

पाकशासनशतकम्

पाकशासनशतकम् प्रो0 मिश्र का एक विलक्षण शतककाव्य है। इसमें कवि ने पाकिस्तान की कठोर शब्दों में निंदा की है तथा पाकिस्तान को गीदड़ कहा है। पाकिस्तान के नाम में भले ही 'पाक' शब्द हो जिसका अर्थ 'शुचिता' है किन्तु उसका आचरण सदा ही उल्टा रहता है। उस दृष्टि से उन्होंने पाक को 'दानव' शब्द का पर्याय बताया है। इस काव्य में कवि ने भारत–पाकिस्तान के मध्य कटु सम्बन्धों, भारत–पाकिस्तान युद्ध तथा भारतीय सैनिकों के विजय आदि का रोचकतापूर्ण एवं भावपूर्ण वर्णन किया है।

6.4.3 ग़जल का स्वरूप

स्वातन्त्र्योत्तर काल से ही संस्कृत काव्य परम्परा के साथ ही पारम्परिक छन्दों के प्रयोग के साथ ही एक नई विधा के रूप में ग़जल ने अपना स्थान संस्कृत जगत् में बना लिया। सबसे पहले महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री 'मंजुनाथ' ने विशुद्ध फारसी की तर्ज पर संस्कृत ग़जलें लिखीं और संस्कृत कविता को एक नया रूप दिया। आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री, पं0 प्रभातशास्त्री एवं रामनाथ प्रणयी जैसे विद्वानों ने गजल की विधा को अगे बढ़ाया। आचार्य बच्चुलाल अवस्थी तथा प्रो0 राजेन्द्र मिश्र ने अपनी गजलों से इस विधा को आगे बढ़ाया।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'अभिराजयशोभूषणम्' में (पृष्ठ – 281) लिखा है कि उर्दू भाषा की वही गजल परम्परा बीसवीं शताब्दी ई0 के ही प्रथम चरण में संस्कृत भाषा में भी अवतरित हुई जब जयपुर–निवासी विविध भाषाओं में पारंगत महाकवि भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने प्रायः बाईस बहरों का प्रयोग करते हुए सैकड़ों गजल–गीतियाँ लिखीं।

प्रो0 मिश्र ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ में गजल के संबंध में विस्तार से चर्चा की है किन्तु मिश्र जी फारसी गजलों के संविधानकमात्र (Technique Only) को ही संस्कृत कवियों के लिए ग्राह्य मानते हैं, उसके प्रतिपाद्य को नहीं –

संविधानकमात्रं हि फारसीगजलाश्रितम्।
गाह्यं न च प्रतिपाद्यमित्यभिराजसम्मतम्।।

(अभिराजयशोभूषणम्–85)

6.4.3.1 गलज्जलिका संग्रह

कनीनिका – कनीनिका का प्रकाशन 2008 ई0 में हुआ। इसमें वाग्वधूटी, मृद्वीका, श्रुतिम्भरा तथा मधुपर्णी नामक संकलनों से तिरपन गजलें संकलित हैं। कनीनिका राजेन्द्र मिश्र जी की प्रारंभिक गजलों का संग्रह है। जिसका उन्होंने 1968 से 1999 के मध्य प्रणयन किया था। ये गजलें पूर्व में नवगीत – संगहों में संकलित थीं। किन्तु भिन्न विधा का होने के कारण कवि ने इन्हें गजल श्रेणी के नवीन संग्रह में पुनः प्रकाशित यिका है। वाग्वधूटी में 54 गीतों का, मृद्वीका में 53 नवगीत, श्रुतिम्भरा में 37 गीतों का संकलन है। मधुपर्णी प्रो0 मिश्र प्रणीत नवगीतों, गजलों तथा छन्दोमुक्त कविताओं का संकलन है। जिसमें से गजलों को उन्होंने कनीनिका में प्रकाशित किया है।

मत्तवारणी – मत्तवारणी में संकलित गजलों की रचना कवि ने 15 जनवरी, 2000 से 17 मई, 2001 के मध्य की है। इस संकलन में कुल 60 गजलें हैं। मत्तवारणी के विभिन्न शीर्षकों में डॉ0 मिश्र ने आतंकवादियों, धर्म का आडम्बर फैलाने वालों, अहंकारियों, धनाभिमानियों एवं निर्धनों की स्थितियों का वर्णन किया है। मत्तवारणी की गजलें विविधतापूर्ण तथा व्याकरण की दृष्टि से समृद्ध हैं। विषयवस्तु यथार्थपूर्ण जीवन की घटनाओं से प्रेरित है।

शालभञ्जिका – शालभञ्जिका का प्रणयन प्रो0 मिश्र ने 23 अक्टूबर, 2003 से 9 जून, 2006 के मध्य किया था। इस संग्रह में 68 गजल संग्रहीत हैं।

हविर्धानी – हविर्धानी में संकलित गजलों की रचना प्रो0 मिश्र ने 2006 ई0 से 16 अगस्त, 2008 के मध्य की है। हविर्धानी में संकलित गजलें अन्य गजलों से भिन्न हैं। कनीनिका, मत्तवारणी, शालभञ्जिका ये तीनों ही शब्द और सौन्दर्य अनुभूति के कारण कवि के राग को अभिव्यक्त करते हैं। प्रायः सभी गजलें रूप–सौन्दर्य, वैभव आदि ऐश्वर्य सूचक तथा उमंग आदि वर्ण्य विषयों पर आधारित हैं। जबकि हविर्धानी की गजलें अपने नाम के अनुरूप निवृत्तिपरक अथवा भाग–ऐश्वर्य से विरक्ति का प्रतीक हैं। हविर्धानी का अर्थ होता है – यज्ञकुण्ड, हवि अन्न की वेदी। इस संकलन का पूर्व में नाम – 'पश्चिमे वयसि' (अर्थात् जीवन की अन्तिम

गजलें या अन्तिम अनुभव) था। अपनी कवि–कर्म में सक्रियता के कारण कवि ने इसका नाम परिवर्तित कर हविर्धानी कर दिया।

शिखरणी – इस गजल संकलन में कुछ 61 गजलें संकलित हैं जिसका प्रणयन प्रो0 मिश्र ने मार्च, 2010 से मार्च 2012 के मध्य किया है। इसका प्रकाशन राष्ट्रीयसंस्कृतसंस्थान (सम्प्रति केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय) नई दिल्ली के लोकप्रिय साहित्यग्रन्थमाला – 65 के रूप में सन् 2013 में हुआ।

औदुम्बरी – उदुम्बर का अर्थ होता है गूलर जिसमें अतिशय मधुरता के कारण कीड़े भी प्रविष्ट हो जाते हैं। इसकी लकड़ी अपनी पवित्रता के कारण यज्ञोपयोगी होती है। प्रो0 मिश्र का यह गजल संग्रह अत्यन्त मार्मिक, उच्चस्तरीय एवं भाषायी दृष्टि से अत्यन्त उच्चकोटि का है।

वारिपर्णी – वारिपर्णी का अर्थ होता है – जलकुम्भी। इसके फूल अत्यन्त सुन्दर होते हैं। यह लता सभी ऋतुओं में फलती–फूलती है। इस संकलन में 64 गजल हैं। इसका प्रकाशन – 2020 ई0 में हुआ।

6.5 प्रो0 हरिदत्त शर्मा

प्रो0 हरिदत्त शर्मा मूल रुप से अलीगढ़ के बेसवाँ नामक स्थान के निवासी हैं। आपका जन्म हाथरस के महामायानगर में 27 सितम्बर, सन् 1948 में हुआ। आपके पिता का नाम श्री लहरीशङ्कर शर्मा तथा माता का नाम श्रीमती हरप्यारी देवी है। श्री शर्मा जी का जन्म सनाढ्य में भरद्वाजगोत्रीय ब्राह्मण कुल में हुआ। आपके पूर्वज पंडित बिहारीलाल एवं पंडित महावीर प्रसाद शर्मा शास्त्री प्रतिष्ठित विद्वान थे। वैष्णवमतावलम्बी प्रो0 शर्मा की प्रारम्भिक शिक्षा–दीक्षा श्री कृष्ण ब्रह्चर्याश्रम सरस्वती एवं बांगला विद्यालय, हाथरस में हुई। श्री हनुमान जी तथा श्री कृष्ण की भक्ति उन्हें अपनी माता से विरासत में मिली।

आपकी उच्च शिक्षा वाराणसी तथा इलाहाबाद में हुई। संस्कृत महाविद्यालय से आपने प्रथम श्रेणी में आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1969 में आपने संस्कृत विषय में एम०ए० की परीक्षा में न केवल प्रथम स्थान प्राप्त किया अपितु इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सम्पूर्ण कला

संकाय में प्रथम स्थान प्राप्त किया। हरिदत्त शर्मा की अप्रतिम सफलता के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा उन्हें चार स्वर्ण पदक तथा दो रजत पदक प्रदान किए गए। आपके श्रद्धेय गुरुजनों में प्रो0 आद्याप्रसाद मिश्र, प्रो0 चण्डिका प्रसाद शुक्ल एवं प्रो0 सुरेश चन्द्र पाण्डेय प्रमुख हैं। संस्कृत के साथ ही आपको अँग्रजी, रुसी एवं जर्मन भाषा का भी ज्ञान है। आपने सन् 1975 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 'संस्कृत काव्यशास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन' विषय पर डी0 फिल्0 की उपाधि प्राप्त की। सन् 1972 में आपकी नियुक्ति इलाहाबाद विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्रवक्ता के रुप में हुई। आप 2010–2012 पर्यन्त विभागाध्यक्ष के पद पर आसीन रहकर 30 जून 2013 को सेवानिवृत्त हुए।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो0 शर्मा ने अपने व्याख्यान हम्बोल्ट यूनिवर्सिटी, बर्लिन यूनिवर्सिटी, फिलिप्स यूनिवर्सिटी, भाखुर्ग युनिवर्सिटी, पेरिस यूनिवर्सिटी आदि में दिया है। आपने विश्व संस्कृत सम्मेलन एवं अखिल भारतीय प्राच्यविद्या सम्मेलन में अनेक सत्रों की अध्यक्षता भी की है। वे ऑल इण्डिया ओरियण्टल कॉन्फ्रेन्स के पूना, रोहतक, जम्मू, वाराणसी के अधिवेशनों के कार्यकारिणी के सदस्य रह चुके हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में रामायण, महाभारत आदि पर आयोजित इण्डोनेशिया एवं मारिशस सत्रों की अध्यक्षता कर चुके हैं। मई 2001 में आपने थाईलैण्ड स्थित शिल्पकॉर्न यूनिवर्सिटी में 'इण्टरनेशनल संस्कृत कॉन्फ्रेन्स' की आयोजन समिति के वाइस चेयरमैन के रुप में कार्य किया। अप्रैल, 2001 में भारत, नई दिल्ली में आयोजित वर्ल्ड कॉन्फ्रेन्स में आप थाईलैण्ड से विशिष्ट अतिथि के रुप में आमंत्रित किए गए।

प्रो0 शर्मा को अनेक देशों की शैक्षणिक सांस्कृतिक यात्रा का व्यापक अनुभव है। सन् 1987 में यू0जी0सी0 के 'कल्चरल एक्सचेंज प्रोग्राम' के अंतर्गत चार माह के लिए आप जर्मनी गए तथा यू0जी0सी0 प्रोग्राम के अंतर्गत 1990 में दो माह के लिए फ्रांस गए। सन् 1998 से 2001 तक तीन वर्षों के लिए आप भारत सरकार की विदेश मंत्रालयीय संस्था आई0सी0सी0आर0 द्वारा अभ्यागताचार्य पद की प्रतिनियुक्ति पर थाईलैण्ड गए। वहाँ आपने 'संस्कृत स्टडीज सेण्टर', शिल्पाकॉर्न यूनिवर्सिटी, बैंकाक में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। आप ऑस्ट्रिया, मलेशिया, इण्डोनेशिया, इटली, मॉरीशस, स्कॉटलैण्ड, अमेरिका, जापान आदि अनेक

देशों की शैक्षणिक यात्रा कर चुके हैं। प्रो0 शर्मा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की अनेक महत्वपूर्ण समितियों के सदस्य हैं।

6.5.2 कर्तृत्व

प्रो0 शर्मा की रचनाएँ अनेक माध्यमिक स्तरीय पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त जोधपुर विश्वविद्यालय, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, दयालबाग मानित विश्वविद्यालय, आगरा आदि के पाठ्यक्रम में रही हैं। आपकी कृतियों पर अनेक विश्वविद्यालयों में शोध हुए तथा हो रहे हैं।

प्रो0 शर्मा साहित्य एवं काव्यशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान होने के साथ ही कवि भी हैं। गीतों में विद्यमान माधुर्य तथा उसके प्रस्तुतीकरण के श्रवणमाधुर्य के कारण आपको 'कवि पुँस्कोकिल' की उपाधि प्राप्त हुई है। 1986 में गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष्य में दिल्ली में आयोजित सर्वभाषा सम्मेलन में आपको संस्कृत कवि के रुप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

प्रो0 हरिदत्त शर्मा द्वारा रचित 'त्रिपथगा' कई विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में निर्धारित है तथा 'उत्कलिका' की तीन मधुर कविताएँ दिल्ली विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में सम्मिलित हैं। आपकी मौलिक रचनाएँ हैं–1. त्रिपथगा 2. गीतकन्दलिका 3. उत्कलिका 4. बालगीताली 5. आक्रन्दनम् 6. लसल्लतिका 7. नवेक्षिका। आपके आलोचनात्मक ग्रन्थ 8. संस्कृत काव्य शास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन 9. आधुनिक संस्कृत लघुकाव्य (इतिहास) 10. निबन्धनिकुन्जम् हैं। आपने कई ग्रन्थों का सम्पादन भी किया है– 11. संस्कृत सूक्ति समुच्चयः (गद्यकाव्य खण्ड) 12. Glimpses of Sanskrit Poetries and Poetry। आपके 60 से अधिक शोधपत्र विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं।

प्रो0 शर्मा को उनकी मौलिक कृतियों पर उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान तथा एक रचना पर दिल्ली संस्कृत अकादमी से पुरस्कार प्राप्त हुए। उनके गीतिकाव्य लसल्लतिका पर उन्हें 2007 में गौरवपूर्ण 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। आपकी नई–नई रचना संस्कृत गीत संकलन 'नवेक्षिका' को उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान लखनऊ ने पुरस्कार प्रदान कर आपको विद्वतजगत में प्रतिष्ठित किया है। सन् 2012 में डॉ0 शर्मा को उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा 'विशिष्ट पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। प्रो0 शर्मा को सन् 2015 में संस्कृत

में अति विशिष्ट योगदान के लिए 'राष्ट्रपति सम्मान' प्राप्त हुआ। आपकी रचना शैली संस्कृत नवगीत विधा एवं आधुनिक संस्कृत नाट्यविधा को प्रदर्शित करती है।

निर्मल ह्रदय एवं सुदर्शन व्यक्तित्व के स्वामी प्रो0 शर्मा छात्रों से मित्रवत व्यवहार रखते है एवं सभी की सहायता करने की सदैव तत्पर रहते हैं। विविध संस्थाओं द्वारा आयोजित काव्यगोष्ठियों में आप प्रायः आमंत्रित होते हैं। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारित आपकी कविताएँ एवं वार्ताएँ शिक्षा जगत में लोकप्रिय हैं। संस्कृत जगत में आलोचना एवं रचना में आपका विशिष्ट योगदान है।

6.5.2.1 गीतिकाव्य

गीतकन्दलिका– इस गीतिकाव्य में मृदुल रसभाव से गुम्फित 33 गीत हैं। इस गीतकाव्य का प्रकाशन गङ्गानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद से 1983 ई0 में हुआ। इस गीत काव्य में प्रो0 शर्मा के भावों का प्रथम प्रस्फुटन है। रागात्मकता, भावप्रवणता से परिपूर्ण इन गीतों में मधुर गुञ्जन एवं लयबद्धता है।

उत्कलिका– इस गीतिकाव्य में 33 गीतों का संग्रह है। इस काव्य–संग्रह का प्रकाशन आञ्जनेय प्रकाशन, इलाहाबाद से सन् 1989 में हुआ है। इस काव्य रचना के प्रत्येक गीत में कवि की संवेदनाएँ उजागर होती हैं। इस गीतिकाव्य में शर्माजी मानवदर्शन के नवीन मूल्यों को स्थापित करना चाहते हैं। प्रो0 शर्मा के कुछ गीतों में तत्कालिक समाज का निदर्शन किया है। वर्तमान परिवेश में नित्यप्रति सामाजिक बुराईयों यथा – नारी शोषण, दहेज प्रथा आदि पर तीखा व्यंग्य किया है। 'उलूकोत्थानम्' नामक गीत में कवि ने समाज को भ्रष्ट लोगों से लिप्त बताया है। आज समाज में सज्जन व्यक्ति का नहीं अपितु कुटिलों का ही बोलबाला है। उच्च पदों पर योग्य व्यक्तियों के स्थान पर मूर्खों को बैठाया जाता है।

'यौतकहतकम्' नामक गीत में प्रो0 शर्मा के ह्रदय में तिरस्कृत नारी की शोचनीय स्थिति को देखकर उठे हुए तिलमिलाते भाव व्यक्त हुए हैं। कन्या जन्म से चिन्तित पिता के मनोभावों का चित्रण करते हुए प्रो0 शर्मा कहते हैं– 'भृशं मे मनः पीडितम्, यथेच्छं जनैः क्रीडितम्'। प्रो0 शर्मा

ने वर्तमान के अराजकतापूर्ण वातावरण में अपने अन्तर्मन की अनुभूतियों को मनोमन्थनम्, जिजीविषा ईदृशो भवेयम् संघर्ष–सातत्यम् आदि गीतों में व्यक्त किया है।

इस गीत कव्य में रसस्वदनं, रसभङ्गिमा आदि श्रृंगारिक गीतों के माध्यम से कवि ने लौकिक प्रेम की ऊँचाई प्रदान की है। आयाति स्मरणपथम् नामक गीत में कवि ने मातृभूमि की वंदना की है तो नवयुगम् में पाश्चात्य संस्कृति पर कटाक्ष किया है। छन्दासङ्गीतगुम्फित इस काव्य में अनेक वैदेशिक यात्रावृत्त–वर्णनप्रटक गीत भी है।

लसल्लतिका– लसल्लतिका गीत संग्रह संस्कृत नवगीत परम्परा की अन्यतम् सर्जना है। इस काव्यसंग्रह में मानव जीवन की विविध संवेदनाओं से सूपूरित, आधुनिक युग के विषय समूह से समावृत्त, छन्द एवं राग के नवीन प्रतिमानों से समन्वित सुमधुर संस्कृत गीतों का संकलन है।

इस काव्य संकलन में समाज की अनेक विसंगतियों को विषय बनाया गया है। कवि का हृदय अयोग्य लोगों की नियुक्ति से खिन्न है। जिसे कवि ने विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की खिन्नता के रुप में व्यक्त किया है। इसी प्रकार दहेज के लिए नववधू को जलाए जाने से व्यथित कवि ने अपने मनोभावों को 'मृदिता हा शेफाली' नामक गीत में व्यक्त करता है। 'मातृत्व–परदारेषु' की भावना से भावित जिस देश की संस्कृति में पग–पग पर मर्यादा, संतोष व शील सदाचार की झलक दिखाई देती थी, आज उस देश की पावन भूमि आतंकवाद से आक्रान्त हो चुकी है। प्रत्येक स्थान पर धन लोलुपता, व्याभिचार भष्ट्राचार आदि का बोलबाला है। पवित्र चरित्रवाली स्त्रियों की अपमान झेलना पड़ रहा है। इसे देखकर कवि का हृदय व्यथित है और यह 'रावणरावणत्वम्' शीर्षक कविता में मर्यादापालक राम के पुनः अवतार की कल्पना करता है।

इस गीतिकाव्य संग्रह में युगीन घटनाओं से सम्बन्धित विषयों पर आधारित 37 कविताएँ है। कविता के भावों को देखकर प्रतीत होता है यह कल्पनातीत भोगा हुआ यथार्थ है, समष्टिगत होकर युग का बोध कराती है।

नवेक्षिका–इस गीत संग्रह का प्रकाशन राका प्रकाशन इलाहाबाद से सन् 2014 में हुआ। यह प्रो0 शर्मा की नवीनतम् गीतमालिका है। इस संग्रह के गीत संगीतमय–लयबद्ध है तथा हृदय

की मार्मिक संवेदनाओं को स्पर्श करते है तो दूसरी ओर सामाजिक विसंगतियों पर करारा प्रहार करते हैं। कवि ने नवेक्षिका रुपी अपनी नवीन दृष्टि से समाज की कुरीतियों एवं विसंगतियों को देखने का प्रयास किया है।

बालगीतावली– 'बालगीतावली' काव्य संग्रह में 30 गीतों का संकलन है। ये सभी गीत बाल मनोविज्ञान के अनुरुप शिक्षाप्रद एवं मनोरंजक है। इस संग्रह की सभी कविताएँ सहज ही बोधगम्य हैं। इस संग्रह की कविताओं को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है– 1. शिक्षाप्रद कविताएँ 2. बालमनोभावों को अभिव्यक्त करती कविताएँ 3 मनोरंजनात्मक कविताएँ।

शिक्षाप्रद कविताओं में कतिपय कविताओं का उपजीव्य परम्परागत संस्कृत साहित्य है। कोमल अन्तर्मन बालकों को ये कविताएँ एकता, श्रम, सत्यवादिता, अलोभ, आत्मरक्षण, पर्यावरण–रक्षण आदि शिक्षा सहजता से प्रदान करने में समर्थ है। महापुरुषों के चरितों के अनुकरण की शिक्षा कवि कविता के माध्यम से कोमल हृदय बालकों को देता है।

कवि ने प्रकृति के माध्यम से पशु–पक्षियों, मधुमक्खी, तितलियों आदि के माध्यम से बालकों मधुरता, प्रतीकात, सहिष्णुता, परोपकार, सुख–शांति आदि की शिक्षा बड़ी ही सहजता से दी है। 'गुब्बारोऽहम्' 'गच्छति गन्त्री', 'अहो वायुयानम्' आदि कविताएँ बालमन के कुतुहल का वर्णन करती है। 'गृहशुकः', 'चटका', 'अचि तित्तिलिके', 'सुन्दर–गुडिका' आदि कविताएँ बालमनोभावों का वर्णन करती हुई बाल्यकाल की क्रियाओं का स्मरण कराती है। सभी कविताएँ गीतरूप में हैं। इस गीत संवत का शिल्प अनुपम है।

डॉ0 शर्मा कल्पना के उच्चकोटि के समन्वयक एवं आधुनिक वाङ्मय के कवियों में से है। आपके गीत गेय एवं सुकुमार भावों से युक्त हैं। उनमें संवेदना एवं सहानुभूति प्रचुर रुप में है।

6.6 आचार्य रहस बिहारी द्विवेदी

कवि परिचय

सत्प्रति काव्य और शास्त्र की उभय प्रतिभा से समृद्ध विद्वानों में प्रो0 रहस बिहारी द्विवेदी का नाम सर्वविदित है। इनका जन्म 02 जनवरी 1947 ई० को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले की मेजा तहसील के समहन ग्राम में विद्या–विनय सम्पन्न द्विवेदी परिवार में हुआ। इनकी माता का नाम सुन्दरी देवी तथा पिता का नाम पं0 रामाभिलाष द्विवेदी था।

समहन गाँव का द्विवेदी परिवार संस्कृत विद्वानों में समृद्ध रहा है। अतः इसे छोटी काशी कहा जाता है। इस गाँव की समृद्ध परम्परा में देश के सुप्रसिद्ध विद्वान महामहोपाध्याय पं0 हरिहर कृपाल द्विवेदी राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित विद्यावाचस्पति, पं0 ब्रह्मादत्त द्विवेदी, पं0 कृष्ण कुमार द्विवेदी, पं0 श्रीकान्त द्विवेदी, पं0 रमाकान्त द्विवेदी प्रभृति अनेक संस्कृत वाङ्मय की विविध शाखाओं के ज्ञाता विद्वान सर्वविदित हैं। इनके परिवार के सदस्य उच्च पदों पर विद्यमान हैं।

प्रो0 रहस बिहारी द्विवेदी ने प्रथमतः अपने पिता पं0 रामभिलाष द्विवेदी से संस्कृत की शिक्षा ग्रहण की। उपाधि की दृष्टि से इनके पिता जी ज्योतिषाचार्य तथा धर्मशास्त्री थे किन्तु महामहोपाध्याय पं0 हरिहरकृपालु द्विवेदी से उन्होंने व्याकरण, दर्शन और पुराणादि विविध शास्त्रों का अध्यन किया था। अतः संस्कृत के विद्वान के रुप में इनकी प्रतिष्ठा थी।

श्री द्विवेदी ने प्रयाग से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद जबलपुर विश्वविद्यालय से एम0ए0 की परीक्षा संस्कृत विषय में कला संकाय में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त करते हुए उर्त्तीण की। तदनन्तर स्वाधयायी छात्र के रुप में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से साहित्याचार्य की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। सन् 1961 से 1970 ई0 के बीच प्रणीत संस्कृत महाकाव्यों के आलोचनात्मक अध्ययन पर आपने पी–एच0डी0 की उपाधि जबलपुर विश्वविद्यालय से प्राप्त की। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की शोध छात्रवृत्ति प्राप्त करते हुए आपने शोध कार्य प्रारंभ किया था, तभी आपकी नियुक्ति शासकीय महाविद्यालय मन्दसौर (म0प्र0) में हो गई और छात्रवृत्ति छोड़कर आपने वहाँ कार्यभार ग्रहण कर लिया। 1971 ई0 में मध्य प्रदेश लोकसेवा आयोग द्वारा आपका चयन महाविद्यालय शिक्षा सेवा में संस्कृत विषय में व्याख्याता के रुप में हो गया। उसके आधार पर आपकी प्रथम नियुक्ति शासकीय बालकृष्ण

शर्मा नवीन महाविद्यालय शाजापुर (म0प्र0) हुई। वहाँ से 1973ई0 की जुलाई में शासकीय महाविद्यालय छतरपुर में आपका स्थानान्तरण कर दिया गया। 02 मार्च 1978 को आपकी नियुक्ति जबलपुर विश्वविद्यालय में व्याख्याता के रुप में हो गई। 13 फरवरी 1983 में यहीं आपका रीडर (उपाचार्य) के पद पर चयन हो गया। 1998 में 25 सितम्बर को आपने जबलपुर से लियन पर रहकर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के शोध संस्थान में शोध निदेशक के रुप में कार्यभार ग्रहण किया किन्तु 31 दिसम्बर 1998 में पुनः रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर में आचार्य के रूप में आपने कार्यभार ग्रहण कर लिया।

प्रो0 द्विवेदी ने विश्वविद्यालय के अनेक महत्वूपर्ण पदों का निर्वाह किया तथा – कलासंकायाध्यक्ष, छात्रपाल (चीफ वार्डेन), कार्यपरिषद सदस्य, परीक्षा प्रकोष्ठ प्रभारी, प्रकाशन प्रकोष्ठ प्रभारी, विश्वविद्यालय की शोध पत्रिका विश्लेषण के सम्पादक, अध्यापक–मण्डल अध्यक्ष (दो बार) तथा एक बार मंत्री भी रहे।

संस्कृत भाषा में भाषण एवं लेखन पर आपका असाधारण अधिकार है। काव्य और शास्त्र की पंक्तियाँ आपको सदैव स्मरण रहती हैं। प्रो0 द्विवेदी छात्रावस्था से ही विद्वानों को संस्कृत पद्यों में पत्र प्रेषित करते रहे हैं। इनके पास प्रेषित पत्रों में बड़ों का सद्भाव और कनिष्ठों की प्रगति का दर्शन होता है।

अनेक विद्वानों के साहित्यिक पत्र प्रो0 द्विवेदी के संग्रह में विद्यमान है। आगत और प्रेषित पत्र प्रायः काव्यवत् आस्वाद्य है। इनकी प्राचीन कविता डायरी के पृष्ठों में इन पत्रों को अंकित किया गया है। ये सभी पत्र 1970 से 1986 के बीच लिखे गये हैं।

आपको महाकोशल साहित्य एवं संस्कृति परिषद् द्वारा 2001–2002 के **'भारती'** सम्मान से अलंकृत किया गया है। 26 मई 2005 को संस्कृत भाषा एवं साहित्य की उपलब्धियों के हिन्दी साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद द्वारा 'महामहोपाध्याय' की मानद उपाधि से, 4 नवम्बर 2006 को जैमिनी अकादमी पानीपत हरियाणा द्वारा **'भाषारत्न'** सम्मान से तथा 3 दिसम्बर 2006 को जबलपुर की साहित्यिक संस्था पाथेय द्वारा **'पाथेय शिक्षासम्मान'** सम्मान से सम्मानित किया गया। 11.01.2007 को मध्य प्रदेश (शासन) संस्कृत बोर्ड द्वारा प्रो0 द्विवेदी की

संस्कृत–शोधपत्र–संग्रहकृति **'साहित्यविमर्श'** पर **'बाणभट्टसम्मान'** तथा इक्कीस हजार रुपयों की सम्मान राशि सरस्वती की ताम्रप्रतिमा, शाल और प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। 2011 में राष्ट्रपति पुरस्कार, 2008 में म0प्र0 शासन का राजशेखरपुर (शोध प्रविधि ग्रन्ध 2008 का तीर्थ भारत पर उ0प्र0सं0 संस्थान का नामित पुरस्कार–011 में उ0प्र0 शास्त्रार्थ समिति का अन्नपूर्णासम्मान, 2016 में उ0प्र0सं0 संस्थान का वाल्मीकि पुरस्कार आपको मिले हैं।

6.6.2 कर्तृत्व

आप काव्यरचना, काव्य समीक्षा, शास्त्रीय ग्रन्थ प्रणयन और शास्त्रीय विशेष रूप से काव्य और काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों के समीक्षक के रुप में संस्कृत जगत् में प्रसिद्ध हैं। शोधपत्रों के लेखन में भी आपकी गहरी रुचि है। आपके लगभग 200 शोधपत्र हैं। आपकी पचास से अधिक आकाशवाणी वार्ताओं का यथावसर प्रसारण हुआ है। दूरदर्शन से भी आपकी अनेक कविताएँ प्रसारित हुई है। एम0ए0 पूर्वार्द्ध के छात्र के रुप में उत्तरार्द्ध के छात्रों, कुलपति विभागाध्यक्ष और विभाग के कर्मचारियों का आपने काव्यात्मक परिचय 'स्मृतिचित्रम्' लिखा तथा उसे उत्तरार्द्ध के छात्रों की विदाई के अवसर पर मुद्रित कराकर सभी को प्रदान किया गया। यह इनकी प्रथम रचना है। अन्य काव्य रचनाएँ इस प्रकार हैं–

6.6.2.1 खण्डकाव्य

तीर्थभारतम्:

यह प्रो0 द्विवेदी की प्रकाशित एव अपेक्षाकृत विशाल रचना है, जिसमें भारत के सभी तीर्थों का वर्णन 1000 पद्यों में किया गया है। इसकी हिन्दी टीका भी द्विवेदी जी ने स्वयं की है। इसमें प्रारंभ में दीर्घकाय छन्द हैं। अन्तिम भग में अनुष्टुप छन्दों का प्रयोग है। इसमें इनका उद्देश्य काव्यात्मक चमत्कार उत्पन्न करने से अधिक भक्तों को भारतीय तीर्थों से परिचित करना है। ये चाहते हैं कि इस कृति के आधार पर भक्तगण तीर्थयात्रा करें अथवा बिना तीर्थों में गए अपने आराध्य की अवस्थिति से परिचित हो। प्राक्कथन में इनका कथन है–

'तीर्थभारतम्' का प्रारम्भ मन्दक्रान्ता छन्द से हुआ है। इसमे तीर्थयात्रा का इच्छुक छोटा भाई अपने बड़े भाई से जो तीर्थयात्रा कर चुका है उसने प्रश्न करता है–

कश्चिद्भक्तो भरतवसुधातीर्थयात्राचिकीर्षु–
स्तीर्थस्थानभ्रमणविमलं स्वाग्रजं पृच्छतीति।
भ्रातर्मां त्वं कथय कृपया पुण्यतीर्थानि यानि
भान्त्याराष्ट्रं सकलदुरिक्षालने विश्रुतानि ।।

दूसरे पद्य में भारत राष्ट्र के नामकरण का हेतु कवि ने भरत (अग्नि) से स्वीकार किया है। अग्नि के उपासकों को भारत कहा जाता है। विश्वामित्र के साथ इस क्षेत्र में आने तथा निवास करने वालों के कारण इस राष्ट्र को भारत नाम दिया गया।

प्रारम्भिक नौ पद्य भूमिकापरक हैं। इसके बाद तीर्थों का वर्णन प्रारंभ है। प्रथमतः धाम का वर्णन है। कवि ने मन्दिर की तथा उसमें स्थित मूर्ति को बताने का सार्थक प्रयास किया है।

इस प्रकार सभी तीर्थों के मन्दिरों में स्थित मूर्तियों की स्थितियों का वर्णन किया गया है। बदरीनाथ के बाद द्वारिका, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम् आदि धामों के वर्णन के बाद द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग, सप्तपुरियों, शक्तिपीठों का वर्णन है। वर्णनों में मूर्तियों की स्थिति के साथ उसके पौराणिक आख्यानों का दिङ्.निर्देश किया गया है। कहीं–कहीं कवि अपनी स्थान आदि की शोध की अवधारणा को भी व्यक्त करता है। जैसे गंगा और तमसा का संगम जो गंगा–यमुना के संगम से दस कोस (तीस किलोमीटर) पूर्व में है, वहाँ वाल्मीकि का केन्द्रीय आश्रम इन्होंने स्वीकार किया है, जो इनके शोधपत्रों में भी है। इस पर आधारित एक लेख **'साहित्यविमर्शः'** में भी प्रकाशित है। सप्तपुरियों के बाद प्रयागादि त्रिस्थली पंचसरोवर और शक्तिपीठों आदि का सुन्दर वर्णन इस कृति में किया गया है। इस प्रकार यह कृति सामान्य जनता से लेकर विद्वानों, अनुसन्धानों आदि सभी के लिए परम उपयोगी है।

अन्य रचनाओं में प्रायः खण्डकाव्य कोटि की कृतियाँ हैं – मध्यप्रदेशोऽद्भुतः श्रीब्रह्मदत्तवंशम्, तमसा, काव्यसंस्तव, नवश्लोकिमानसम्, वाल्मीकेराश्रमः पदोपनिषद् आदि।

मध्यप्रदेशोऽद्भुतः

जब मध्यप्रदेश का विभाजन नहीं हुआ था, उस अवधि की रचना है। इसका प्रकाशन दूर्वा पत्रिका में हुआ है। यह एक खण्डकाव्य है। इसका प्रथम पद्य अवलोकनीय है–

उत्तरस्यां चलावर्तचर्मण्वती
दक्षिणस्यां गदद्वारि गोदावरी।
कर्क रेखेव रेवान्तरा राजते
मामको भाति मध्यप्रदेशोऽद्भुतः ।।

दूसरे पद्य में इसकी भौगोलिक विस्तृति का तुलनात्मक लेखा–जोखा है–

आङ्लशर्मण्यजापानदेजादितो–
ऽप्यस्य सीमा विशालाद्रिशालान्विता ।
केरलाद्विस्तरं बस्तरं भूदृशां
मामको भाति मध्यप्रदेशोद्भुतः ।।

तमसाः

यह प्रो0 द्विवेदी के गाँव के समीप से होकर प्रवाहित सदानीरा नदी तमसा (टमस या टौंस नदी) पर आधारित खण्ड काव्य है। यह नदी कैमूर की पहाडी से निकलकर कटनी, सतना, मैहर, रीवा जिला, मानिकपुर, चाकघाट नारी व बारी होते हुए इलाहाबाद जिले में ही सिरसा के समीप गंगा में मिलती हैं इस काव्य के पद्यों में कवि ने तमसा नदी का वर्णन किया है।

वाल्मीकि रामायण में भी इसी प्रकार का वर्णन मिलता है। वाल्मीकि रामायण के एक पद्य में सीता को वाल्मीकि के तपोवन में पहुँचाने का निर्देश करते हुए राम तमसा का वर्णन करते हैं–

गङ्गायास्तु परेपारे वाल्मीकेस्तु महात्मनः ।
आश्रमो दिव्य संकाशः तमसा तीरमाश्रितः ।।

कुछ वर्षों पूर्व तक माघ के महीने में प्रयाग में कल्पवास करने के लिए यात्री इस नदी में नाव पर कुटिया बनाकर रख लेते थे और प्रयाग जाते थे। कवि ने शैशवकाल में अवलोकित दृश्य का वर्णन इस काव्य में किया है।

काव्यसंस्तवः

यह कवि द्वारा कालिदास को लिखा गया पद्यात्मक पत्र है जिसमें कालिदास को संबोधित कर कवि ने कतिपय आधुनिक महाकाव्यकारों का परिचय दिया है। इसमें 1961 से 1971 तक की रचनाओं का उल्लेख है जब प्रो0 द्विवेदी एम0ए0 करने के बाद शोधकार्य में संलग्न थे। आपने काव्य के माध्यम से श्रीमती इन्दिरा गाँधी का सुरुचिपूर्ण वर्णन किया है–

महाकवि ! तव कविता प्रभावती
सरस्वतीश्रुतिमहती महीयते।
प्रभास्वरा परिगतशक्तिरिन्दरा
प्रवर्तते प्रकृतिहिताय पार्थिवा ।।

इस काव्य में कवि ने अनेक महाकाव्यों के वैशिष्टय को एक–एक पद्य में बताने का प्रयास किया है। आधुनिक काव्यों में अनेक विद्वानों की रुचि न देखकर खिन्न कवि अपने पत्र के माध्यम से कालिदास से अन्त में निवेदन करता है–

कामं रमन्ते त्वयि विज्ञवर्या
न चात्र काव्ये नव इत्यवद्ये।
आं याहि न त्वं कवि राजिराज !
में विक्रम भोजवरं च देहि।।

इस पत्र के अन्त में कवि ने पाँच द्वयर्थी पत्र लिखे हैं जिसमें इन्दिरा गाँधी के कार्यकाल का वर्णन है, यथा–

उदात्तभावा हृदयाभिरामा राष्ट्रीकृता सर्वसमान माना
काव्येन्दिरा पूर्वविधानशोधा प्रवर्तते साऽद्य महीयते च ।।

न पारतन्त्र्यं निजयोजनासु
स्वतंन्त्रता सम्प्रति सर्वथाऽत्र ।
राष्ट्रप्रिया सर्व विचारधारा।
प्रवर्तते सैव महीयतेऽपि ।।

भारतीयों तथा कवियों के हृदय में बसे हुये परतन्त्रता गुलामी को राष्ट्रनिवासी तथा कवि अपने को आज भी गुलाम समझते है। कवि का हृदय अत्यन्त दुखित है। जिसका भाव उनकी कविता में उभर कर आता है। कवि इस मानसिकता पर कटाक्ष करता है।

'वयं स्वतन्त्र्या' इतिभावबोधः
कष्टं न यस्मिन् प्रतिभारतेऽपि ।
जनः स तन्त्रीव विराजमानः
प्रवर्तते हन्त ! महीयते न ।।
श्रृङ्गार चेष्टा सहजाऽभिभूता
न बाधते सम्प्रति धीरवीरम् ।
सत्यं शिवं सुन्दर मेव शैश्वत्
प्रवर्ततां तद्धि महीयतां नः ।।

ब्रहादत्तवशंम् :

इस काव्य में लगभग एक सौ पद्य है। इसमें द्विवेदी जी ने अपने पिता जी के चचेरे बड़े भाई पं0 बह्मदत्त द्विवेदी (पुत्र महामहोपाध्याय श्रीहरिहर कृपालु द्ववेदी) के अचानक दिवंगत होने पर उनके प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त करने के लिए लिखा था। इसका प्रकाशन पटना की संस्कृत सम्मेलन पत्रिका में हुआ था। इसमें द्विवेदी परिवार के विशिष्ट पूर्व और आधुनिक विद्वानों का परिचय दिया गया है। वैसे पं0 हरिहर कृपालु द्विवेदी के जीवन पर आधारित श्रीरघुनन्दन त्रिपाठी की प्रशस्त रचना **'हरिहरचिरत चम्पू'** हिन्दी टीका के साथ प्रकाशित है। द्विवेदी जी अवकाश में अपने बड़े पिता स्व0 पं0 ब्रह्मदत्त द्विवेदी जी मुरारका संस्कृत कालेज, पटना के

प्राचार्य तथा बाद में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में इमेरिटस प्रोफेसर के रुप में रहे, उनसे दर्शन, व्याकरण तथा साहित्यशास्त्र की शंकाओं के समाधान हेतु मिलने जाते थे।

द्विवेदी जी अन्य मुक्तक काव्य रचनाएँ भी हैं, जिन सभी का परिचय देना यहाँ सम्भव नहीं है। **'स्थाली पुलकन्यास'** से कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किए गए हैं। आपकी रचनाएँ दूर्वा, अजस्रा, शोधप्रभा, संस्कृतसम्मेलनम्, अर्वाचीनसंस्कृतम्, सूर्योदयम्, सरस्वतीसुषमा, सागरिका, गाण्डीवम् आदि में यथावसर प्रकाशित होती रहती हैं। कविता करने से अधिक इनकी रुचि शोधपत्र लेखन, काव्य और काव्यशास्त्र समीक्षा आदि में है। संस्कृतभाषा का भाषाविज्ञान की दृष्टि से अध्ययन को प्रो0 द्विवेदी सर्वथा उचित मानते हैं किन्तु अन्य भाषाओं के लिए निर्धारित पाश्चात्य मानदण्डों के आधार पर संस्कृत का अध्ययन उचित नहीं मानते।

प्रो0 द्विवेदी राष्ट्र, प्रदेश और स्थानीय लोगों के प्रति अत्यन्त आस्थावान हैं, अतः एक ओर जहाँ 'तीर्थभारतम्' जैसी रचना करते हैं। वहीं कालिदास को संबोधित पत्रकाव्य लिखते है, दूसरी ओर इन्होंने मध्यप्रदेश के विद्वानों के परिचय में लगभग 50 पद्य लिखे हैं जो मध्यप्रदेश संस्कृत बोर्ड की स्मारिका में प्रकाशित है। अभी कुछ दिन पूर्व कालिदास अकादमी की कालिदास की लोकचेतना गोष्ठी के लिए आपने 50 पद्यों का एक शोधपत्र लिखा है जिसके सभी पद्य कालिदास की भावना के अनुरुप तथा सुक्तिमय है। प्राक्तन संस्कृत वाङ्मय की भावना को पुनः स्थापित करने का प्रयास ये मुक्तक रचनाओं में भी करते हैं।

6.6.2.2 अन्य रचनाएँ

सम्प्रति आपकी काव्यशास्त्रीय मौलिक कृति **'नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा'** का प्रकाशन सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से हो रहा है। यह कारिका ग्रन्थ अनुष्टुप छन्दों में उपनिबद्ध है। इसमें मूल कारिकाओं में विविध काव्यतत्त्वों के भेदों की परिभाषाएँ दी गई हैं तथा संग्रह कारिकाओं में उनका तात्पर्य स्पष्ट किया गया है। इसकी हिन्दी टीका भी प्रो0 द्विवेदी ने स्वयं लिखी है। इसमें प्राचीन और नवीन काव्यशास्त्रियों के मतों की तुलनात्मक समीक्षा की गई है।

साहित्यविमर्शः :

यह ग्रन्थ प्रो0 द्विवेदी के शास्त्रीय निबन्धों और शोधपत्रों का संग्रह है। इसमें प्रायः काव्य और काव्यशास्त्र से सम्बद्ध लेखों को प्रस्तुत किया गया है। यह **ग्रन्थ प्रकाशन संस्थान सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय** से प्रकाशित है। यह ग्रन्थ शोधच्छात्रों और विद्वानों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यह ग्रन्थ संस्कृतभाषा में उपनिबद्ध है। इस ग्रन्थ पर ही द्विवेदी जी को म0प्र0 शासन का 'बाणभट्ट पुरस्कार' (2007) मिला है।

संस्कृतमहाकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययनः

यह प्रो0 द्विवेदी का शोध ग्रन्थ है जिस पर जबलपुर विश्वविद्यालय द्वारा संस्कृत विषय में पी–एच0डी0 की उपाधि प्रदान की गई है। इसका प्रकाशन **न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, शाप नं0 18 द्वितीय तल चौ0 काशीराम मार्केट दुर्गाकाम्प्लेक्स –न्यू चन्द्रावल दिल्ली 110007** से हुआ है। यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रणीत है। इसमें 12 महाकाव्यों की विस्तृत समीक्षा है तथा 35 महाकाव्यों की संक्षिप्त सारगर्भित समीक्षा है। इसमें 1961 ई0 से 1970 ई० तक प्रणीत महाकाव्यों की समीक्षा की गई है।

इनमें समीक्षित अनेक महाकाव्यों पर स्वतन्त्र रूप से भी शोध प्रबन्ध लिखे गए हैं। जिसकी प्रेरणा के आधार पर प्रो0 द्विवेदी का यह शोध प्रबन्ध रहा है। इसमें प्रत्येक महाकाव्य की स्वतंत्र समीक्षा की गई है।

इस प्रकार प्रो0 रहसबिहारी द्विवेदी प्रशस्त अध्यापक, कवि समीक्षक, शोधकर्ता, शोध निर्देशक तथा संस्कृतभाषा पर असाधारण अधिकार रखने वाले संस्कृत विद्वान के रूप में आज प्रतिष्ठित है।

6.7 प्रो0 केशवचन्द दाश

6.7.1 कवि परिचय

कवि केशवचन्द्र दाश उड़ीसा प्रान्त के अर्वाचीन संस्कृत कवियों में मुक्तछन्दधारा के प्रतिनिधिभूत कवि हैं। आपका जन्म 3 मार्च 1955 को कटक (सम्प्रति याजपुर) जिले के हाटसिंह गाँव में हुआ। पिता श्री नारायण दाश तथा माता श्रीमती कुमुदिनी देवी की मृत्यु हो

जाने के कारण आपने अपना जीवन संघर्षमय वातावरण में व्यतीत किया। आपने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा–दीक्षा वैद्यराज कुलमणि मिश्र के सानिध्य में प्राप्त की। तत्पश्चात् पुणे महाराष्ट्र से एम0ए0 तथा एम0फिल्0 की उपाधि तथा पी–एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की। डॉ0 दाश ने फिल्म निर्देशन तथा फ्रेन्च भाषा में भी डिप्लोमा किया। डॉ0 केशवचन्द्र दाश श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी में न्याय दर्शन विभाग के अध्यापक एवं अध्यक्ष रह चुके हैं।

6.7.2 कर्तृत्व

प्रो0 दाश ने न केवल अर्वाचीन काव्य के क्षेत्र के साथ–साथ उपन्यास एवं कहानी की विधा को भी एक नया रूप दिया है। उन्होंने कविता को आन्तर और बाह्य विधान में एक नया रुप प्रदान किया है। आपके कविता संग्रहों में 1979 में प्रणयदीपम्, 1981 में हृदयेश्वरी, 1982 में महातीर्थम्, 1933 में भिन्नपुलिनम् तथा 1986 में अलका तथा ईशा काव्य–संग्रह प्रकाशित हुए। अब तक प्रो0 दाश 40 रचनाएँ प्रकाशित हैं।

प्रो0 केशवचन्द्र दाश विश्वविद्यालय और विभिन्न सभा–समितियों के अध्यक्षादि पदों को समलंकृत कर ज्ञान और शान्तिलाभ के सरल मार्गों का उपदेश कर जन सामान्य को सन्मार्ग में लाने का सत्प्रयास कर रहे हैं। इनकी साहित्यिक उपलब्धि के लिए इन्हें 'साहित्य अकादमी', 'बाणभट्ट पुरस्कार' सदृश अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। इनकी समग्र उपलब्धि को ध्यान में रखकर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इन्हें 'वेदव्यास राष्ट्रीय संस्कृत पुरस्कार' से पुरस्कृत किया है।

6.7.2.1 लघुकाव्य

अलका– अलका नामक काव्य में कवि केशवचन्द्र दाश का कल्पना वैभव, विषय वैविध्य, नये–नये प्रतीकों के प्रयोग, प्रसादमयी काव्यपंक्तियाँ, आधुनिक युगीन संवेदना, शास्त्रगम्भीर अर्थरमणीयता और शब्दों की व्यंजनक्षमता आदि गुण सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं।

ईशा– प्रो0 दाश का यह काव्य 'ईशा' 1992 ई0 में लोकभाषा प्रचार समिति, पुरी से प्रकाशित हुआ है। इस काव्य में कवि ने स्वंय को एक ऐसे यात्री के रूप में प्रस्तुत किया है जो सदा

नया गन्तव्य ढूँढ़ता है। **'नवनिलयान्वेषणे भ्रमति पुरातनपान्थः'** अन्त में इस खोज की परिणति प्रायः निराशा में ही होती है– 'आशाबन्धो बन्धुरः केवलः। अद्य त्वत्सत्तासन्धानम्। प्रतिभाति साक्षात् पलाण्डुकेशराविषणम्।' अपने इस खोज में वह बार–बार व्यथा, आक्रोश और क्लेश का अनुभव करता है। केशवचन्द्र दाश ने मुक्त छन्दों में लिखीं कविताओं के माध्यम से वर्तमान जीवन की विसंगतियों, परम्परा और आधुनिकता का द्वन्द्व, ग्राम की स्मृतियों को जटिल प्रतीकों और विम्ब द्वारा उजागर करने का प्रयास किया है। जैसे– निधिभावनस्य /अलिन्दे यथा /श्रूयतेभौतिकता स्वरः /विक्षिप्तदीनतासु च/चीत्करोति /शैलकल्पक्षुधा /कमहं श्रावयिष्यामि / प्रसुतिकाव्यथा मम?

(ईशा पृष्ठ–4)

इस काव्य में कवि ने प्रसादमयी शैली में जीवन के गूढ़ रहस्यात्मक तत्त्वों को उजागर किया है। कवि कहते हैं कि चिरजिजीविषा मानव की आशाओं का केन्द्र है।

'प्रणयप्रदीपम्' में प्रथम बार अपनी भावाभिव्यक्ति देने वाले कवि ने 'हृदयेश्वरी' में अपने प्रियतम को अन्तर्हृदय में ढूँढ़ने की चेष्टा की है। वर्तमान सामाजिक स्थिति को देखते हुए काव्य 'महातीर्थम्' में प्रेम एवं स्वार्थ का समन्वय प्रस्तुत किया गया है। 'भिन्नपुलिनम्' रोमाण्टिक भाव से ऊपर की कृति है। जिसमें समुद्र तट को भिन्न बताया गया है।

6.8 डॉ0 पुष्पा दीक्षित

6.8.1 कवि परिचय

डॉ0 पुष्पा दीक्षित का जन्म 12 अगस्त, 1943 को जबलपुर में हुआ। इनके पिता पं0 सुन्दर लाल शुक्ल दर्शन, साहित्य, व्याकरण के प्रकाण्ड पंडित तथा आयुर्वेद के विशेषज्ञ थे तथा माता का नाम श्रीमती जानकी देवी शुक्ल था। कवियत्री पुष्पा दीक्षित का बाल्यावस्था में ही विवाह हुआ तथा इनका जीवन विषम परिस्थितियों में व्यतीत हुआ। आपने एम0ए0 तथा पी–एच0डी0 की उपाधि रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर से प्राप्त की है। एम0ए0 में आपको तीन स्वर्णपदक प्राप्त हुए है। आपको संस्कृत के क्षेत्र में अप्रतिम योगदान के लिए 14 अगस्त, 2003

को व्याकरण विषय के लिए 'वेद वेदांग–सम्मान', महामहिम तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ0 ए0पी0 जे0 अब्दुल कलाम के हाथों से 15 अगस्त, 2004 में संस्कृत में निपुणता तथा शास्त्रपाण्डित्य के लिए 'सम्मान प्रमाण पत्र (Certificate of Honour)' प्राप्त हुआ जिसके फलस्वरुप आपको आजीवन 50,000/– रूपये की सम्मान निधि प्रतिवर्ष प्राप्त होती रहेगी। 14 सितम्बर, 2004 को मध्य प्रदेश के राज्यपाल के द्वारा 'राजकुमारी पटनायक सम्मान' तथा 1 नवम्बर, 2007 को 'छत्तीसगढ़ राज्य अलंकरण सम्मान', 26 दिसम्बर, 2010 को श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ्म, दिल्ली द्वारा 'वाचस्पति' की उपाधि प्राप्त हुई। 24 मार्च, 2011 को उत्तराखण्ड सरकार ने आपको 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से सम्मानित किया तथा 21 फरवरी, 2013 को संगमनेर महाविद्यालय ने 'संस्कृत सम्मान' से सम्मानित किया। अनन्तर इन्होंने विलासपुर के शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय में संस्कृत विषय का अध्यापन किया। वर्तमान में आप प्रोफेसर तथा विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त हो चुकी हैं तथा अध्ययन में रत हैं।

6.8.2 कर्तृत्व

6.8.2.1 गीतिकाव्य

अग्निशिखा– 'अग्निशिखा' नामक आपका गीतिकाव्य–संग्रह 1984 ई0 में प्रकाशित हुआ। इस गीतिकाव्य में एक ही रस विप्रल्लभ श्रृंगार पर आधारित 48 सर्वथा छन्दोबद्ध तथा रसाभिभूत कर देने वाले भारत के मूर्धन्य संस्कृत विद्वानों द्वारा प्रशंसित गीत हैं। यह पहला ऐसा गीतिकाव्य है जिसके सारे गीत एक ही रस पर आधारित हैं। पुष्पा दीक्षित की 'अग्निशिखा' नारीवाद से प्रभावित है। आपने इस काव्य में कवियत्री ने नारी के प्रेम और वेदना की तीव्रता को अग्निशिखा के समान बताया है। उनका मानना है कि अग्निशिखा जैसी नारी सहसा ही अपने तेज दृगो बाणों से हृदय के टुकड़े–टुकडे कर डालती है।

शाम्भवी गीतिकाव्य– यह डॉ0 पुष्पा दीक्षित का दूसरा संस्कृत गीति–काव्य है। इस काव्य में वर्तमान सामाजिक विसंगतियों पर तीखा प्रहार किया गया है। इस गीत संग्रह के अनेक गीत दूर्वा पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं।

डॉ0 पुष्पा दीक्षित ने सौन्दर्य लहरी का अनुवाद एवं व्याख्या की है। डॉ0 पूर्णचन्द शास्त्री द्वारा रचित महाकाव्य 'अपराजिता वधू' का भी आपने अनुवाद किया है। आपकी व्याकरण से सम्बन्धित अनेक कृतियों प्रकाशित हो चुकी है।

6.9 प्रो0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'

6.9.1 कवि परिचय

प्रो0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि' जी का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद के शकरा नामक गाँव में 02 अक्टूबर, 1962 को हुआ। आपके पिता का नाम पं0 कामता प्रसाद पाण्डेय तथा माता का नाम श्रीमती रमादेवी है। आपकी उच्चशिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हुई। तदनन्तर हिन्दी विषय से एम0 ए0 आपने कानपुर विश्वविद्यालय से तथा साहित्याचार्य की परीक्षा आपने सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से उत्तीर्ण की।

वर्तमान में आप राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान के गंगानाथ झा परिसर में आचार्य के पद पर हैं। आपकी रचनाओं के लिए आपको अखिल भारतीय कालिदास समारोह, कण्वाश्रम द्वारा 1993 में 'कालिदास सम्मान', 1995 उ0 प्र0 संस्कृत संस्थान, लखनऊ द्वारा 'सामान्य पुरस्कार', भाऊराव देवरस सेवान्यास, लखनऊ द्वारा 1996 में पं0 प्रताप नारायण मिश्र स्मृति साहित्य पुरस्कार, पण्डित राज जगन्नाथ पुरस्कार, व्यासध्वज पुरस्कार (2000 एवं 2001) तथा सर्वाधिक प्रतिष्ठित 'राष्ट्रपति पुरस्कार' प्राप्त हो चुका है।

6.9.2 कर्तृत्व

संस्कृत में मौलिक लेखक के क्षेत्र में गीतिकाव्य के साथ–साथ कथा एवं नाट्य विधा में भी लेखन किया है। संस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी में भी आपके काव्यसंग्रह प्रकाशित है। आपके तीन शोध–समीक्षा ग्रन्थ प्रकाशित है। आप 15 वर्षों तक आकाशवाणी इलाहाबाद से संस्कृत कवि एवं संस्कृत नाट्य कलाकार के रूप में सम्बद्ध रहे। 1987 में तथा 1990 में आपको अभिनय के लिए पुरस्कृत किया गया है। आप विश्व संस्कृत कवि सम्मेलन तथा अखिल भारतीय संस्कृत कवि सम्मेलनों में निरन्तर कविता पाठ करते रहते हैं।

6.9.2.1 गीतिकाव्य

निस्यन्दिनी– निस्यन्दिनी प्रो0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि' का प्रथम गीतिकाव्य है। इसका प्रकाशन देववाणी परिषद् दिल्ली से वर्ष 1995 में हुआ था। इसका द्वितीय संस्करण भी 2011 ई0 में निकला है। निस्यन्दिनी में सब 55 गीत हैं। इनमें गीत भी हैं और गजलें भी हैं। सारे गीत एवं गजल स्वतंत्र हैं। गीत विविध स्वरुप वाले, विविध आस्वाद वाले तथा विविध भाव वाले हैं। कहीं पर आत्मा का चित्रण है, कहीं राष्ट्रप्रणयोद्‌गार है, तो कहीं रुप सौन्दर्य एवं प्रेम की अभिव्यक्ति है। इस प्रकार से निस्यन्दिनी के गीतों और गजलों का संक्षिप्त परिक्षेत्र निश्चित किया जा सकता है।

निस्यन्दिनी के कुछ गीत पारम्परिक छन्दों में हैं, तो कुछ स्वतंत्र पोपज्ञ छन्दों में है। निस्यन्दिनी का प्रथम गीत जो भगवती सरस्वती की आराधना से जुड़ा है, 'दयसे न कथम्' पारम्परिक तोटक छन्द में लिखा गया है। यह संस्कृत की आधुनिक कविता का नया प्रयोग है कि पारम्परिक वृत्तों में भी गीत लिखे जा रहे हैं। कवि यहाँ वीणापाणि से कहता है कि हे! कृपा कुल क्रान्ति वाली माँ सरस्वती अपने विनीत पुत्र पर दया करो।मानवीय चेतना की भक्तिव्यता को न देखते हुए कवि निस्यन्दिनी की 'अयि मानवीये चेतने' गीत में मानवीय चेतना से पूछता है कि तुम्हारी भक्तिव्यता कहाँ चली गयी? कथा दुष्टों, दूषकों दानवों के द्वारा उसे चुरा लिया गया क्या? जीवन की विचित्र विडम्बनाओं एवं व्यथाओं से कवि जब दुखी हुआ है तो उसको गीत पंक्तियों में भाव ऊभरे हैं। डॉ0 मणि के 'व्यथावल्लरी' शीर्षक गजल में जीवन के उस रूप को देखा जा सकता है। जहाँ वे कहते हैं कि रात–दिन वेदना के मूच्छानाओं के सहारे टिकी हुई मन्जुरी वाली मरी व्यथा वल्लरी बढ़ रही हैं जीवन चिन्ता के द्वारा घूमायित कर दिया गया है। सो वह सुन्दर भाग्य रेखा कहाँ है? निष्यनन्दिनी के रुप सौन्दर्य व प्रेम को अभिव्यक्ति 'जीवितंत्वद्धीनम्' गीत में देखने को मिलता है। भारत की दुर्दशा को देखकर कवि 'भारतं रे' गीत के कहता है कि आज भारत घने अंधकार में सांसा ले रहा है। भारत संसार रुपी आंगन में दिनों दिन वृद्ध होता चला जा रहा है।

इस प्रकार से निष्यन्दिनी में गीतों एवं गजलों में बहुविध आस्वाद के दर्शन होते हैं। भाषा में माधुर्य एवं प्रासाद गुण का अभिन्निवेश है। छन्दों में कसावट है तथा बिना किसी प्रयास के नैसर्गिक अभिव्यक्तियाँ है। कवि ने वही कहा है, जिसको जिया है। निस्यन्दिनी को पढ़ने पर कुछ ऐसे ही निष्कर्ष निकले हैं। शैली में प्रवाहमयता है, रस और रीतियाँ सहज ही गीतों में आई हैं।

नीराजना

'नीराजना' प्रो0 जनादेन प्रसाद पाण्डेय 'मणि', द्वारा विरचित एक भक्ति काव्य है। इस काव्य के दो भाग हैं। पूर्व भाग एवं उत्तर भाग। पूर्व भाग में देवाधिदेव शिव को सम्बोधित करके श्लोक लिखे गए हैं तथा उत्तर भाग में भगवान विष्णु को सम्बोधित करके श्लोकों की रचना हुई है। भक्ति एवं स्तोत्र के व्याज से प्रस्तुत काव्य में युगीन सम्वेदनाएँ, युगीन भावबोध तथा इस विडम्बनापूर्ण युग का समूचा परिचित्र खींचा गया है। कवि का मानना है कि आज जो अकांड ताण्डव दिख रहा है इसको समाप्त करने की क्षमता सिर्फ दैवीय शक्तियों के पास है। इसीलिए कवि ने इन दोनों प्रसिद्ध देवों के सान्निध्य में अपनी वागर्चना प्रस्तुत की है। प्रत्येक श्लोक में शिव का अलग सम्बोधन है तो वैसे ही प्रत्येक श्लोक में विष्णु का अलग–अलग सम्बोधन है। पूर्व भाग में भगवान शिव के समक्ष कवि ने अपने व्यक्तिगत जीवन की दुरभि संधियों एवं पीड़ाओं की अभिव्यक्ति दी है, तो फिर देश और समाज का सामाजिक एवं राजनैतिक परिदृश्य भी भगवान के समक्ष व्यक्त किया गया है।

कवि कहता है कि आज भी सरस्वती की साधना में लगे हुए लोगों का उपहास होता है उस पर कवि भगवान शिव से कहता है कि अंधकटिपु! दृष्टों के द्वारा अर्थ–पिशाचों के द्वारा तथा धन के बल से जो जन उन्मत्त हो गए हैं, जिनके स्वरों में समृद्धि आ गई है, ऐसे अपने अन्यतम उल्लुओं के चरित्र को धारण करने वाले सम्बन्धियों एवं मित्रों के द्वारा अनेक दुर्व्यग्यों के साथ शब्दार्थ मात्र धन वाले अपने कर्म में निरत मेरे सारस्वत जीवन का उपहास किया जा रहा है।

उपर्युक्त पंक्तियों में लोक के एक कड़वे सच को अभिव्यक्ति दी गई है। राजनीति पर प्रहार करता हुआ कवि भगवान शिव से कहता है कि हे शंकर! यदि राष्ट्र में इस समय आरक्षण की माया से अयोग्यता विजयिनी हो रही है तो इस राष्ट्र लोक को छोड़कर योग्यता कहाँ चली जाय।

आगे इन्हीं भावनाओं को प्रवाह देता हुआ कवि भगवान शिव से कहता है कि हे शिव! शिक्षामय शासन से संस्कृत देवताओं के द्वारा अर्जित तथा बुद्धिमानों के द्वारा धारण किया हुआ राष्ट्र धूर्त पिशुनों (निदंको) तथा भ्रष्टों के आश्रय को देखता हुआ अत्यन्त क्रन्दन कर रहा है एवं कांप रहा है। धर्म को त्याग कर हमारी अभिनव प्रभा को धारण करने वाली राजनीति व्याप्त हो रही है। ऐसे अवसर पर स्वार्थाअंध नेताओं द्वारा सीमित कर दिए गए धर्म के स्वर को तुम्हारे द्वारा सुना जाना चाहिए। आगे चल कर कवि यहाँ तक कहता है कि ऐसा लगता है कि सुन्दर कुलवधुओं के रूपों को छोड़कर लज्जा इस समय योग्य लोगों के मुख मण्डल पर उद्‌माषित हो रही है। युग का ऐसा विडम्बनापूर्ण दृश्य कैसे समाप्त हो सकता है। यही दुहाई कवि भगवान शिव के सामने लगाता है।

नीराजनाकार भगवान शिव से यहाँ तक पूछता है कि हे प्रमथाधिय रोगों से व्याकुल, शैय्या पर रोती हुई माँ को छोड़कर तथा वृद्धावस्था से घिरे हुए द्वार पर विद्यमान पिता को भी त्याग कर जो पुत्र प्रसन्नतापूर्वक तुम्हारे मंदिर में जाकर उन षोडष वस्तुओं के द्वारा तुम्हारा पूजन करते है, क्या उनको भी तुम स्नेह करते हो ?

भगवान शिव से पूछे गए इस प्रश्न में समूचा अनैतिक एवं अनास्थालोक अभिव्यक्ति को प्राप्त करता है। कवि यहाँ तक कहता है कि ऐसे लोग आपके परिसर में जाते हुए मूर्च्छा से जड़ी भूत होकर अपने प्राणों को क्यों नहीं त्याग देते। उन्हें जीने का कोई हक नहीं है। सम्बन्धों की सारी गरिमा समाप्त हो गई है।

कलियुग का मनुष्य अत्यधिक स्वार्थी हो चुका है वह सिर्फ अपनी पत्नी और पुत्र से ही सम्बन्ध रखता है अन्य कोई भी उसके लिए महत्त्वपूर्ण नहीं है। यह कहता है कि हर इस भोग विपिन में यदि कोई मेरी है तो वह केवल मेरी प्रिया पत्नी और इस त्रिभुवन में उसके पिता का घर

मेरा कुछ हो सकता है, यह मेरा सुन्दर पुत्र है। यह मेरी गुणालंकृत पुत्री है। अन्य किसी को मैं नहीं जानता ऐसा कहता हुआ दुर्जन संकीर्णता को प्रेषित कर रहा है। श्लोक संख्या–38, नीरा0 पूर्व भाग।

भगवान शिव से ऐसे ही अनेक प्रकार के निवेदनों से नीराजना का पूर्व भाग पड़ा है, जहाँ एक समाधान मार्ग, कल्याण का एक मार्ग कवि देवाधिदेव शिव के श्री चरणों में ढूँढ़ता है जिससे मानवता की रक्षा है।

नीराजना को उत्तर भाग के प्रत्येक पद्य भगवान विष्णु को समर्पित है। उसमें दशावतार की स्तुति भी की गई है तथा भगवान विष्णु से सात्विक युग के स्थापना के प्रति दृढ़ता का भाव व्यक्त किया गया है। कवि आज झूठी शपथ के लिए गीता पर रख रहा है। इस बात को नीराजना के पूर्व भाग में उठाया गया है। कवि भगवान विष्णु से कहता है कि हे मुधरिपु! तुम्हारी गीता इस समय उन दृष्टों के द्वारा न्यायालय में मलिनता से बंद अक्षरों से घिरी हुई झूठी शपथ के उपयोग में लाई जा रही है। हे हरि! गीता के उन तत्वों को आत्मसात् करने के लिए यहाँ पर कहीं भी कोई दिव्य ज्ञान के रहस्य के लोभ से विकल निष्ठावती समीहा (इच्छा) नहीं दिखाई दे रही है।

गीता को न पढ़ने की प्रवृत्ति से कवि दुःखी प्रतीत होता है। आज आस्थालु व्यक्ति भी जिसने भगवत चरणों में समर्पण कर दिया है उसका भी उपहास करने में बख्शा नहीं जा रहा है। मणिजी इस संदर्भ में भगवान विष्णु से कहते हैं कि हे प्रभो! जिसने सम्पूर्ण संसार को तुम्हारी माया के द्वारा विरचित एवं मोहित मानकर नैवेद्य की भांति अपने जीवन को तुम्हारी शरण में समर्पित कर दिया वह तुम्हारी पूजा में समूची चैतसिकसम्पत्ति को अर्पित कर देने वाला तुम्हारी वन्दना में व्यस्त धर्मात्मा भी पृथ्वी पर नास्तिकों द्वारा क्यों हंसा जा रहा है।

इस नीराजना के उत्तर भाग में दार्शनिक सन्दर्भों से जुड़े प्रश्न भी कवि भगवान से करता है। जैसे कवि कहता है हे यदुपति! मैं यह मानता हूँ कि प्राणि अपने पूर्व जन्म के सुकृत्य (पुण्य) अथवा दुष्कृत्य (पाप) को भोगते हुए विचरण कर रहे हैं तथा उनका न भोगा हुआ वह इतर

फल नहीं क्षीण हो रहा है तो प्रथम जन्म में पृथ्वी पर प्राणियों ने किस फल को भोगा था तथा उस समय तुम्हारी प्रेरणा कैसे हुई थी, यह जानना चाहता हूँ।

नीराजना की समूची यात्रा में कवि का भक्तियुक्त स्वर गूँजता हुआ दिखाई देता है। कवि सात्विक युग के स्थापना की तरफ, विकास की तरफ तथा भगवत चरणों का कीर्तन न करते हुए समूची जिंदगी को जीना चाहता है। इस संदर्भ में कवि भगवान विष्णु से कहता है कि हे विष्णु! हमारी निर्मल एवं समर्पणमयी आस्थालता को जड़ से सुखा देने के व्रत में संलग्न जो पापवायु सब तरफ से बह रही है उसे नष्ट करके उस विशेष प्रकार के सात्विक युग की स्थापना कीजिए। जिससे तुम्हारे चरित्र का गायन करते हुए मेरे प्राणों के द्वारा कल्याण को चुन लिया।

उपर्युक्त पंक्तियों में मुरझाती हुई आस्थालता को देखकर कवि का युगबोध ऊभर कर सामने आता है। उने चिन्ता है इसलिए उसका भगवान से निवेदन है।

मणि जी ने प्रस्तुत काव्य में कृष्ण कथा एवं राम कथा की समीक्षा की है। वे औपचारिकता के साथ सम्बन्धों की व्याख्या को राम का चरित्र मानते हैं तो अनौपचारिकता के साथ प्रीत की व्याख्या को कृष्ण का चरित्र मानते है। जैसे–वे नीराजना में कहते है हे ईश्वर या हे कृष्ण या हे विष्णु! रावण को नष्ट करने के लिए तुम जहाँ मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम हुए वहीं कंस का कध करने के लिए निरूपमेय ब्रजमंडल में लीलात्मक श्री कृष्ण हुए। औपचारिकता के साथ सम्बन्ध की व्याख्या ही रामायण है। राम कथा है तथा अनौपचारिकता के साथ प्रेम की प्रत्यक्ष ज्ञेयता ही कृष्णामृत (कृष्णकथामृत) है।

कवि की अपनी मान्यता है कि राम पूरे जीवन मर्यादा पुरुषोत्तम के व्रत को निभाते रहे तथा कृष्ण ने समूचे जीवन में लीला महानायक के व्यक्तित्व को जिया।

प्रो0 मणि ने भगवान कृष्ण को लोक–लोकोत्तर व्यक्तित्व को देखकर जो प्रश्न उठाए हैं वे कितने साभिप्राय एवं सौचित्य है। नीराजना के उत्तर भाग के अन्तिम श्लोक में तो कवि अपने पूरे संस्कृत जीवन को विष्णु की अराधना मानकर चलता है। मणि जी भगवान विष्णु से कहते हैं कि हे विष्णु मेरे चित्त में तुम्हारा ही निवास हो मेरे नेत्रों में तुम्हारी ही छवि हो, तुम्हारा ही

निवास हो, मेरे मुख में हो, मेरी जिह्वा तुम्हारी स्तुति के अमृत पात्र का पान करे, तुम्हारे गीत मेरे दोनों कानों को पवित्र करें, मेरी लेखनी प्रसन्न हो, मेरा समूचा संस्कृत जीवन तुम्हारी आराधना हो जाए।

उपर्युक्त पद्य में कवि की भगवद् भक्ति अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है। इन्हीं प्रकार के श्लोकों एवं विचारों से नीराजना का उत्तर भाग भी भरा पड़ा है।

नीराजना के पूर्व भाग एवं उत्तर भाग का अवलोकन करने पर निष्कर्ष रुप में यह कहा जा सकता है कि कवि मणि के चित्त में भगवद् भक्ति के प्रति अगाध निष्ठा है। संसार के अमंगल को नष्ट करने की क्षमता सिर्फ परमेश्वर में है। इसीलिए कवि ने परमेश्वर के चरणों में अपने–आप को समर्पित कर दिया है। भावों की दृष्टि से नीराजना में अनन्ता के दर्शन होते है। युग की समूची विडम्बना भगवान के सामने व्यक्त करके कवि भगवद विग्रह में लीन होना चाहता है।

छन्द की दृष्टि से सम्पूर्ण नीराजना में शार्दुल–विक्रीडित छन्द है। भक्ति प्रवण भाषा काव्य को भक्ति रस से आप्लावित कर देती है। अनुप्रासादिक अलंकार सहज ही काव्य की शोभा बढ़ाते है। माधुर्य एवं प्रसाद गुण के अलावा विष्णु के दशावतार वर्णन में ओज गुण के भी दर्शन होते है। रीति की दृष्टि से समूचा काव्य वैदर्भीरीति से जुड़ा है। काव्य की आत्मा के रुप में भक्ति रस समूचे काव्य में व्याप्त है।

रागिणी

'रागिणी' प्रो0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि' द्वारा विरचित एक गीतिकाव्य है। जैसा इसके नाम से ही पता चल जाता है कि इस ग्रन्थ का सम्बन्ध रागों से है। रागिणी पंच रागात्मिका है। प्रथम राग देवनिष्ठा राग है, दूसरा राग लोकराष्ट्र राग है तीसरा राग रूपसौन्दर्य राग, चौथा राग जीवनरहस्य राग और पंचम राग प्रर्कीणवस्तु राग है। कुल मिलाकर रागिणी चौव्वालीस गीतों या गजलों का यह संग्रह है। कवि देवनिष्ठाराग में अपने समग्र दुःखों के विनाश के लिए माधव कृष्ण से प्रार्थना करता है– 'माधव ! दुःखततिं मम नाशय' शीर्षक गीत में कवि कि उसके जीवन–मरुस्थल में सुधास्यन्दिनी बह जाए। कवि यह देखकर दुखी है कि विश्वास

आज आहत हो गया है। चारों ओर स्वार्थ की छललिप्त माया व्याप्त हो रही है। भाव शून्य परिवेश में उसकी कोमल कविता क्लिष्ट होती जा रही है। कवि माधव से कहता है कि इन समग्र विडम्बनाओं के औचित्य का पुनःमूल्यांकन कीजिए। मेरे दुःखों को हे माधव! नष्ट कीजिए।

ऐसे ही इस राग में सरस्वती, राम, कृष्ण, गणेश, शिव तथा व्यास से कवि अपना निवेदन प्रस्तुत करता है। रागिणी का दूसरा राग लोकराष्ट्र की एक गजल दर्शनीय है, जिसमें स्वयं गीतिका (गजल) ही वक्तृ है। वह कहती है कि मेरा सत्कार इसलिए करते हो कि मैं कानों को अच्छी लगती हूँ। अरे मैं इस शताब्दी की गीतिका हूँ। मुझे पलकों से चूमते क्यों नहीं हो। तुम्हारे सामने तुम्हारी संस्कृति आग में धकेली जा रही है। पाश्चात्यों के द्वारा जलाए गए मुख वाला होकर भी लजाते नहीं हो।

'भारतं जुहोति रे सखे' शीर्षक गीत में राष्ट्र की एक बहुत बड़ी विडम्बना अभिव्यञ्जित होती है। कवि कहता है कि वेदनानुविद्ध पिजंड़े में भारत विराव (रोने की ध्यनि) कर रहा है, जाति, धर्म रुपी दैत्यों की लड़ाई में मन दुःखी हो रहा है। पेडों पर बैठी हुई कोयल शब्द भेदी बाण से शंकित होकर मौन है। भ्रामरी व्यथा पुरस्कृत हो रही है। मृगो के द्वारा मरीचिका ढूँढ़ी जा रही है। स्वार्थ, पाप के गर्त्त में गहवर में भारत प्रवेश कर रहा है। रागिणी के इस राग में ऐसे ही गीत संग्रहीत हैं। 'प्रणमामि कथं विश्वं' गीत में कवि कविता से कहता है कि हे कविते विश्व को बधुत्वमय कैसे बनाएं। आज एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को पवित्र दृष्टि से नहीं देख रहा है। सबके सब विष वृक्ष की लता को बोने में लगे हुए है। विश्वास रुपी वृक्ष के नष्ट हो जाने के बाद कोयल की वाणी कैसे सुनाई पड़ सकती है। हे कविते! विश्व को शिव–सत्य का घर कैसे बनाया जा सकता है।

उपर्युक्त गीत में अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को उभारा गया है तथा कविता से ही बात की गई है। विश्व में आतंकवाद का घिनौना कृत्य देखकर कवि भगवान से इस संसार को बताने का निवेदन करता है। 'रक्षलोकसंघातम्' गजल में यही बातें अभिव्यक्त हुई हैं। शक्ति का पुंज अमेरिका देश भी अपने को सुरक्षित नहीं महसूस कर रहा है।

प्रेम रोगों का या कैसे सम्पन्न हो सकता है, जब रात–दिन ईर्ष्या रुपी दुर्मुखी की दीक्षा दी जा रही है। उपर्युक्त गजल में सम्बन्धों की विडम्बनापूर्ण स्थिति को कवि अभिव्यक्ति देता है।

रागिणी का तीसरा राग रूपसौन्दर्य राग है। इसमें गीत एवं गजल, प्रेम एवं रूपसौन्दर्य की अभिव्यक्ति से जुड़े हैं कवि एक गजल में प्रियतमा से कहता है कि हे प्रिय! वो सुन्दर दिन कहीं चले गए, पलकों की विच्छित्तियों के यज्ञों के सहारे जिए जा रहे दिन कहाँ चले गए। जिन दिनों में तेढ़ी–मेढ़ी मुस्कान गूँथी नहीं गई ऐसे जड़ दिन कैसे भोगे जा सकते है।

उर्पुयुक्त पंक्तियों में प्रेम का समर्पित स्वरुप व्यंग्य होता है। कवि प्रियतमा के व्यक्तित्व की मधुरमतम विच्छित्तियों पर अपनी बात प्रस्तुत करता है। एक गजल में कवि कहता है कि हे प्रियतमे! तुम मेरे जीवन की कल्पलता कैसे हो सकती है। जब स्वयं मंजुलता तेरे अभिनिवेश को छोड़कर रही है। प्रस्तुत गीत में सौन्दर्य की ढहती हुई नैसर्गिकता एवं व्याप्त होती हुई कृ त्रिमता पर कवि का व्यंग्य है। रुप–सौन्दर्य की अभिव्यक्ति 'त्वदीयानने' शीर्षक गजल में पूरी तरह से देखने को मिलती है। जहाँ कवि कहता है कि तेरे मुख पर पूर्ण चन्द्रप्रभा का बार–बार नर्तन हो रहा है। चमकती हुई आँखों में सुखों की स्वप्न गाथा बार–बार जम्भाई ले रही है। तुम्हारे केशपाशों के द्वारा काले मेघों की घटा चुरा ली गई हैं लालिमा को धारण किए हुए होठों पर पल्लवों की चिकनाई का उद्भास देखने को मिल रहा है। पता नहीं वह कौन सी तूलिका है जिसके द्वारा विधाता के द्वारा तुम चित्रित की गई हो। तुम्हारे मधुर व्यक्तित्व में समग्र भावात्मक प्रत्ययों की स्थिति स्पर्धा कर रही है। भावात्मक प्रत्ययों से आशय लावण्य, माधुर्य, रस, सौन्दर्य आदि से है।

उपर्युक्त गजल में कवि अपनी प्रियतमा में सौन्दर्य का एक मानक देखता है तथा उसी मानक को पंक्तियों में पिरोता है।

'तवाञ्चलम् विहाय' शीर्षक गजल में गीतकार यह कहता है कि तुम्हारे आंचल को छोड़कर मैं जीवन की कामना नहीं करता। तुम्हारी अर्चना से पृथक में चन्दन की कामना नहीं करता। मेरे नेत्रों एवं पलकों में तुम्हारी जो छवि उद्भासित हो रही है, उसके आर्जव (नैसर्गिक गुण/ अभिजात्य) को छोड़कर मार्दव (मृदुता) की कामना नहीं करता है। उसी प्रकार इस राग की

बहुत सी गजलें हैं जिसमें प्रेम एवं सौन्दर्य का निसर्ग रूप व्यंग्य हुआ है। प्रेम के प्रति कवि की धारणा है कि वह नितान्त पवित्र भाव है। उसमें ओछेपन का नितान्त अभाव है। सौन्दर्य नैसर्गिक होता है, उसे कृत्रिमता से बढ़ाया नहीं जा सकता। प्रस्तुत राग में ये बातें अभिव्यक्त हुई हैं।

रागिणी का चौथा राग जीवनरहस्यराग है। प्रस्तुत राग में जीवन के मर्मों एवं रहस्यों को अभिव्यक्ति मिली है। 'ज्वालितं मे यया हव्यवज्जीवनम्' गीत में कवि कहता है कि जिसके द्वारा मेरी जिन्दगी हव्य की तरह जला दी गई, वह पुरानी व्यथा तो विलय को प्राप्त नहीं किन्तु जिसके प्रताप से शिवत्व का वरण कर लिया गया वह प्रगल्भ कथा महत्व को प्राप्त नहीं हुई।

उपर्युक्त पक्तियों में अभिव्यक्तियों के प्रति जो कवि की अवधारणा है जो अनकही पीड़ा है वह अभिव्यक्ति को प्राप्त करती है। हम चाह कर भी बहुत सी बातें कह नहीं पाते उन्हें आंसुओं के माध्यम से हम व्यक्त कर देते हैं। हमारे समर्पण की तो चर्चा होती है। किन्तु हमारा प्रताप कहने से तो लोग भागते हैं।

'कंश्रावयामिगीतम्' शीर्षक गजल में कवि कहता है कि जब अनुराग का महत्व ही छिन्न–भिन्न हो गया तो गीत किसे सुनावे, जब अनुभूति का धर्म ही छिन्न–भिन्न हो गया तो अनीति का वर्णन किससे करें। मन की वह अभिलाषा जो पवित्र मंत्रों से अभिषिक्त नहीं है, तो उस वासना की प्रसूति का हर प्रकार से कैसे अभिनन्दन करें।

कवि जीवन को परिभाषित करता है। एक गजल 'जीवनंबन्धो' में वह कहता है कि किसी के लिए उस मीठी स्वप्न प्रतिनियों का सुन्दर नृत्य जीवन है तथा किसी के लिए उस मीठी स्वप्न प्रतीति का मौन तथा तीखा दूतवृत्य जीवन है। यह संघर्ष की नाव है और संघर्ष ही महासिंधु है। संघर्ष की बनी हुई पतवार है, तो सघंर्ष ही जीवन है। दृष्टि सूख गई, प्रतीक्षा में शरीर जीर्ण हो गया। क्या प्रतीक्षा का यह परिणाम जीवन नहीं है।

उपर्युक्त गजल में जीवन की परिभाषा अभिव्यक्त होती है। जीवन तो विचित्र विडम्बनाओं का संघात (मिलन/सन्निधि) मात्र है। यह सत्य जीवन की विविध परिभाषाओं में ऊभरकर सामने आता है। रागिणी में ऐसे ही जीवन परक गीत एवं गजल प्राप्त होते हैं। एक गीत में तो कवि

ने यहीं तक कह देता है कि हे जीवन ! तुम करना क्या चाहते हो, मुझसे क्या चाहते हो, तुमसे पूछना चाहता हूँ।

रागिणी का पांचवा राग प्रकीर्ण वस्तुराग है। इसमें संस्कृत, मेघ, हिमानी इत्यादि पर गीत–गजल लिखे गए है। इस प्रकार रागिणी का पञ्चरागात्मक कलेवर स्पष्ट किया जा सकता है। गीतों एवं गजलों में अन्त्यानुप्रास का निर्वहन किया गया है। भाषा सम्प्रेषणीयता को धारण करने वाली है। माधुर्य, एवं प्रासाद गुणों की अधिकता है। रीति तो वैदर्भी है और सर्वत्र ध्वनि काव्य का दर्शन होता है।

6.10 अभ्यास–प्रश्न

6.11 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. रागिणी, लेखक – डॉ0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'
2. निस्यन्दिनी, डॉ0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'
3. जिजीविषा, डॉ0 जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि'
4. वाडवाग्निः, प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र
5. अभिराज – वाङ्मयदर्पण – पं0 प्रो0 अनिल प्रसाद गिरि

खण्ड–02 आधुनिक संस्कृत–साहित्य : नाटक, गद्यकाव्य एवं प्रकीर्णकाव्य

खण्डपरिचय

इकाई–7 में आधुनिक नाटक, नाटिका, एकांकी आदि का स्वरूप तथा आधुनिक नाट्य–साहित्य रचना का काल–खण्ड का वर्णन है। इकाई–8 में कतिपय आधुनिक नाटककारों का तथा उनकी रचनाओं का सामान्य परिचय है। इसी प्रकार इकाई–9, 10, 11 तथा 12 में आधुनिक गद्यकाव्य, शतककाव्य, चम्पूकाव्य आदि का तथा गद्यकारों का सामान्य परिचय दिया गया है। पूरे प्रश्नपत्र में 12 इकाईयाँ है।

इकाई–07 नाटक का स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

7.0 प्रस्तावना

7.1 उद्देश्य

7.2 नाटक का स्वरूप

7.3 आधुनिक नाट्य–साहित्य की रचना का काल–खण्ड

7.4 काव्य के प्रकार

7.4.1 दृश्य काव्य के भेद

7.5 नाटक का आधुनिक लक्षण

7.6 एकांकी का स्वरूप

7.6.1 एकांकी का आधुनिक लक्षण

7.7 नाटिका का आधुनिक लक्षण

7.8 अभ्यास–प्रश्न

7.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

7.0 प्रस्तावना

वर्तमान युग संस्कृत साहित्य की रचना का समृद्धि काल माना गया है। संस्कृत में निरन्तर काव्य सर्जना हो रही है। यह निश्चित है कि इस युग में कोई भी कादम्बरी जैसी कथा या अभिज्ञानशाकुन्तलम् जैसा नाट्य–साहित्य नहीं लिख सकता परन्तु आधुनिक गद्यकार और नाटककार अपने साहित्य में वर्तमान समाज के अनुरूप लेखन कर रहा है। मूल प्रवृत्तियों के साथ–साथ गद्य–पद्य तथा नाट्य साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन स्वभाविक है। इस इकाई में हम नाटकों तथा कथा–कहानी आदि के आधुनिक लक्षण एवं उसकी मूल प्रवृत्ति में हुए परिवर्तन को जान सकेंगे।

7.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद नाटक के आधुनिक स्वरूप को समझ सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आधुनिक नाट्य–साहित्य के कालखण्ड को जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद नाटक, नाटिका तथा एकांकी के आधुनिक लक्षण को जान सकेंगे।

7.2 नाटक का स्वरूप

उन्नींसवी–बीसवीं शती ई0 (1800 से लेकर 1990 ई0 तक) संस्कृत भाषा में लिखे गए संस्कृत नाटकों ने संस्कृत भाषा की जीवन्तता को सिद्ध कर दिया है। इस अवधि में काव्य की प्रत्येक विधाओं में संस्कृत भाषा में रचना हुई किन्तु नाटकों की संख्या सबसे अधिक थी। इस कालखण्ड में लगभग दो सौ नाटकों की रचना हुई परन्तु कुछ ही नाटकों का अनुवाद अन्य भाषाओं में हुआ अन्य सभी अधिक प्रसिद्धि नहीं प्राप्त कर सके।

इसके कारण पर यदि विचार करें तो कई महत्त्वपूर्ण कारण सामने आते हैं। संस्कृत का ज्ञान रखने वाले लोगों में नवीन चेतना का अभाव तथा समाज के वर्तमान परिवेश की

समस्याओं की जानकारी ना होना, अतीत के यशोगान तथा राजा–महाराजाओं की यशोगाथा तथा प्रेमकथाओं पर आधारित नाटकों में वर्ण्य वस्तु प्राचीन होना आदि कई ऐसे कारण थे जो उस शताब्दियों के नाटकों की प्रसिद्धि के मार्ग में अवरोध बन गए।

1920 से 1947 के मध्य जब स्वतंत्रता आंदोलन अपने चरम पर था तब देशप्रेम और स्वतन्त्रता से संबंधित रचनाओं के लेखन में एक क्रांति–सी आ गई। इस तीस वर्षों में संस्कृत भाषा में भी सबसे अधिक रचनाएँ हुईं। इन वर्षों में संस्कृत–भाषा लोक मानस के समीप आ गई। इस अवधि में संस्कृत भाषा में प्रकाशित समाचार–पत्रों के प्रकाशन ने संस्कृत भाषा को नये शब्द तथा नये व सरल वाक्य–विन्यास के साथ सरल रूप प्रदान किया। नाट्य–साहित्य की संवादात्मक शैली ने भी संस्कृत को सुगम और सरल बनाया।

7.3 आधुनिक नाट्य–साहित्य की रचना का काल–खण्ड

उत्तर–प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा प्रकाशित 'आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास' नामक सप्तम खण्ड में इन दो सौ साल के कालखण्ड को नाट्यसाहित्य की रचना के अनुसार चार भाग में विभाजित किया है–

1. 1800 से 1870 तक की अवधि में मुसलमानों के शासन से मुक्त होकर संस्कृत विद्वानों ने पुराण, महाभारत, रामायण आदि पर आधारित नाटकों की रचना की गई।
2. 1870 से 1920 तक की अवधि में देश की तत्कालीन स्थिति तथा राष्ट्रीयता की भावना पर आधारित नाटकों की रचना की गई।
3. 1920 से 1950 तक की अवधि को साहित्य रचना का समृद्ध काल माना गया है। इसमें क्रान्तिकारी तथा राष्ट्रीय भावना पर आधारित संस्कृत नाटकों की रचना की गई।
4. 1950 से 1990 तक की अवधि स्वातंत्र्योत्तर कालखंड है। इस अवधि में उच्च कोटि की रचनाएँ हुईं।

इन दो शताब्दियों में जो भी संस्कृत–साहित्य लिखा गया, उसकी एक विशेष उपलब्धि यह रही कि संस्कृत भाषा जनमानस के सन्निकट आ गई। संस्कृत भाषा में प्रकाशित समाचार–पत्रों के माध्यम से नये–नये शब्दों का प्रयोग हुआ, वाक्य विन्यास में भी नये शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ तथा उसमें सरलता भी आई। नाट्य–साहित्य की रचना ने संस्कृत–भाषा को अधिक सुगम और सरल बना दिया। संस्कृत में लिखे नाटकों का मंचन भी यत्र–तत्र हुआ। अन्य विधाओं की अपेक्षा नाट्य–विधा ने संस्कृत की भाषा–शक्ति को अधिक मजबूत किया और जनमानस को आकर्षित किया। नाटकों के कथोपकथन अर्थात् संवादात्मक शैली में लिखे होने के कारण नाटकों ने सहज बोधगम्य और रोचक होने से अधिक प्रभाव डाला।

7.4 काव्य के प्रकार

काव्य के दो प्रकारों – दृश्य और श्रव्य में, दृश्य काव्य को – रूप, रूपक तथा नाट्य की भी संज्ञा प्राप्त है। दर्शनेन्द्रिय का विषय होने के कारण दृश्यकाव्य को 'रूप' कहते हैं, अंगों–उपांगों का संचालन होने के कारण उसे 'नाट्य' तथा नटों के रूप त्रेतायुग के रामादि पात्रों के रूप का आरोप होने के कारण उसे 'रूपक' भी कहते हैं। दशरूपककार आचार्य धनंजय के अनुसार–

अवस्थानुकरणं नाट्यं रूपं दृश्यतयोच्यते।
रूपकं तत्समारोपाद् दशधैव रसाश्रयम्।।

7.4.1 दृश्यकाव्य के भेद

दृश्यकाव्य के पुनः आचार्यों द्वारा दो भेद किये गये – 1. रूपक तथा 2. उपरूपक। रूपक के दश भेद – नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, वीथी तथा अंक हैं। उपरूपक के अट्ठारह भेद – नाटिका, भाणिका, गोष्ठी, दुर्मल्ली (दुर्मल्लिका), विलासिका, त्रोटक, सट्टक, काव्य, रासक, नाट्यरासक, संलापक, श्रीगदित, प्रेङ्खण (प्रेक्षणक), शिल्पक, हल्लीश, प्रकरणी, प्रस्थान तथा उल्लाप्यक किये गए।

7.5 नाटक का आधुनिक लक्षण

आधुनिक संस्कृत में अधिक लोकप्रिय होने के कारण 'नाटक' नामक रूपक की रचना अधिक हो रही है। अभिराजयशोभूषणम् नामक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ में आधुनिक संस्कृत नाटक का लक्षण इस प्रकार से किया गया है –

नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात्पञ्चसन्धिसमन्वितम्।
पञ्चभिः सप्तभिश्चाङ्.कैर्दशभिर्वा प्रपञ्चितम्।।
धीरोदात्तो भवेन्नेता प्रतापैश्वर्यमण्डितः।
देवो भूपोऽथवा कश्चिद् गुणवांल्लोकनायकः।।
नायकस्थापने यत्र लिङ्.गभेदो न गण्यते।
महिलापि ततो नेता स्यादौदात्त्यमहीयसी।।
श्रृंगारः करुणों वीरश्शान्तो वाङ्गी रसो भवेत्।
शेषा यान्तु तदङ्गत्वं स्यान्निर्वहणमद्भुतम्।।
राष्ट्रोदयं गुणैश्वर्यं लोकजीवनमंगलम्।
न्यायसत्यदयाधर्मसौजन्यादिसृतेर्जयम्।।
स्थापयेन्नाटकं नूनं लक्ष्यीकृत्य यथोचितम्।
येन लोकस्सदाचारोच्छ्रितमार्गं समाश्रयेत्।।
उद्वेगाऽमङ्गलव्रीडारक्त पातादिसंश्रितम्।
दृश्यं न चित्रयेन्नाट्ये रङ्गविक्षोभकारकम्।।
यच्च सत्यं शिवं भूयात्सुन्दरश्च सुखावहम्।
जनानुरागवर्धिष्णु तत्परिकल्प्य वर्णयेत्।।

अर्थात् नाटक प्रख्यात कथानकवाला, पञ्चसंधियों से समन्वित, पांच, सात अथवा दश अंकों में विस्तृत होता है। प्रताप एवं ऐश्वर्य से मण्डित धीरोदात्त चरित्र वाला कोई देवता, राजा अथवा

गुणवान लोकसत्पुरूष नाटक का नाय होता है। नाटक में नायक का निश्चय करते समय लिंगभेद अर्थात् स्त्री अथवा पुरूष के भेद को महत्त्व नहीं देना चाहिए। इसलिए औदात्त्य से महिमामण्डित कोई भी महिला नाटक में नायक हो सकती है। नाटक में श्रृंगार, करूण, वीर एवं शान्त में से कोई एक प्रधान रस होना चाहिए। शेष रस प्रधान रस के अंगभूत हों, किन्तु अन्त में अद्भुत रस होना चाहिए। राष्ट्र का अभ्युदय, सद्गुणों का ऐश्वर्य, लोक जीवन का मंगल, न्याय, सत्य, दया, धर्म तथा सौजन्यादि–सरणियों की विजय–जैसा कथा के अनुकूल हो, किसी एक को नाटक में होना चाहिए जिससे पाठक समाज सदाचार के श्रेयस्कर मार्ग को चुन सके। उद्वेग, अमंगल, लज्जाजनक दृश, रक्तपादि पर आधारित दृश्य, जिनसे पात्रों को विक्षोभ होता हो, उनका नाटक में चित्रण नहीं होना चाहिए। जो सत्य हो, कल्याणकारक हो तथा सुन्दर हो, जो सुखावह हो और जनानुराग को बढ़ाने वाला हो, ऐसी इतिवृत्त को परिकल्पित करके भी नाटक में विस्तृत वर्णन किया जाना चाहिए।

प्रकरण आदि का लक्षण साहित्यदर्पण के अनुसार आधुनिक में भी मानना चाहिए। वर्तमान में 'प्रकरण' की भी प्रभूत रचना हो रही है। 'प्रकरण' के उदाहरण के रूप में प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी की रचना – 'तण्डुलप्रस्थीयम्' है तथा 'भाण' का उदाहरण प्रो0 राजेन्द्र मिश्र की कृति – 'फण्टूस (प्रत्यूष) चरितभाणः' है।

7.6 एकांकी का स्वरूप

आचार्य राजेन्द्र मिश्र ने अपनी पुस्तक 'नई सहस्त्राब्दी में संस्कृत' नामक पुस्तक में लिखा है कि वर्तमान में दशरूपक में दिए गए रूपकों के भेद नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार डिम, ईहामृग, वीथी, अंक तथा प्रहसन तथा उपरूपकों के काव्य, नाट्यरासक, प्रेड्.खणक, हल्लीसक आदि अठारह भेदों में से आज केवल नाटक, नाटिका तथा प्रकरण ही अस्तित्व में हैं। केवल इन्हीं की रचना हो रही है। उनका मानना है कि अंक, वीथी, समवकार और डिम तो वत्सराज अर्थात् 13वीं शती के बाद से लिखे ही नहीं गए। भाण और व्यायोग की रचना भी न्यून मात्रा में ही हुई। प्रहसन कोटि की रचनाओं का प्रणयन अधिक हुआ। प्रो0 मिश्र का मानना है कि अठारह उपरूपकों तथा भाणप्रहसनादि के समन्वित रूप में एक नई विधा

'एकांकी' (One Act Play) के रूप में नाटक–नाटिका की पंक्ति में आ गई। नाटक–नाटिका की रचना करने वाले लेखक पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथा–वस्तु को ही आधार बना कर रचना में समर्थ होते हैं। अतः एकांकी नामक नवीन विधा वर्तमान में लोकप्रिय बन गई। एकांकी में प्रत्येक ढंग का इतिवृत्त सरलता से प्रकट किया जाता है।

7.6.1 एकांकी का आधुनिक लक्षण

वर्ण्य–विषय की दृष्टि तथा अभिनेयात्मकता की दृष्टि से एकांकी पिछली तथा इस शताब्दी में अधिक लोकप्रिय बन गई। प्रो0 मिश्र ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र' में एकांकी की विस्तृत व्याख्या की है तथा उसकी परिभाषा दी है –

हिन्दीप्रभृतिभाषासु भारतीयासु साम्प्रतम्।
लघुनाट्यं यदेकांकि सर्वाभीष्टं महीयते।।
देववाच्यपि तन्नूनं तद्वदेव प्रतिष्ठितम्।
नियन्त्रितं न तज्ज्ञेयमुपरूपकलक्षणैः।।
नायकोऽत्र भवेद्भूपः पण्डितः पामरोऽथवा।
दिव्योऽदिव्योऽथवाऽन्योऽपि शिक्षकोभिक्षुको यतिः।।
योऽपि कश्चिद् भवेन्नेता पुरुषो महिलाऽपि वा।
यादृशञ्चापि वृत्तं स्यान्नाट्यकृत्प्रतिभाश्रितम्।।
एकाहचरितञ्चैव लघुनाट्ये प्रयोजयेत्।
संवादबहुला भाषा व्यङ्.ग्यगर्भाऽत्र सम्मता।।
रसः कोऽपि भेवदंगी नाट्यवृत्ताऽनुगुण्यतः।
लक्ष्यमेकं परं तस्य, भवेद्रंगप्रसादनम्।।
नाट्यशिल्पादिसम्बद्धं वैलक्षण्यं नवं नवम्।
एकांकेऽस्मिन्प्रयोक्तव्यं नाट्यकर्त्रा यथामति।।

अर्थात् हिन्दी आदि भारतीय भाषाओं में इस समय एकांकी नामक जो सबको प्रिय लगने वाला लघुनाट्य प्रतिष्ठित है, वही निश्चित रूप से देववाणी संस्कृत में भी उसी प्रकार प्रतिष्ठित हो चुका है। परन्तु उसे (किसी संस्कृत) उपरूपक के लक्षण से (सर्वात्मना) नियंत्रित नहीं जानना चाहिए।

एकांकी में राजा, पण्डित अथवा पामर (ग्रामीणजन), दिव्य अथवा अदिव्य कोई भी पात्र, अन्यान्य शिक्षक, भिक्षुक या संन्यासी, पुरुष अथवा महिला जो कोई भी हो, नायक हो सकता है। एकांकी का इतिवृत्त किसी भी प्रकार का हो सकता है, परन्तु उसे नाटककार की प्रतिभा से समन्वित होना चाहिए। इस लघुनाटक (एकांकी) में एक दिन की ही घटना का वर्णन किया जाना चाहिए जिसमें संवाद अधिक हों और यदि भाषा व्यंग्यपूर्ण हो तो अति उत्तम है।

एकांकी के इतिवृत्त के अनुकूल कोई भी रस अंगीरस हो सकता है। रस का लक्ष्य रंग प्रसादन होना चाहिए। नाटककार को अपने बुद्धिवैभव के अनुसार इस एकांकी में नाट्यशिल्पादि से सम्बद्ध नया–नया वैलक्षण्य प्रयुक्त करना चाहिए। यह सारा का सारा एकांकी–वैशिष्ट्य पूर्वोद्धत नाटककारों के लघुनाट्यों में यत्नपूर्वक खोजना चाहिए।

इस प्रकार एकांकी के आधुनिक स्वरूप की चर्चा करने के बाद प्रो0 मिश्र ने ध्वनिनाटक तथा रेडियोनाटक आदि के सम्बद्ध में चर्चा की है। उनके अनुसार इस प्रकार के नाटकों की कोई स्वतंत्रता सत्ता नहीं मानी जा सकती। इनका अन्तर्भाव एकांकी में ही किया जा सकता है।

7.7 नाटिका का आधुनिक लक्षण

स्त्रीप्राया चतुरंका स्यान्नाटिका यदुदाहृता।

पूर्ववर्तिभिराचार्यैस्तन्मह्यमपि रोचते।।

भूपेतरोऽपि नेता स्यात्पुरुषः किञ्च सम्मता।

दिव्यसद्गुणसम्भारभूषिता कापि भामिनी।।

अन्यन्निखिलवैशिष्ट्यं दशरूपकवर्णितम्।

नाटिकारचनायान्तु ग्राह्यमेव यथायथम्।।

पूर्वाचार्यों के लक्षण के अनुसार स्त्री पात्रों की बहुलता को तथा चार अंकिका को स्वीकार करते हुए प्रो0 मिश्र उपरोक्त लक्षण को देते हुए कहते हैं कि नाटिका का नायक राजा के अतिरिक्त कोई पुरुष तथा कोई दिव्य सद्गुणों से युक्त लोकवंदिता पुरन्घ्री भी नाटिका का नायक हो सकती है। शेष लक्षण दशरूपक में वर्णित नाटिका के लक्षण को स्वीकार करना चाहिए।

दशरूपककार के अनुसार 'नाटिका' शब्द स्त्रीलिंग है। स्त्रियों के बाह्य लक्षण में 'केश का होना' आवश्यक है इसलिए नाटिका में कैशिकी कृत्ति तथा उसके चारों अंग होते हैं। विश्वनाथ के अनुसार स्त्रीपात्रों का आधिक्य होने से नाटिका का नाम नायिका के ऊपर रखा जाना चाहिए। प्रमद्वरा तथा विद्योत्तमानाटिका प्रो0 मिश्र द्वारा रचित नाटिकाएँ हैं।

7.8 अभ्यास–प्रश्न

1. नाटक के आधुनिक लक्षण को स्पष्ट करते हुए, समझाइए कि यह प्राचीन लक्षण से किस प्रकार भिन्न है ?
2. नाटिका का आधुनिक लक्षण दीजिए।
3. आधुनिक नाट्य–साहित्य के काल–खण्ड पर प्रकाश डालिए।
4. एकांकी वर्तमान से सबसे अधिक लोकप्रिय विधा है, व्याख्या कीजिए।

7.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत–वाङ्मय का बृहद् इतिहास, सप्तम खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, प्रकाशन – उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ
2. संस्कृत अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र
3. नई सहस्राब्दी में संस्कृत – लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र

इकाई–08 प्रमुख नाटक एवं नाटककारों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

8.0 प्रस्तावना

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रो0 राजेन्द्र मिश्रकृत् नाट्य–साहित्य

8.2.1 नाटिका–नाटक

8.2.2 एकांकी

8.2.3 नुक्कड़नाटक

8.3 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत् नाट्य–साहित्य

8.3.1 नाटिका–नाटक

8.4 प्रो0 हरिदत्त शर्माकृत् नाटक/एकांकियाँ

8.4.1 नाटक/रूपक

8.5 अभ्यास–प्रश्न

8.6 सन्दर्भ–ग्रन्थ

8.0 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हम नाटक, नाटिका, एकांकी आदि के स्वरूप तथा उनके आधुनिक लक्षण का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में हम नाट्यग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे।

काव्य सर्जन तथा गद्य लेखन को विधा में हुए परिवर्तन की भांति स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–साहित्य के स्वरूप तथा प्रतिपाद्य में भी बहुत परिवर्तन हुआ। पुनर्जागरणकाल तथा स्थापनाकाल में बहुत से नाटककारों जैसे – भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, मूलशंकर माणिक्यलाल याज्ञिक, महामहोपाध्याय हरिदास सिद्धानतवागीश, पं0 अम्बिकादत्त व्यास आदि रचनाकारों ने नाट्यपद्धति को आगे बढ़ाया है।

स्वातन्त्र्योत्तरकाल में हुए रचनाकारों ने दशरूपक में वर्णित रूपक की सभी विधाओं में रचना की है। इनमें प्रमुख रचनाकार हैं – श्री जग्गूबकुलभूषण, नारायणशास्त्री कांकर, परीक्षित शर्मा, प्रो0 अभिराजराजेन्द्र मिश्र, प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी, डॉ0 रमाकान्त शुक्ल, डॉ0 हरिनारायण दीक्षित, प्रो0 हरिदत्तशर्मा, प्रो0 रामजी उपाध्याय, स्वामी रामभद्राचार्य, डॉ0 इच्छाराम द्विवेदी, डॉ0 मिथिलेश कुमारी आदि।

बीसवीं शताब्दी में अनेक नाटककारों ने संस्कृत नाटकों का प्रणयन किया है। इनमें से कतिपय नाटककारों के नाटकों, एकांकियों का संक्षिप्त परिचय इस इकाई में किया जा रहा है।

8.1 उद्देश्य

1. इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी प्रो0 राजेन्द्र मिश्रकृत नाट्य–साहित्य को ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत नाट्य–साहित्य को जान सकेंगे।
3. इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी प्रो0 हरिदत्त शर्माकृत एकांकियों को जान पाएँगे।

8.2 प्रो0 राजेन्द्र मिश्र कृत् नाट्य–साहित्य

राष्ट्रपतिसम्मान से अलंकृत प्रो0 मिश्र का स्थान स्वातन्त्र्योत्तर काल के प्रमुख आधुनिक संस्कृत नाट्यकारों में शीर्षस्थ है। आपके नाटकों का अनेक नगरों में मंचन भी किया जाता रहा है। समृद्ध भाषा तथा संस्कृत मुहावरों से युक्त आधुनिक कथावस्तु तथा आधुनिक शैली के अनुरूप आपकी नाट्यभाषा अद्भुत एवं प्रशंसनीय है। प्रो0 राजेन्द्र मिश्र जी ने चार नाटक–नाटिकाएँ तथा लगभग 62 एकांकियों की रचना संस्कृत में की है।

आपने 1984 ई0 में 'प्रमद्वरा' तथा 'विद्योत्तमा' नामक चार–चार अंकों की दो नाटिकाएँ लिखी हैं। 'प्रशान्तराघवम्' नामक सात अंकों का नाटक तथा 'लीलाभोजराजम्' नामक पांच अंकों का दो नाटक लिखा है। आपके दस एकांकी–संग्रह प्रकाशित हैं –

1. 1971 ई0 में 'नाट्यपञ्चगव्यम्', 2. 1974 ई0 में 'अकिञ्चनकाञ्चनम्', 3. 1977 ई0 में 'नाट्यपञ्चामृतम्', 4. 1983 ई0 में 'चतुष्पथीयम्', 5. 1986 ई0 में 'रूपरूद्रीयम्', 6. 1996 ई0 में 'नाट्यसप्तपदम्', 7. 1998 ई0 में 'नाट्यनवग्रहम्', 8. 2008 ई0 में 'नाट्यनवरत्नम्', 9. 2010 ई0 में 'नाट्यनवार्णवम्' प्रकाशित हैं तथा 'रूपविंशतिका' जिसमें बीस एकांकियों का संग्रह और 'नाट्यनवाह्निकम्' नामक नौ एकांकियों का संग्रह प्रकाशनाधीन है।

8.2.1 नाटिका–नाटक

<u>प्रमद्वरानाटिका</u>

प्रो0 मिश्र प्रणीत इस नाटिका में चार अंक और लगभग साठ पद्य है। श्रीमद्भागवत महापुराण तथा महाभारत में वर्णित महर्षि प्रमति के पुत्र रुरु एवं महर्षि स्थूलकेश की पुत्र प्रमद्वरा की प्रणयकथा को आधार बना कर श्रृंगाररस की प्रधानता वाली इस नाटिका को नाटककार ने नाट्यशास्त्रीय मानदंडों पर कसकर इसकी रचना की है। इस नाटिका में रचनाकार ने धीर ललित नायक रुरु को आनर्त–नरेश का जामाता होने पर भी भोग–विलास से विरक्त दिखाकर नायक की कोटि को नाट्यशास्त्रीय कसौटी पर कसा है।

इस नाटिका का प्रकाशन वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से सन् 1984 ई0 में हुआ है।

इस नाटिका का शिल्प, संवेदन, संवाद, अभिनय एवं नाट्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य प्रो0 मिश्र को एक विशिष्ट नाट्यकार के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। प्रमद्वरानाटिका में मुख्य रस श्रृंगार है जिसका स्थायी भाव 'रति' है। श्रृंगार के दोनों भेदों – विप्रलम्भ तथा सम्भोग का प्रयोग इस नाटिका में हुआ है। इस नाटिका में करुण विप्रलम्भ की सफल अभिव्यक्ति हुई है। सम्भोग श्रृंगार का परिपाक अपेक्षाकृत कुछ कम है। इस नाटिका में श्रृंगार के अतिरिक्त हास्य, रौद्र, अद्भुत, भयानक आदि रस भी यत्र–तत्र प्रयुक्त हैं।

इस नाटिका में संवाद अर्थगाम्भीर्य से युक्त छोटे–छोटे वाक्यों में हैं, जिनकी भाषा अत्यन्त सरल, सरस, प्राञ्जल, प्रौढ़ एवं परिष्कृत है और प्रसादगुण से युक्त है। संवादों में स्वभाविकता है, कहीं भी नाटककार ने पाण्डित्य प्रदर्शन का प्रयत्न नहीं किया है। कहीं–कहीं माधुर्य एवं ओज गुण भी दिखाई देते हैं। अलंकारों का प्रयोग बहुत अधिक नहीं है। शब्दालंकारों में अनुप्रास तथा श्लेष और अर्थालंकारों में उपमा, उत्प्रेक्षा, परिकर और काव्यलिंग अलंकार इस नाटिका में हैं। प्रो0 मिश्र ने भावों के अनुसार ही छन्दों का प्रयोग किया है। इसमें शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका, स्रग्धरा, मालिनी, हरिणी, द्रुतविलम्बित, शिखरिणी, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, अनुष्टुप, मन्दाक्रान्ता आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है।

'प्रमद्वरा' प्राचीन कथानक पर आधारित एक अत्याधुनिक नाटिका है, जिसमें चार अंक हैं। यह नाटिका सभी नाटकीय तत्त्वों से परिपूर्ण हैं, नाटककार ने मुहावरों लोकोक्तियों एवं सुभाषितों का भी प्रयोग किया है। इस नाटिका के उच्च एवं निम्न सभी पात्र संस्कृत ही बोलते हैं। किसी भी स्थान पर प्राकृत भाषा का प्रयोग नहीं किया गया है। नाटिका के गीतों में भी नवीनता तथा गेयता है। प्रायः भरतवाक्य के बाद नाट्य ग्रन्थ समाप्त हो जाते है परन्तु इस नाटिका को प्रो0 मिश्र ने आधुनिक परिस्थितियों एवं सुविधाओं को ध्यान में रखकर लिखा है तथा प्रमद्वरा को मंचन के अनुरूप बनाया है।

विद्योत्तमानाटिका

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत यह नाटिका विद्वत समाज में अत्यंत चर्चित एवं प्रसिद्ध हुई। इस नाटिका की वर्ण्यवस्तु कालिदास तथा उनकी अर्धांगिनीराजनन्दिनी विद्योत्तमा के मिलन एवं

वियोग की घटनाओं पर आधारित है। इस नाटिका में इतिहास एवं कविकल्पना का इतना सुन्दर समन्वय है कि कालिदास सम्बन्धी अनेक विप्रतिपत्तियों का समाधान मिल जाता है।

इस नाटिका में नायक देवदत्त तथा उसकी अर्धांगिनी विद्योत्तमा जो उसकी दूसरी पत्नी है, के मिलन और वियोग की घटना वर्णित है। देवदत्त के घोर तपस्या द्वारा कवित्व एवं वैदुष्य प्राप्त कर राजकीय सम्मान प्राप्त करने के अनन्तर कालिदास की पदवी धारण करने तथा विद्योत्तमा से पुनर्मिलन की घटना का वर्णन है।

ईस्टर्न बुकलिकर्स, न्यूचन्द्रावल जवाहर नगर, दिल्ली से इसका प्रकाशन 1992 ई0 में हुआ तथा इसका दूसरा संस्करण वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ।

विद्योत्तमा नाट्यशास्त्रीय लक्षणों के अनुरूप श्रृंगार प्रधान नाटिका है। श्रृंगार रस का स्थायिभाव 'रति' है तथा इसके दो भेद संयोग और विप्रलम्भ होते हैं। इस नाटिका में दो भेदों का चित्रण किया गया है। परन्तु सम्भोग शृंगार का चित्रण अधिक है। शृंगार के साथ–साथ नाटककार ने हास्य, अद्भुत, करुण, रौद्र, वीर तथा वात्सल्य आदि रसों की भी यथास्थान योजना की है। इस नाटिका में रस और भाव का मञ्जुल समन्वय सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। विद्योत्तमा नाटिका में राजेन्द्र मिश्र जी ने शब्दों–अर्थों को चमत्कृत करने के लिए अलंकारों को भी स्थान दिया है जो स्वभाविक रूप से प्रयुक्त होकर रसाभिव्यक्ति में सर्वत्र सहायक सिद्ध हुए हैं। विद्योत्तमा में कहीं भी अलंकारों की दुरूहता नहीं दिखाई देती है। इस नाटिका में प्रो0 मिश्र ने उपमा, सन्देह, रूपक, उत्प्रेक्षा, अप्रस्तुतप्रशंसा, निदर्शना, अर्थान्तरन्यास, अनुमान आदि अलंकारों के प्रयोग से शब्दगत तथा अर्थरात चमत्कार उत्पन्न किया है।

विद्योत्तमा में प्रसादगुण की प्रधानता है किन्तु माधुर्य तथा ओजगुणों का भी प्रयोग मिश्र जी ने रसों के अनुकूल किया है। इस नाटिका में वैदर्भी रीति प्रमुख है। अन्य रीतियाँ भी यत्र–तत्र दिखाई देती है। नाटिका में अल्पसमासयुक्त कोमल पदावली तथा कहीं–कहीं दीर्घ समासयुक्त समस्तपदावली का प्रयोग दिखाई देता है। सम्पूर्ण नाटिका में तेरह छन्दों का प्रयोग हुआ है, जिसमें सबसे अधिक स्नग्धरा छन्द का प्रयोग है। विषय एवं भाव के अनुकूल छन्दों का प्रयोग सभी स्थानों पर किया गया है।

प्रो0 मिश्र की विद्वत्ता से कौन अनभिज्ञ है। भाषा पर उनका असाधारण अधिकार होने पर भी उन्होंने कहीं भी पाण्डित्य प्रदर्शन के लिए भाषा को जटिलता प्रदान नहीं की है। भाषा सर्वत्र सरल–सरस, प्रौढ़, प्राञ्जल, परिष्कृत एवं प्रवाहपूर्ण है। नाटिका में प्रयुक्त पद्य भी अत्यन्त मनोरम, प्राञ्जल, प्रवाहपूर्ण एवं वर्णनीय विषय को स्पष्ट करने में पूर्णतया सक्षम हैं। नाटिका के सभी श्रेणी के पात्र शुद्ध संस्कृत बोलते हैं। नीच पात्रों की भाषा प्राकृत होने की परम्परा को अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहीं भी प्राकृत का प्रयोग नहीं किया है। साहित्यिक सौष्ठव की दृष्टि से विद्योत्तमा उच्चकोटि की नाट्यकृति है।

प्रशान्तराघवम्

'प्रशान्तराघवम्' नामक नाटक में सात अंक हैं। यह नाटक अनर्घराघव, उदात्तराघव, उन्मतराघव, प्रसन्नराघव की परम्परा पर लिखा गया है किन्तु अपनी विशिष्टता के कारण कालजयी कृति बन गया है। इस नाटक का कथानक प्रो0 मिश्र द्वारा ही प्रणीत महाकाव्य जानकीजीवनम् से लिया गया है। इस नाटक में मर्यादापुरूषोत्तम राम के कुटुम्बप्रवण प्रशान्त व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया गया है। इस नाटक में नाटककार ने रामकथात्मक नाटकों की परम्परा के विरूद्ध जाकर विदूषक (पिण्डोदक) की अवतारणा की है तथा उसके व्यक्तित्व को परम्परा मुक्त रखा है और इस नाटक में प्राकृत के स्थान पर भोजपुर, अवधी, ब्रजभाषा आदि आधुनिक प्राकृत का प्रयोग किया है।

यह नाटक धोबी के द्वारा देवी सीता पर लांछन लगाने से प्रारंभ होकर लव–कुश को वाल्मीकि के आश्रम में शिक्षा प्राप्त करने हेतु राम और सीता के द्वारा छोड़कर लौट आने पर समाप्त होता है। इस नाटक का प्रकाशन 2008 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से किया गया है।

लीलाभोजराजम्

'लीलाभोजराजम्' नामक नाटक धाराधीश्वर भोजराज के जीवन पर आधारित अर्ध ऐतिहासिक नाटक है। इस कथावस्तु का कुछ अंश ऐतिहासिक है तथा कुछ अंश काल्पनिक है। इस नाटक में पांच अंक है। दशरूपककार ऐसी कथा को 'मिश्र' कथा कहते हैं। इस नाट्यकृति में

नाटककार प्रो0 मिश्र ने ऐतिहासिक ग्रन्थों तथा शिलालेखों में विद्यमान मालवेश्वर भोजदेव की यशोगाथा का रूपकीकरण किया है। प्रो0 मिश्र ने आधुनिक प्राकृतों–मालवी, ब्रजभाषा, अवधी तथा भोजपुरी का प्रयोग इस नाटक में किया है। इस कृति को नाट्यकार ने श्रेष्ठ रंगकर्मी तथा अपने नाट्यगुरू आचार्य चण्डिका प्रसाद शुक्ल को अर्पित किया है।

8.2.2 एकांकी

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत संस्कृत एकांकियों की संख्या 62 है। ये सभी एकांकियाँ 9 एकांकी संग्रह में संकलित हैं। समीक्षात्मक दृष्टि से मिश्र जी की एकांकियों को पौराणिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है।

1. नाट्यपञ्चगव्यम् – नाट्यपञ्चगव्यम् नामक एकांकी संग्रह में कविसम्मेलन, राधामाधवीयम्, फण्टूसचरितम् (प्रत्यूषचरित), भाणः नवरसप्रहसनम् तथा कचाभिशापम् नामक पांच एकांकियाँ संग्रहीत हैं। यह संग्रह उ0 प्र0 शासन द्वारा पुरस्कृत भी है। इसे प्रो0 मिश्र का प्रथम सामाजिक एकांकीसंग्रह माना जा सकता है। 'फण्टूसचरितम्' में नायक प्रत्यूष को फण्टूस (लोफर) के साथ समीकृत करके लिखा गया है। यह एकनट नाट्य है जिसे भाण कहा गया है। नाट्यकार ने बड़ी ही कुशलता से भाण की रचना के शिल्प को आदि से अन्त तक निभाया है। इसमें विश्वविद्यालय में व्याप्त अनैतिक वातावरण तथा उच्छृंखलता को प्रस्तुत किया गया है। 'कविसम्मेलन' नामक एकांकी की प्रस्तुति का शिल्प आधुनिक हिन्दी कवि सम्मेलनों का है। उद्घोषक समारोह की भूमिका बांधता है तथा एक–एक करके सभी कवियों को काव्यपाठ के लिए मंच पर बुलाता है। सभी कवि अलग–अलग वेशभूषा में वाल्मीकि व्यास, कालिदास, भवभूति, जयदेव आदि के रूप में मंच पर आकर अपने–अपने समय की बातें करते हैं तथा काव्य–पाठ करते हैं। इस एकांकी का वैशिष्ट्य यह है कि कविसम्मेलन का अंतिम कवि स्वयं नाट्यकार ही है।

इस एकांकी का प्रसारण भी वाराणसी रेडियो केन्द्र से हो चुका है। इस एकांकी संग्रह को कवि ने छात्रजीवन से अध्यापक बनने तक की अवधि 1965 से 1971 के मध्य लिखा है। इसका प्रकाशन 1971 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है।

2. अकिञ्चकाञ्चनम् – यह एकमात्र एकांकी एक यूनानी–कथा का मौलिक नाट्य रूपान्तर है। इस एकांकी में मूल यूनानी कथा–वस्तु को सर्वथा भारतीय नाट्य–शास्त्र के अनुसार उपनिबद्ध किया गया है। यूनानी परम्परा के विपरीत राजा, महामात्य और विदूषक आदि की परिकल्पना से नवीनता और पूर्णता आई है। इसके नायक 'मीडोस्' की आत्मा अत्यंत क्षुब्ध है तथा मन अत्यंत चंचल है। वह सुवर्ण पर मोहित है। उसकी केवल यही मंशा रहती है कि किसी भी प्रकार उसका राजकोष सर्वदा सुवर्ण से भरा रहे। स्वप्न में देखने पर नायक प्रत्येक वस्तु को सोने का बनाने हेतु स्पर्श करने लगता है और इसी क्रम में वह अपनी लड़की को भी छू लेता हेता है और वह सोने की बन जाती है। तब उसे अपने अमर्यादित लोभ का ज्ञान होता है। फिर वह सुवर्ण–लोभ त्यागकर प्रजापालन करता है।

इस एकांकी का प्रकाशन वैजयन्त प्रकाशन से 1974 ई0 में हुआ तथा यह भी उ0 प्र0 शासन से पुरस्कृत है। इस एकांकी में करुण रस और भारती वृत्ति है। भाषा सरल तथा प्रवाहयी है। इस प्रकार एकांकी में विदूषक की कल्पना प्रो0 मिश्र की मौलिकता है।

3. नाट्यपञ्चामृतम् – 'नाट्यपञ्चामृतम्' नामक एकांकी–संग्रह में दास्यापनोदनम् (जिसमें अमृतहरण द्वारा, पक्षिराज गरुड़ का अपनी जन्मदात्री विनता को सर्पमाता कद्रू की दासता से मुक्त करना वर्णित है), अर्जुनोर्वशीयम् (जिसमें अर्जुन द्वारा स्वर्ग में देवांगना उर्वशी के प्रणय को ठुकराना तथा वृहन्नला बनने का शाप प्राप्त करना वर्णित है), समर्चितमृत्तिकम् (जिसमें 1965 के भारत–पाक युद्ध में डोगराई मोर्चे पर मेजर आशाराम त्यागी के आत्मबलिदान की कहानी वर्णित है।), प्रीतिनिर्यातनम् में आलमगीर औरंगजेब तथा चललम की नर्तकी जैनबाई की मर्मस्पर्शी प्रेमकथा का वर्णन तथा छलिताधमर्णम् में दहेजलोभी एक बाप द्वारा हार्ट–अटैक का बहाना लेकर अपने विद्याविनय सम्पन्न बेटे से एक अनमेल विवाह–सम्बन्ध स्वीकार करा लेने का वर्णन है। इस पांच एकांकियों के इस संग्रह का प्रकाशन अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद द्वारा 1977 ई0 में किया गया है।

4. **<u>चतुष्पथीयम्</u>** – चतुष्पथीयम् में चार एकांकियों का संग्रह है जो नुक्कड़ नाटक की शैली में लिखी गई हैं। इसका प्रकाशन वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से 1983 ई0 में हुआ है। विशेष विवरण नुक्कड़ नाटक शीर्षक के अन्तर्गत दिया गया है।

5. **<u>रूपरुद्रीयम्</u>** – रूपरुद्रीयम् में 11 एकांकियों का संग्रह है। इस संकलन में अभीष्टमुपायनम्, नात्मानमवसादयेत्, स्वप्नाज्जागरणं वरम्, पुनर्मेलनम्, कन्थामाणिक्यम्, कुटुम्बरक्षणम्, राजराजौदार्यम्, को विजयते नैव ज्ञातम्, रक्ताभिषेकम्, काश्यपाभिशापम् तथा एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति नामक एकांकियाँ संग्रहीत हैं। इस संकलन की चार एकांकियाँ सामाजिक कोटि की, एक मनोवैज्ञानिक कोटि की, चार ऐतिहासकि कोटि की तथा दो एकांकियाँ पौराणिक कोटि की हैं।

6. **<u>नाट्यसप्तपदम्</u>** – 'नाट्यसप्तपदम्' नामक नाट्यसंग्रह में सात लघुनाटक – पञ्च सी न मी, वाणीघटकमेलनम्, बधिरप्रहसनम्, साक्षात्कारः, रूपमती, देहलीपरिदेवनम् तथा द्विसन्धानम् – संग्रहीत हैं। वाणीघटकमेलनम् में यङन्त, यङ्लुगन्त, कर्मवाच्य, एकवचन तथा कृदन्त जैसे तत्त्वों को पात्ररूप में प्रस्तुत कर विलक्षण हास्य की सृष्टि की गयी है। बधिरप्रहसनम् में लखनऊ रेडियो केन्द्र के बहरे बाबा धारावाहिक की सफल संस्कृत अनुकृति है परन्तु काव्य दृष्ट्या सर्वथा मौलिक है।

इस नाट्यसंग्रह का प्रकाशन ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली द्वारा 1994 ई0 में किया गया।

7. **<u>नाट्यनवरत्नम्</u>** – 'नाट्यनवरत्नम्' नाट्यसंग्रह में मण्डूकप्रहसनम्, प्रतिभापरीक्षणम्, वादनिर्णयनम्, बधिरप्रहसनम्, संवाद–दातृसम्मेलनम्, प्रत्यक्षरौरवम्, स्वयम्बरकेन्द्रम्, क्रीतानन्दम् तथा शारदावमाननम् – नामक नौ नाटक संकलित हैं। इन नाटकों में लेखक ने समाज और राष्ट्र की नवीन समस्याओं का प्रतिपादन किया है। कोर्ट–कचहरी, कारागार निरीक्षण, भीख माँगने के नये तरीके, कन्या–विवाह की नई समस्याओं का वर्णन किया है।

इस नाट्य–संग्रह का प्रकाशन 2007 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से हुआ है।

8. <u>नाट्यनवार्णनम्</u> – इस नाट्यसंग्रह में मुण्डितमण्डनम्, खोंरवीप्रहसनम्, विद्यालयनिरीक्षणम्, कलिकौतुकम्, उपनेत्रप्रहसनम्, वेतालप्रहसनम्, द्विजच्छागीयम्, अद्भुतज्यौतिषम् तथा मृदंगदासप्रहसनम् नामक नौ नुक्कड़ नाटकों का संकलन है। इसकी भूमिका मूर्धन्य आचार्य रमाकान्त शुक्ल ने लिखी है जो इसकी महनीयता को उजागर करती है। इसका प्रकाशन 2010 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से हुआ है।

9. <u>नाट्यनवग्रहम्</u> – नाट्यनवग्रहम् नौ शिशुजनोपयोगी एकांकियों का संकलन है। इन एकांकियों का प्रकाशन पूर्व में संस्कृतश्रीः (श्रीरंगम्) में हुआ है। इस एकांकी संग्रह में ईश्वान्वेषणम्, गुरुदक्षिणा, दास्यमुक्तिः, श्वेतोद्धारः, सत्यकामजाबालः, रत्नप्रत्यभिज्ञानम्, नामकरणम्, सिंह जम्बूकीयम् तथा गुणाः पूजास्थानम् नामक एकांकियाँ संकलित हैं। इसका प्रकाशन सन् 2007 में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद से हुआ है।

10. समर्चितमृत्तिकम – 'समर्चितमृत्तिकम्' नामक रूपक स्वातन्त्रोत्तर काल में लिखा गया है। इसमें भारत–पाक युद्ध का वर्णन और मेजर आशाराम त्यागी के शौर्य–बलिदान का वर्णन किया है। इस एकांकी में लेखक ने मातृभूमि की मिट्टी का मूल्य बताया है। इस एकांकी के माध्यम से प्रो0 मिश्र ने भारतीय नौजवानों में राष्ट्रीयता की भावना का संचार किया है।

'मोदकं केन भक्षितम्' नामक रूपक में धर्मों के समभाव को उजागर करते हुए राष्ट्रीय एकता की भावना को बढ़ावा दिया है। 'रक्ताभिषेक' नामक एकांकी गुरू गोविन्द सिंह के आत्मोत्सर्ग तथा अन्य सभी गुरुओं के शौर्य, बलिदान तथा गुणों पर आधारित है तथा समाज के समक्ष खालिस्तान की समस्या को राष्ट्रद्रोह बताते हुए राष्ट्र की अखण्डता सुरक्षित रखने की प्रेरणा देता है।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र स्वातंत्र्योत्तर काल के ऐसे प्रसिद्ध रचनाकार हैं जिन्होंने – काव्य, नाटक एवं कथा इन तीनों धाराओं में रचनाएँ की हैं। समीक्षात्मक दृष्टि से मिश्र जी की एकांकियों को पौराणिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक शीर्षकों में बांटा जा सकता है। मिश्र जी की एकांकियाँ प्रारंभ से अन्त तक नाटकीय कौतूहल तथा सांवादिक प्रवाहमयता से ओतप्रोत होती हैं।

प्रो0 मिश्र इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अपने अध्यापन काल में विश्वविद्यालय के संस्कृत रंगमंच के एक अत्यन्त लोकप्रिय अभिनेता रहे हैं। उन्होंने अनेक पात्रों का महत्त्वपूर्ण एवं सशक्त अभिनय किया है। इन्होंने मृच्छकटिकम् में सूत्रधार का उत्तररामचरितम् में रामभद्र का, रत्नावली तथा स्वप्नवासवदत्तम् में वत्सराज उदयन का, नागानन्दम् में जीमूतवाहन का, अभिज्ञानशाकुन्तलम् में दुष्यन्त का तथा रुक्मणीपरिणयम् में कृष्ण का अत्यन्त भावपूर्ण अभिनय किया है। इसलिए प्रो0 मिश्र ने मंचीय व्यावहारिक असुविधाओं को दृष्टि में रखते हुए इन सभी एकांकियों को लिखा है।

8.2.3 नुक्कड़ नाटक

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र की एकांकी 'चतुष्पथीयम्' नुक्कड़ नाटकों का संग्रह है। इसमें इन्द्रजालम्, वैधेयविक्रमम्, निर्गृहघट्टम् तथा मोदकं केन भक्षितम् नामक चार लघुनाट्यों का संग्रह है। 'इन्द्रजालम्' नुक्कड़ नाटक की शैली में लिखा गया है। इस एकांकी में मदारी और जमूरे के माध्यम से प्रस्तुति की गई है। उत्कल के अभिनेताओं ने इसकी दस प्रस्तुतियाँ मंचों पर की हैं। यह शैली पहली बार संस्कृत नाट्य में प्रो0 मिश्र के द्वारा प्रयोग की गई है।

'निर्गृहघट्टम्' में कार्यालय और घर में दुर्दशाग्रस्त एक कर्मचारी की कथा–व्यथा वर्णित है। सम्पूर्ण नाट्य एक भयावह अधिक्षेप है आज के अनुत्तरदायी कार्यालयों की कार्यशैली तथा गन्दे वातावरण पर। 'वैधेयविक्रमम्' में असन्तुलित परिवार का दुष्परिणाम वर्णित है तो 'मोदकं केन भक्षितम्' में एक रोचक लोकवृत्त वर्णित है। यह एकांकी संग्रह उ0प्र0 शासन द्वारा पुरस्कृत है।

प्रो0 मिश्र ने आधुनिक संस्कृत जगत को नया शिल्प प्रदान किया है जो पूर्व में अनुपलब्ध था।

8.3 प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी कृत नाट्य–साहित्य

प्रो0 त्रिपाठी संस्कृत एवं हिन्दी के आधुनिक साहित्यकार हैं। उनकी कविताएँ, कहानियाँ आदि संस्कृतप्रतिभा, भारती, दिव्यज्योतिः तथा अन्यान्य पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। त्रिपाठी

जी की लगभग 40 कहानियाँ तथा हिन्दी और संस्कृत में अब तक 150 पुस्तकें तथा 172 शोध–पत्र प्रकाशित हुए हैं। इनमें हिन्दी में तीन कहानी संग्रह, एक उपन्यास तथा संस्कृत में चार कविता संग्रह हैं। आपकी हिन्दी में लिखी कुछ कहानियों के तेलगु, मराठी तथा मलयालम में भी अनुवाद हो चुके हैं। कुछ मौलिक नाटक तथा कई संस्कृत नाटकों के हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हो चुके हैं। प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी जी की संगीत एवं अभिनय में काफी रुचि है। नाट्य–साहित्य के अन्तर्गत त्रिपाठी जी ने एक पूर्ण नाटक 'प्रेमपीयूषम्' तथा एक प्रकरण 'तण्डुलप्रस्थीयम्' की रचना की है। इसके साथ ही त्रिपाठी जी ने 'प्रेक्षणसप्तकम्' नामक एक एकांकी–संग्रह की भी रचना की है।

8.3.1 नाटक/एकांकी

प्रेमपीयूषम्

प्रेमपीयूषम् नामक नाटक में सात अंक हैं। इस नाटक में लेखक ने महाकवि भवभूति के सम्पूर्ण जीवन चरित को नाटक के रूप में प्रस्तुत किया है। इस नाटक की कथा में लेखक ने यशोवर्मा, वाक्पतिराज, ललितादित्य आदि ऐतिहासिक पात्रों को लिया है जबकि राजकुमार प्रियंवदा, शशिप्रभा आदि पात्रों की कल्पना की है। यशोवर्मा तथा ललितादित्य का विग्रह और यशोवर्मा की पराजय आदि ऐतिहासिक घटनाओं के साथ भवभूति से सम्बद्ध अनेक रोचक काल्पनिक आख्यानों को लेखक ने जोड़ा है।

तण्डुलप्रस्थीयम्

'तण्डुलप्रस्थीयम्' नामक प्रकरण में दस अंक हैं। प्राचीन संस्कृत प्रकरणों मृच्छकटिकम् और मालतीमाधवम् के आधार पर अनेक प्रकरण लिखे गए हैं। इन सभी के मध्य प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा रचित 'तण्डुलप्रस्थीयम्' बींसवी शताब्दी के प्रकरणों का प्रतिनिधि प्रकरण है। लोककथा में कल्पनाशक्ति को मिलाकर एक नवीन नाट्यसंचार रच दिया है। सामाजिक चेतना के साथ हास्य–व्यंग्य ने इस प्रकरण को और अधिक रोचक बना दिया है। यह प्रकरण साहित्यिक, सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वोत्तम प्रकरण है।

<u>प्रेक्षणसप्तकम्</u>

प्रेक्षणसप्तकम् नामक एकांकी संग्रह में सात एकांकियों का संग्रह है। इन सभी में से पांच एकांकियों का रंगमंच पर मंचन किया गया है। इनमें से 'मशकधानी' तथा 'मुक्ति' नामक एकांकियों का अनेक बार मंचन हुआ है। रंग मंचीय प्रस्तुतियों में से तीन एकांकियों को अखिल भारतीय संस्कृत नाट्यस्पर्धा में पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। इस सात नाटकों में से तीन नाटकों का प्रकाशन 'दुर्वा' नामक संस्कृत पत्रिका में हुआ है। इन सभी नाटकों में लेखक की भावप्रवणता, कल्पनाशीलता, नाट्यविधान की नवीनता, सामाजिक दृष्टि तथा आधुनिक जीवन के प्रति दृष्टिकोण ने संस्कृत नाट्य परम्परा की एक नई झलक दिखाई है।

'सोमप्रभम्' नामक एकांकी में प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी ने माँ–बेटी के कोमल रागात्मक सम्बन्धों की मार्मिक चित्रण किया है तथा बहू को जलाने की ज्वलन्त समस्या का भी चित्रण किया है। 'प्रतीक्षा' नामक एकांकी में वर्तमान मध्यमवर्गीय परिवार की एक पढ़ी–लिखी युवती के माध्यम से परिवार की झलक दिखाई है। इसमें घर की बेटी के अपने कार्यालय के सहयोगी की पार्टी के घर में बिना बताए चले जाने से पर पूरे परिवार की चिंता का बखूबी चित्रण किया गया है।

8.4 प्रो0 हरिदत्त शर्मा कृत नाटक/एकांकियाँ

प्रो0 हरिदत्त शर्मा आधुनिक संस्कृत कवियों के मध्य सुप्रतिष्ठित एवं प्रख्यात कवि हैं। आपने इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय में आचार्य एवं अध्यक्ष दोनों पदों पर रहते हुए संस्कृत की सेवा की है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अध्ययन एवं अध्यापन करते हुए आपने अनेक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लिया तथा अनेक महत्त्वपूर्ण पदों को समलंकृत किया है। प्रो0 शर्मा ने अनेक देशों की यात्रा की है और अपनी विद्वत्ता से सभी को प्रभावित किया है। प्रो0 शर्मा की अनेक कृतियों पर निरन्तर शोध हो रहे हैं तथा कई रचनाएँ अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में स्थान पा चुकी हैं। शर्मा जी की पांच मौलिक रचनाओं पर उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा पुरस्कार प्राप्त हुआ है तथा एक रचना दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा पुरस्कृत हुई है। शर्मा जी एक काव्यकृति 'लसल्लतिका' के लिए उन्हें

साहित्य–अकादमी से पुरस्कृत किया गया है। प्रो0 हरिदत्त शर्मा जी ने 12 मौलिक ग्रन्थों का लेखन किया है तथा आपके 60 से अधिक शोध–निबन्ध प्रकाशित हुए हैं।

प्रो0 शर्मा ने संस्कृत को विश्व के अनेक देशों तक पहुँचाया है। आप 15 देशों की शैक्षणिक–सांस्कृतिक यात्रा की है। प्रो0 शर्मा ने जर्मनी, फ्रांस, नीदरलैण्ड्स, आस्ट्रिया, मलेशिया, इण्डोनेशिया, इटली, अमेरिका, मॉरिशस, स्कॉटलैण्ड, थाईलैण्ड तथा जापान जैसे देशों की यात्रा की है। थाईलैण्ड में आपने तीन वर्षों तक विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में अध्यापन किया है। आपकी रचनाओं पर निरन्तर शोध–कार्य किये जा रहे हैं तथा आपकी कई रचनाएँ विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में निर्धारित की गई है।

काव्य के साथ–साथ संस्कृत नाटकों के क्षेत्र में भी आपका विशिष्ट योगदान है। आपके नाटकों में वर्तमान सामाजिक विसंगतियों तथा समस्याओं पर ध्यान आकर्षित किया गया है। भाषा व्यावहारिक एवं सरल है तथा सभी नाटक आकार में लघु हैं, इसलिए इनका मंचन सुविधाजनक है।

8.4.1 नाटक / रूपक

त्रिपथा

प्रो0 शर्मा का प्रथम प्रकाशित नाट्यसंग्रह 'त्रिपथगा' है। इसमें 'साक्षात्कारीयम्', 'वधूदहनम्' एवं 'द्वेषदर्शनम्' नामक तीन रूपक संकलित हैं। इन तीनों रूपकों में सात–सात दृश्य उपस्थित किये गए हैं।

साक्षात्कारीयम्

'साक्षात्कारीयम्' नामक रूपक 'त्रिपथगा' नामक नाट्यसंग्रह में संकलित प्रथम रूपक है जिसमें सात दृश्य हैं। रूपक के नाम से ही ज्ञात होता है कि यह साक्षात्कार पर आधारित है। इस रूपक के माध्यम से नाटककार ने समाज में फैले भ्रष्टाचार को प्रस्तुत किया है। विशेष रूप से सरकारी नौकरियों में हो रहे पक्षपात को प्रस्तुत किया है। शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण विषय को भ्रष्टाचार ने अपने चपेट में ले लिया है। शिक्षा जगत में योग्यता का कोई महत्त्व नहीं रह गया

है, महत्त्व है तो सिर्फ चाटुकारिता एवं प्रभाव का। योग्य पात्र भास्कर के स्थान पर मंत्री जी के दबाव पर अयोग्य व्यक्ति की नियुक्ति, साथ में अपने–अपने स्वार्थ को सिद्ध करना ही वर्तमान व्यवस्था बन गया है। अयोग्य व्यक्ति के हाथ में शिक्षा व्यवस्था को सौंप देना तथा आवाज उठाने पर योग्य व्यक्ति को जेल भिजवाना आदि घटनाओं के माध्यम से प्रो0 शर्मा ने वर्तमान व्यवस्थाओं पर करारा व्यंग्य किया है। यह संस्कृत रूपक वर्तमान समय में शिक्षा जगत में हो रहे अयोग्य व्यक्तियों की नियुक्ति से नैतिक पतन तथा शिक्षा में निरन्तर हो ह्रास को उजागर करता है। अयोग्य अध्यापक नियुक्ति से बाद तक अपने आत्मिक पतन के साथ–साथ शिक्षण संस्था और शिक्षार्थियों के स्तर को भी नीचे गिराता है।

<u>वधूदहनम्</u>

'वधूदहनम्' नामक एकांकी अपने नाम से ही अपनी कथावस्तु को उजागर करती है। इस एकांकी में लोभवश घर की बहू को जला देने की विकराल समस्या को नाटककार ने प्रस्तुत किया है। इस नाटक के माध्यम से प्रो0 शर्मा ने समाज के समक्ष अनेक प्रश्न रखे हैं। दहेज के लोभ में सुशील लड़कियों को जलाना, सताना, ताने–व्यंग्य आदि से उन्हें मर्माहत करना आदि ऐसी अनेक समस्याएँ दिनोंदिन विकराल रूप लेती जा रही हैं। जातिगत व्यवस्था पर भी प्रो0 शर्मा ने ध्यान आकर्षित किया है। उपयुक्त सुयोग्य वर होने पर निम्न जाति का होने के कारण उसे ठुकरा दिया जाता है और दहेजलोभियों के यहाँ कन्या का विवाह कर दिया जाता है। ऐसे में, एक प्रश्न नाटककार ने माता–पिता के समक्ष भी रखा है कि क्या दहेजलोभियों के साथ सम्बन्ध उचित है या फिर सुयोग्य विजातीय वर से कन्या का विवाह उचित है।

इस रूपक में दो बहनों की कथा को दिखाया गया है। बड़ी बहन का ऐसे घर में विवाह हुआ है जहाँ दहेज ना लाने के कारण लगातार प्रमिला को प्रताड़ित किया जाता है, घर के सारे काम–धन्धे उससे ही करवाए जाते हैं। यहाँ तक कि पति के द्वारा उसे उसके पिता से दस हजार रूपये माँगने के लिए दबाव डाला जाता है। प्रमिला के द्वारा पिता की विवशता बताने पर पति उसे पीटता भी है। रूपक के अंत में उसके माता–पिता को सूचना मिलती है कि खाना बनाते समय जलकर प्रमिला की मौत हो गई जो निश्चय ही हत्या है।

छोटी बहन को देखने लड़के वाले आते हैं, जिन्हें सुशील कन्या से ज्यादा दहेज की चिन्ता है और लड़की के पिता के द्वारा दहेज देने की असमर्थता व्यक्त करने पर लड़के वाले विवाह से मना कर देते हैं। विद्रोहिणी बन चुकी कन्या एक विचारशील युवक से विवाह का प्रस्ताव अपने पिता के समक्ष रखती है किन्तु पिता उस लड़के के ब्राह्मण जाति से निम्न जाति का होने के कारण उस सम्बन्ध से मना कर देते हैं। ऐसे में नायिका नन्दिता आजीवन विवाह न करने का संकल्प करती है।

इस सम्पूर्ण घटनाचक्रक को प्रो0 शर्मा ने बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से अपने लघुनाटक में संवादात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। समाज की कठोर व्यावहारिक यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए प्रो0 शर्मा ने एक ऐसे नवयुवक और नवयुवती की मनोदशा का यथार्थ चित्रण किया है जो समाज की कुत्सित परम्पराओं का शिकार होकर टूट चुके हैं, एक ऐसे पिता की मानसिक दशा का मार्मिक चित्रण करने में सफल रहे हैं जो दहेज के लिए जलाई गई अपनी बेटी के हत्यारों को वर्तमान में फैले रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार में आकर डूबे पुलिस कर्मियों के कारण सजा भी नहीं दिलवा पाता है।

<u>द्वेष–दंशनम्</u>

'द्वेष–दंशनम्' नामक एकांकी प्रो0 शर्मा के 'त्रिपथगा' नामक नाट्यसंग्रह का तीसरा नाटक है। यह नाटक जातिगत विद्वेष और साम्प्रदायिकता के प्रति आक्रोश व्यक्त करता है। नाटककार इस नाटक के माध्यम से समाज में हिन्दू–मुस्लिम के मध्य उत्पन्न भेद–भाव को अनुचित बताते हैं। उन्होंने इस नाटक के माध्यम से समाज को संदेश दिया है कि जब सम्पूर्ण विश्व शांति, सौहार्द, भाईचारे की बात करता है तो फिर अपने देश में ये कलह क्यों ? उनका मानना है कि आत्मिक एकता से ही सौहार्द की स्थापना हो सकती है, मात्र लिखने या चर्चा करने से नहीं।

8.5 अभ्यास–प्रश्न

1. प्रो0 राजेन्द्र मिश्र की एकांकियों पर प्रकाश डालिए।

2. प्रो0 हरिदत्त मिश्रा प्रणीत एकांकी 'वधूदहनम्' में वर्णित सामाजिक समस्या पर प्रकाश डालिए।

3. प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा रचित 'तण्डुलप्रस्थीयम्' बीसवीं शताब्दी के प्रकरणों का प्रतिनिधि प्रकरण है – समीक्षा कीजिए।

8.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. प्रयाग की पाण्डित्य परम्परा लेखक – डॉ0 उर्मिला श्रीवास्तव, प्रकाशक – ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दरियागंज, दिल्ली।

2. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रकाशक – विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी

3. वाडवाग्नि, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रकाशक – एकेडेमी प्रेस, दारागंज, प्रयागराज

4. तण्डुलप्रस्थीयम् – समीक्षा, लेखक – डॉ0 बलवन्त कुमार शर्मा, प्रकाशक – हरिलीला पब्लिकेशन्स, स्टेनली रोड, लखनऊ

5. त्रिवेणीकवि अभिराज राजेन्द्रमिश्र, व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व, संपादक – डॉ0 राजेश कुमारी मिश्र, प्रकाशक – वैजयन्त प्रकाशन, बाघम्बरी मार्ग, इलाहाबाद

इकाई–09 गद्यकाव्य का स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 गद्यकाव्य

9.2.1 गद्यसाहित्य का आधुनिक वर्गीकरण

9.2.2 कथा एवं आख्यायिका में अन्तर

9.2.3 गद्यकाव्य का आधुनिक लक्षण

9.2.4 कथा का आधुनिक लक्षण

9.3.5 आख्यायिका का आधुनिक लक्षण

9.3.6 उपन्यास का आधुनिक लक्षण

9.3.7 कथानिका का आधुनिक लक्षण

9.3.8 लघुकथा का आधुनिक लक्षण

9.3.9 दीर्घकथा का आधुनिक लक्षण

9.3 अभ्यास–प्रश्न

9.4 सन्दर्भ–ग्रन्थ

9.0 प्रस्तावना

इस इकाई के अन्तर्गत हम गद्य–काव्य के स्वरूप, गद्य के विभिन्न भेदों तथा उनके आधुनिक लक्षण का अध्ययन करेंगे। कथा–आख्यायिका में अन्तर तथा उनके आधुनिक लक्षण को इस इकाई में पढ़कर अगली इकाईयों में हम आधुनिक गद्यकारों की रचनाओं का अध्ययन करने पर उनमें निहित आधुनिकता के तत्त्व को समझ सकेंगे।

9.1 उद्देश्य

- गद्यकाव्य का स्वरूप तथा उसके भेदों को जान सकेंगे।
- कथा–आख्यायिका में अन्तर समझ सकेंगे।
- कथा के भेदों, आख्यायिका आदि के आधुनिक लक्षण को समझ सकेंगे।

9.2 गद्यकाव्य

इस इकाई में हम गद्यकाव्य तथा उसके भेदों, उपभेदों के विषय में जानेंगे। साहित्यदर्पणकार के अनुसार 'समासरहित पदों में निबद्ध गद्यबन्ध को मुक्तक, पद्यांशों से युक्त गद्यरचना को वृत्तगन्धि, रसयुक्त, दीर्घसमासों में विरचित गद्यप्रबन्ध को उत्कलिकाप्राय एवं थोड़े अर्थात् दो या तीन पदों में उपनिबद्ध गद्यसंरचना को चूर्णक के अभिधान से अलंकारशास्त्रीय ग्रन्थों में अभिहित किया गया है (साहित्यदर्पण–षष्ठपरिच्छेद–330–31)'।

काव्यों की विशेषताओं के आधार पर उनका वर्गीकरण किया गया है। काव्य के दो भेद–श्रव्यकाव्य तथा दृश्यकाव्य किये गए। पुनः श्रव्यकाव्य के दो भेद – पद्यकाव्य तथा गद्यकाव्य किये गए। इसी प्रकार दृश्यकाव्य के भी – रूप, रूपक तथा नाटक भेद किये गए।

छन्दोमुक्त शब्द समूह जब मनोभावों को व्यक्त करने के लिए एकत्र होकर अर्थ प्रदान करते हैं तो उन्हें गद्य कहा जाता है। छन्दादि से मुक्त होकर जब शब्द समूह अभिप्रेत अर्थ को व्यक्त

करते हैं, तो गद्य साहित्य की रचना होती है। भावाभिव्यक्ति में सरलता, पद–समूहों के प्रयोग, लेखक की शैली आदि में भिन्नता होने के कारण गद्य के अनेक भेद हो गए।

अग्निपुराण में गद्यकाव्य के आख्यायिका, कथा, खण्डकथा, परिकथा और कथानक ये पांच भेद किए गए हैं। दण्डी के अनुसार खण्डकथा, परिकथा तथा कथानक आदि गद्यकाव्य के भेद कथा और आख्यायिका में ही अन्तर्भूत हैं। आचार्य विश्वनाथ, भामह, दण्डी, रूद्रट आदि विद्वानों ने भी गद्यकाव्य के कथा और आख्यायिका भेद स्वीकार किए हैं।

9.2.1 गद्यसाहित्य क आधुनिक वर्गीकरण

इक्कीसवीं शती ई0 में संस्कृत गद्य को चार रूपों में स्वीकार किया गया है –

1. उपन्यास (प्राचीन कथा एवं आख्यायिका)
2. कथानिका (कहानी)
3. लघुकथा
4. दीर्घकथा

वर्तमान में कुछ आधुनिक कथाकार स्पश्–कथा (जासूसी), टुप्–कथा (लघुकथा), संस्मरण, यात्रावर्णन आदि भेद कर रहे हैं। किन्तु इन सभी को लघुकथा के अन्दर रखा जा सकता है।

9.2.2 कथा एवं आख्यायिका में अन्तर

मुख्यरूप से कथा और आख्यायिका में एक ही अन्तर होता है कि कथा की विषयवस्तु काल्पनिक तथा आख्यायिका की विषयवस्तु में ऐतिहासिक घटना का उल्लेख होता है। कथा के रूप में कादम्बरी तथा आख्यायिका के रूप में हर्षचरित को मानने पर दोनों में निम्नलिखित भिन्नताएँ दिखाई देती हैं –

1. कथा की विषयवस्तु कविकल्पित होती है, आख्यायिका में ऐतिहासिक होती है।

2. कथा के प्रारंभ में सज्जनों की प्रशंसा, दुर्जनों की निन्दा तथा कवि के वंश का वर्णन पद्यात्मक रूप में रहता है। आख्यायिका के आरम्भिक पद्यों में प्राचीन कवियों की प्रशंसा रहती है किन्तु कविवंश का वर्णन गद्य में रहता है।

3. कथा का सर्ग या उच्छवास में विभाजन नहीं होता है जबकि आख्यायिका उच्छवास, निःश्वास या आश्वास आदि में विभक्त होती है।

4. कथा में अवांतर प्रसंग से भी प्रारंभ किया जा सकता है, बाद में मुख्य कथा का उपक्रम किया जाता है। आख्यायिका का आरंभ आत्मकथा के रूप में होता है किन्तु कवि अपने लिए अन्यपुरुष का ही प्रयोग करता है। नायक का चरित वर्णन जब नायक स्वयं करता है तो आख्यायिका होती है।

5. आख्यायिका में वक्त्र तथा अपरवक्त्र छन्दों का प्रयोग किया जाता है, पर कथा में नहीं।

6. कथा की भाषा संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत या अपभ्रंश भी हो सकती है परन्तु आख्यायिका केवल संस्कृत में ही होती है।

दण्डी ने कथा–आख्यायिका में अन्तर्भाव – 'अत्रैवान्तर्भविष्यन्ति शेषाश्चाख्यानजातयः' कहकर गद्य के कुछ अन्य भेदों की तरफ भी इशारा किया है। आचार्य हेमचन्द्र ने गद्यकाव्य के 12 भेदों का वर्णन अपने ग्रन्थ काव्यानुशासन में किया है।

9.2.3 गद्यकाव्य का आधुनिक लक्षण

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र ने गद्यकाव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है –

गद्यं चतुर्विधं प्रोक्तं मुक्तकं वृत्तगन्धि च।
ततश्चोत्कलिकाप्रायं चूर्णकश्चान्तिमं मतम्।।
असमस्तपदं मुक्तं पद्यांशि वृत्तगन्धि च।
अन्यद्दीर्घसमासाद्यं चूर्णमल्पसमासकम्।।

अर्थात् गद्य चार प्रकार का बताया गया है – मुक्तक, वृत्तगन्धि, उत्कलिकाप्राय और चूर्णक। समासहीन पदों वाला गद्य मुक्तक, पद्यांशों से युक्त (अथवा पद्य जैसा प्रतीत होने वाला) वृत्तगन्धि तथा दीर्घ समासों से ओतप्रोत उत्कलिकाप्राय तथा अल्प समासों से युक्त गद्य चूर्णक है।

आचार्य त्रिपाठी ने गद्यकाव्य के निम्नलिखित भेद स्वीकार किये है –

'निबन्ध – कथोपन्यास संस्मरणात्मकथा – रेखाचित्रजीवनचरित्र, यात्रावृत्तादयो गद्यभेदाः।'

अर्थात् निबन्ध, कथा, उपन्यास, संस्मरण, आत्मकथा, रेखाचित्र, जीवनचरित्र, यात्रावृत्त आदि गद्य के भेद किये हैं।

3.3.4 कथा का आधुनिक लक्षण

प्रबन्धात्मकगद्यस्य रूपद्वयमुदाहृतम्।
कथेति प्रथमं तत्राऽख्यायिकेत्यपरं मतम्।।
कथा तत्र भवेद्रम्या सरसा कल्पनाश्रिता।
दिव्याऽदिव्येतिवृत्तांशा विविधानुभवैर्युता।।
आदौ तत्र नमस्कारः खलादिचरितं तथा।
कथाकर्तुरभिप्रायोऽखिलं पद्यमयं भवेत्।।
तत्र क्वचिद्भवेदार्या क्वचिद्वक्त्रापवक्त्रके।
क्वचिच्चाप्यात्मसंस्पर्शः प्रतिभाशिल्पमण्डितः।।

अर्थात् प्रबन्धात्मक गद्य का दो प्रकार का होता है – कथा और आख्यायिका। इन दोनों में रमणीयतापूर्ण, रसयुक्त और कल्पना पर आधारित गद्यात्मक कृति कथा होती है। यह दिव्य अथवा मानवीय वर्ण्यवस्तु पर आधारित तथा विविध अनुभवों से युक्त होती है।

कथा के प्रारंभ में नमस्कार–विधि होती है, खल प्रवृत्ति के लोगों आदि का चरित तथा बाद में कथाकार का अभिप्राय वर्णित होता है। इन सबका वर्णन गद्यात्मक न होकर पद्यात्मक होता है।

कथा में कहीं आर्या का और कहीं वक्त्र एवं अपरवक्त्र छन्दों का प्रयोग तथा कवि की प्रतिभा के अनुसार उसकी भावनाओं की अभिव्यक्ति भी होनी चाहिए।

प्रो0 मिश्र के द्वारा दिए गए 'कथा' के लक्षण तथा प्राचीन आचार्यों द्वारा प्रदत्त लक्षण में काफी समानता है। मिश्र जी का लक्षण आधुनिक है, इसलिए उन्होंने भाषा के संबंध में अपना मत नहीं प्रगट किया है क्योंकि इस युग में प्राकृत एवं अपभ्रंश का प्रचलन समाप्तप्राय है।

9.3.5 आख्यायिका का आधुनिक लक्षण

आख्यायिकोपलब्धार्था तस्मादैतिह्यसम्मता।
आश्वासैः संविभक्ता स्यादार्याप्रभृतिमण्डिता।।
वर्णितास्यादियं नेतृमुखेनैवेति केचन।
नैवमित्यपरे तस्मादुभयं भाति सम्मतम्।।
आर्यावक्त्रापवक्त्रैश्च ननु भाव्यर्थसूचनम्।
अन्यापदेशपद्धत्याऽश्वासारम्भे विधीयते।।
युज्यते च समारम्भे कविवंशानुकीर्तनम्।
कविवृत्तान्तरश्चापि परपद्यं क्वचित्क्वचित्।।

आख्यायिका कवि कल्पित न होकर लोक की घटनाओं, इतिहास की घटनाओं पर निर्भर होती है तथा आर्या आदि छन्दों से युक्त आख्यायिका का विभाजन आश्वासों में किया जाता है।

प्रो0 मिश्र ने प्राचीन आचार्यों को उद्धृत करते हुए स्पष्ट किया है कि कुछ प्राचीन आचार्यों के अनुसार आख्यायिका का वर्णन नायक के मुँह से होना चाहिए किन्तु कुछ आचार्यों ने कवि द्वारा भी वर्णन किए जाने को माना है। अतः प्रो0 मिश्र ने दोनों ही पद्धतियों को उचित माना है।

प्रो0 मिश्र ने स्पष्ट किया है कि आश्वास के प्रारंभ में ही, अन्यापदेश–पद्धति का आश्रय लेकर भावी कथा आर्या, वक्त्र अथवा अपरवक्त्र छन्दों द्वारा सूचित कर दी जाती है।

आख्यायिका के प्रारंभ में कविवंश का वर्णन किया जा सकता है। कविवृत्त के बाद अन्य कवियों के पद्य भी उद्घृत किये जा सकते हैं।

9.3.6 उपन्यास का आधुनिक लक्षण

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र के अनुसार—

कथाऽऽख्यायिकयोः कश्चिन्मिश्रभेदोऽपि साम्प्रतम्।
उपन्यास इति ख्यातो भाषान्तरप्रतिष्ठितः।।
कालखण्डविशेषस्य तमग्रं जनजीवनम्।
प्रतिबिम्ब इवादर्शे न्यस्यतेऽत्र सविस्तरम्।।
क्वचित्सामाजिकी क्रान्तिः सर्वोदयसमर्थिनी।
रूढिपाखण्डविध्वंसो नवाचारः क्वचित्पुनः।।
महाकाव्यवदेवायमुपन्यासोऽपि वस्तुतः।
सांगोपांग समग्रश्च नेतृजीवनचित्रणम्।।

— अभिराजयशोभूषणम्

कथा—आख्यायिका का मिला—जुला रूप वर्तमान में उपन्यास के नाम से विख्यात है जो संस्कृत से अलग भाषाओं में विशेष रूप से प्रतिष्ठित है।

उपन्यास में किसी पूरे कालखण्ड जन जीवन का सांगोपांग वर्णन दर्पण में दिखाई देने वाले प्रतिबिम्ब की भांति विस्तृत रूप से उपन्यस्त होता है।

उपन्यास में कहीं—कहीं ऐसी सामाजिक क्रांति का वर्णन होता है जिसे समाज के हर वर्ग का समर्थन प्राप्त हो। कहीं—कहीं पाखंड और रूढियों के विद्रोह से पनपी नई सामाजिक व्यवस्था का चित्रण होता है।

प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार —

'गद्यबद्ध उपन्यासों महाकाव्यमयी कथा'

— अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्

राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने महाकाव्यमयी कथा को ही उपन्यास माना है। 'महाकाव्यमयी' कहने के आशय से माना जा सकता है कि इसमें नायक के सम्पूर्ण जीवन का वर्णन हो।

डॉ0 रहस बिहारी द्विवेदी के अनुसार –

गद्यकाव्यबृहद्बन्ध उपन्यासोऽभिधीयते।
अस्मिन् युगोचितं वस्तु पात्रं कविसमीहितम्।।
देशकालोचितं चित्रं गद्यशिल्पं मनोहरम्।
कल्पितं चापि तत्सर्वं यथार्थं सत्प्रतीयते।।

– नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा

रहसबिहारी जी के अनुसार बृहद्बन्ध को उपन्यास माना जाता है जिसमें देशकालोचित घटनाओं का चित्रण हो। जो कल्पित भी किया जाए, वह भी यथार्थ जैसा ही प्रतीत हो।

वास्तव में, महाकाव्य की भांति ही उपन्यास भी नायक के सांगोपांग एवं समग्र चरित्र का वर्णन करता है।

9.3.7 कथानिका का आधुनिक लक्षण

प्रतिष्ठाधुरमध्यास्ते कथाभेदो हि कश्चन।
अभीष्टा सर्वभाषासु प्रोच्यते सा कथानिका।।
गृहीत्वा किमप्युद्देश्यं लोकाऽभ्युदयकारकम्।
चित्रणेन चरित्राणां सरत्यग्रे कथानिका।।
क्वचित्पात्रमुखेनैव, क्वचिल्लेखकभाषया।
क्वचित्संवादपद्धत्या पूर्वोन्मेषदिशा क्वचित्।।
शिल्पान्तरैरनेकैश्च निबद्धेयं कथानिका।
लघ्वी दीर्घेति भेदाभ्यां द्विविधैव महीयते।।

प्रो0 मिश्र ने अपनी पुस्तक 'अभिराजयशोभूषणम्' में कथानिका का लक्षण देते हुए लिखा कि कथा का ही कोई भेद न केवल संस्कृत में अपितु समस्त भारतीय भाषाओं में सबसे ज्यादा लोकप्रिय और प्रतिष्ठित है, उसे कथानिका या कहानी कहते हैं।

लोक के अभ्युदय के उद्देश्य को लेकर, मानवीय चरित्रों के चित्रण से कहानी विकसित होती है।

कहानी का विकास कहीं पात्र (नायक), तो कहीं लेखक के माध्यम से तो कहीं पात्रों के संवाद द्वारा होता है।

अनेक प्रकार से विकसित होती हुई कहानी के दो भेद होते हैं – लघु कहानी तथा दीर्घ कहानी।

9.3.8 लघुकथा का आधुनिक लक्षण

नाऽतिविस्तृतसन्दर्भा विद्युदुन्मेषसन्निभा।
नूनं लघुकथेयं स्यादेकपात्रावसायिनी।।

लघुकथा का सन्दर्भ (वर्ण्य विषय) विस्तृत न होकर संक्षिप्त होता है जैसे – बिजली का चमकना क्षणभर के लिए होता है, लघुकथा प्रायः एक ही पात्र से प्रारंभ और समाप्त होती है। लघुकथा अल्पाक्षरों वाली अर्थात् छोटी और न्यून पात्रों वाली तथा लघुआकार की होती है।

9.3.9 दीर्घकथा का आधुनिक लक्षण

'इयमेव कथा नैकखण्डपरिसमाप्ता विविधबृहद्घटनाचक्रवर्णनपरा दीर्घकथेत्युच्यते।' कथा में अनेक खण्डों में समाप्त होती है और वैविध्ययुक्त बृहद् घटनाओं का वर्णन होता है।

दीर्घकथा को ही सकलकथा भी कहा जाता है। अनेक घटनाओं के वर्णनोपरान्त अन्त में जब समस्त फल की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है, तो उसे सकलकथा कहते हैं। जैसे – वेतालपञ्चविंशतिका। इस रचना को सकलकथा मानने का कारण यह है कि कथा के अन्त में विक्रमादित्य को मनोवांछित फल की प्राप्ति हो जाती है।

दीर्घकथा की मूलकथा के साथ–साथ छोटी–मोटी प्रकरी कथाएँ भी चलती हैं। दीर्घकथा कई खण्डों में विभक्त होती है।

9.3 अभ्यास–प्रश्न

1. काव्य के भेदों पर प्रकाश डालिए।
2. कथा एवं आख्यायिका में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. गद्यकाव्य का आधुनिक लक्षण स्पष्ट कीजिए।
4. उपन्यास किसे कहते हैं, लक्षण द्वारा स्पष्ट कीजिए।
5. लघुकथा एवं दीर्घकथा में क्या अन्तर है, स्पष्ट कीजिए।

9.4 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक इतिहास, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र
2. नई सहस्राब्दी में संस्कृत, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र
3. अभिराजयशोभूषणम्, लेखक – प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र
4. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, लेखक – डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी
5. न्वयकाव्यतत्त्वमीमांसा, लेखक – डॉ0 रहस बिहारी द्विवेदी

इकाई–10 गद्यकाव्य एवं कवि परिचय

इकाई की रूपरेखा

10.0 प्रस्तावना

10.1 उद्देश्य

10.2 राजेन्द्रमिश्रकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.3 पं0 क्षमारावकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.4 राधावल्लभ त्रिपाठीकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.5 केशवचन्द्रदाशकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.6 पं0 रामकरण शर्माकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.7 डॉ0 नलिनीशुक्लाकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

10.8 अभ्यास–प्रश्न

10.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

10.0 प्रस्तावना

इस इकाई में राजेन्द्रमिश्र, क्षमाराव, केशवचन्द्रदाश तथा नलिनीशुक्ल द्वारा रचित कथा–कहानियाँ का सामान्य अध्ययन करेंगे। इन सभी गद्यकारों का परिचय पूर्व इकाईयों में अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में उपरोक्त गद्यकारों की रचनाओं का सामान्य परिचय दिया गया है।

10.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित कथाओं और कहानियों के विषय में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद क्षमाराव की कहानियों–कथाओं के अध्ययन के पश्चात सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- केशवचन्द्रदाश की कथा और कहानियों के अध्ययनोपरांत सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नलिनीशुक्ला की कथाओं की सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

10.2 राजेन्द्रमिश्रकृत् कथाएँ तथा कहानियाँ

इक्षुगन्धा – इस कथानिकाओं के संग्रह में जिजीविषा, सुखशयितप्रच्छिका, अनामिका, एकहायनी, शतपर्विका, भग्नपञ्जरः ताम्बूल करंकवाहिनी तथा इक्षुगन्धा नामक उत्कृट मर्मस्पर्शी कहानियाँ हैं। मिश्र जी की इस कृति के लिए उन्हें 1988 में साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। इन कहानियों के माध्यम से प्रो0 मिश्र ने वर्तमान समाज में विद्यमान नारियों की समस्याओं को समाज के सामने उपस्थापित किया है। इनमें से इक्षुगन्धा का बंगला अनुवाद साहित्य अकादमी की कलकत्ता शाखा ने 2008 में करवाया था। बाद में कई अन्य भाषाओं में भी इसका अनुवाद हुआ। इनकी कथाओं में आधुनिक परिवेश, मनःस्थितियों का चित्रण,

सामाजिक रूढ़ियों की विडम्बनाओं पर प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष प्रहार मिलता है। महिला को विभिन्न रूपों में समस्याओं से जूझते हुए प्रस्तुत किया है।

रांगडा

'रांगडा' मूलतः संस्कृतमूलक जावी शब्द है। यह संस्कृत के 'रण्डा' जिसका अर्थ 'विधवा' होता है – का तद्भव शब्द है। इस कहानी का मुख्य आधार बालीनरेश धर्मोदयनदेव वर्मा की विधवा रानी महेन्द्रदत्ता का कारुणिक जीवन है।

इस संग्रह में अन्य कहानियाँ – कुलदीपकः अधमर्णः, कुक्की, चञ्चा, महानगरी, एकचक्र, पोतविहगौ तथा सिंहसारि भी संवेदनाओं से ओत–प्रोत हैं। इन कहानियों में विविधता है। 'कुक्की' मानवीय संस्कार से ओत–प्रोत एक बिल्ली की कहानी है तो 'पोतविहगौ' द्वितीय विश्वयुद्ध का पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी है। इस कहानी को मिश्र जी ने निहालपाण्डे तथा महुली की प्रणयकथा के रूप में प्रस्तुत किया है। 'चञ्चा' शीर्षक कहानी को उन्होंने फ्लैश बैक (पूर्वोन्मेष विधि) में प्रस्तुत किया है। इस कहानी में दोहरा जीवन जीने वाले एक अधिवक्ता तथा उसके पापपूर्ण आचरण से पीड़ित मुन्नीबाई की कथा है। इसका प्रकाशन 1992 में वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है।

पुनर्नवा

इस कहानी – संग्रह में पूर्वी–पश्चिमी संस्कृति के समन्वय, विधवा–विवाह का शास्त्रीय समर्थन, दैवकृपा, सत्य–धर्म की रक्षा के लिए आत्मबलिदान आदि विषयों पर आधारित ग्यारह कहानियाँ संग्रहीत हैं। इनमें से एक कहानी को महाकवि बाण से संबंधित होने के कारण ऐतिहासिक श्रेणी में रखा जा सकता हैं। अन्य सभी कहानियाँ हमारे रोममर्रा समाज की अच्छाई–बुराइयों का चित्रण करती हैं। इसका प्रकाशन 2008 में वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है।

चित्रपर्णी

2000 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन से प्रकाशित 'चित्रपर्णी' नामक लघुकथा संग्रह में 65 लघुकथाएँ समाहित हैं। इन लघुकथाओं की प्रधानता इनमें विद्यमान संवेदना है जो तुरन्त ही मनुष्य के

मनोमस्तिष्क को व्याप्त कर लेती हैं। इसका प्रकाशन 2000 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है।

छिन्नमस्ता

'छिन्नमस्ता' नामक कथानिका संग्रह में नौ कथानिकाएँ संग्रहीत हैं। जिनके नाम – स आसीन्मम तातपादः, प्रीतिदर्पणः, मध्यमाज्जुका, छिन्नमस्ता, प्रायश्चित्तम्, मातुर्निमित्तम्, वाडवाग्नि, पितृष्वसा तथा कन्यादानम् हैं। इन सभी कहानियों में कथाकार की प्रौढ़ता तथा परिपक्वता अपने चरम शिखर पर दिखाई पड़ती है। सामाजिक परिवेश को समीप से देखने–समझने की उनकी सूक्ष्मदृष्टि ने इन कथानिकाओं में विलक्ष्णता उत्पन्न कर दी है।

'छिन्नमस्ता' नाम से संग्रहीत कहानी एक बाल–विधवा की है जो अपने कुल–खानदान के सुयश की रक्षा करने के लिए स्वयं अपने अस्तित्व को गुमनामी के अंधेरे में डूबा लेती है किन्तु विधि के विधान से वही अपने कुल के एक बच्चे की जीवनरक्षक बनती है। इस संग्रह का प्रकाशन 2010 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन से हुआ है।

वाडवाग्नि

2019 ई0 में वैजयन्त प्रकाशन से प्रकाशित 'वाडवाग्नि' नामक कथाओं के संग्रह में 11 कहानियाँ संकलित हैं। जिनके नाम – स्वयंवृता, आत्मबोध, प्रतीकार, पानकमूल्यम्, रक्षाबन्धनम्, गृहदेवता, अपरोक्षानुभूतिः, सपत्नी, नर्तकी, मातुनिर्मित्तम् तथा वाडवाग्निः हैं। इनमें से आठ कथाएँ नवीन हैं तथा तीन कथाएँ पुराने संग्रहों से ली गई हैं। कथाकार ने अत्यन्त चमत्कारपूर्ण ढ़ंग से अपने आस–पास के ईस्ट–मित्रों को ही कथा की वस्तु बनाया है।

औदीच्चयक्षगानम्

दक्षिण भारत में प्रचलित यक्ष–गान का स्वरूप गद्यात्मक होता है। इस 'औदीच्चयक्षगानम्' नामक संग्रह के द्वारा मिश्र जी ने दक्षिण भारत में गाए जाने वाले यक्षगान से उत्तर भारत को परिचित कराया है। इस संग्रह के गीतों की गद्य और पद्य दोनों विधाओं में रचना की है। इस संग्रह में –कर्णावसानम्, ययात्युद्धरणम्, कुन्तीसन्तापः, वशिष्ठप्रत्युज्जीवनम्, भारतधरित्रीविलपनम्,

विपन्नालमगीरम्, उन्मत्तपौरूरवसम्, बम्लहरीयक्षगानम्, शिवगौरीगंगायक्षगानम् तथा संस्कृतयक्षगानम् – कुल दस यक्षगान हैं। इनमें से प्रारम्भिक सात यक्षगान दक्षिण भारतीय शैली तथा मान्यताओं पर ही आधारित हैं तथा अन्तिम तीन कवि की कल्पनाओं पर आधारित पद्यमयी रचना हैं। इस संग्रह का प्रकाशन केन्द्रीय–संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली द्वारा 2020 ई0 में हुआ है।

कान्तारकथा (वन्यजीवन कथा)

कान्तारकथा में प्रसिद्ध मोगली की कथा जो दूरदर्शन पर 'जंगल बुक' के नाम से प्रदर्शित हुई थी, वर्णित है। यह कथा वन जीवन का एक अनूठा और विलक्षण है, वर्णन है। इस कथा के माध्यम से कवि ने जंगली व हिंसक पशु के भी अन्दर विद्यमान ममता–वात्सल्य को उभारा है। इस कथा में वयोवृद्ध भालू के माध्यम से भेड़िया दम्पत्ति के द्वारा बचपन से ही पाले–पोसे गए एक मनुष्य की संतान मोगली को समझाया गया वन्य जीवन का दर्शन अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी है।

अभिनवपञ्चतन्त्रम्

'अभिनवपञ्चतन्त्रम्' नामक कथा संग्रह में बाल्यकथाएँ संग्रहीत हैं। इसमें संकलित कथाओं की पृष्ठभूमि भारतीय तथा बालीद्वीप दोनों का परिवेश है। इस संग्रह में कुछ पुरानी तथा कुछ नई कथाएँ संकलित हैं।

10.3 पं0 क्षमारावकृत् कथाएँ एवं कहानियाँ

कथामुक्तावली

कथामुक्तावली नामक कथासंग्रह पंडिता क्षमाराव द्वारा रचित 15 कथाओं का संग्रह है। संभवतः यह कथा संग्रह स्वातन्त्र्योत्तर–काल का प्रथम प्रकाशित कथा–संग्रह है। इन कथाओं में पंडिता क्षमाराव ने तत्कालीन समाज में फैली बुराइयों तथा दुःखी, पीड़ित, विधवा, बन्ध्या, तलाकशुदा, महिलाओं के जीवन को अपना वर्ण्य विषय बनाया है। इनकी कथाओं का अन्त प्रायः दुखान्त ही है। इस संग्रह का प्रकाशन 1954 में हुआ।

कथापञ्चम्

यह कथा संग्रह पाँच कथाओं का संग्रह है जिसका प्रकाशन 1933 ई0 में मुम्बई से हुआ था। ये सभी कथाएँ पद्यात्मक रूप में अनुष्टुप छन्द में लिखी गई हैं। इनमें से 'बालिकोद्वाहसंगटम्' नाम से पुनः प्रकाशित हुई थी। इस कथा में एक बालविधवा की कथा है जो शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना के बाद भी पुनर्विवाह नहीं कर पाती है।

इस संग्रह की सभी कथाएँ करुणापूर्ण एवं महिलाओं की दयनीय स्थिति को दर्शाने वाली हैं 'गिरिजाया प्रतिज्ञा' कौतूहल प्रधान कथा है। 'हैमसमाधि' नामक कथा में नायक–नायिका का मिलन बर्फ में दबकर मृत्यु के समय ही होता है। 'प्रेमसोद्रेक' कथा एक परित्यक्ता पत्नी की दृढ़ प्रतिज्ञा पर आधारित है जो अपने बच्चे का मुँह भी उसके पिता को नहीं देखने देती है। 'मत्स्यजीव्येव केवलम्' में एक मछुआरे के साधु बनने पर मछुआरे समाज द्वारा माँ–पुत्र का बहिष्कार किये जाने की कथा वर्णित है। इस संग्रह का आकर्षण है – कथा 'मायाजालम्'। यह कथा चार ऐसी महिलाओं के अनुभवों के वर्णन पर आधारित है, जो अपने पतियों या प्रेमियों द्वारा ठुकराई गई हैं।

क्षमाराव की भाषा कथा के अनुरूप है। इनकी कथाओं में लोकोक्तियों एवं मुहावरों प्रयोग बहुलता से है। कहीं–कहीं पर लम्बे समासों तथा क्लिष्ट पदों का भी प्रयोग किया गया है।

10.4 आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी की कथाएँ एवं कहानियाँ

उपाख्यानमालिका

'उपाख्यानमालिका' एक दीर्घकथाओं का संग्रह है जो पौराणिक कथाओं को वर्तमान से जोड़कर देखने की नवीन शैली पर आधारित है। लेखक ने पुराणों में प्राप्त होने वाले पारम्परिक पदों को नये आधुनिक भावों से जोड़कर प्रस्तुत करने का अद्भुत कार्य किया है।

इस उपाख्यानमाला में चार उपाख्यान हैं। इनके कहने की शैली पुरानी है किन्तु विषय और परिवेश से जोड़ने का ढ़ंग अद्‌भुत है। इन उपाख्यानों के नाम – विचित्रोपाख्यानम्, मायाविन्युपाख्यानम्, अभिनवशाकुन्तलम् और मदनदहनम् हैं।

विचित्रोपाख्यानम्

'विचित्रोपाख्यानम्' चार अध्यायों में विभक्त है। इन अध्यायों में एक विचित्र जीव जरद्‌गव (जो प्राचीन सभ्यता का प्रतीक है) का वर्णन है। प्रथम अध्याय में लेखक ने इस अद्‌भुत जीव तथा जन साधारण को प्रभावित करने वाले अनेक अफवाहों तथा मत–मतान्तरों के खंडन–मंडन की प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है।

दूसरे अध्याय में भारतीय प्राचीन संस्कृति से प्रभावित और आकर्षित एक फ्रांसिसी युवती मिनी की कहानी है जो उस अद्‌भुत जीव जरद्‌गव की खोज में भारत आती है। मिनी भारत आकर उसकी खोज में घने जंगल में प्रवेश करती है किन्तु बहुत समय तक उसका कुछ पता नहीं चलता है, तब फ्रांस द्वारा एक जाँच समिति गठित की जाती है, जो बाद में मिनी के अस्तित्व को ही नकार देती है। इस उपाख्यान में लेखक ने वर्तमान युग की प्रवृत्तियों पर करारा व्यंग्य किया है। लेखक अपनी लेखन की अद्‌भुत और विलक्षण शैली से उपाख्यान शैली में वर्णित इस कहानी में अपने पाठकों के बरबस अपनी ओर बांधे रखने में सक्षम हैं।

तीसरे अध्याय में मिनी तथा उसके माता–पिता की सम्पूर्ण कथा वर्णित है। लेखक ने बखूबी उनका प्रथम परिचय, दाम्पत्य, कलह तथा मतभेदों का यथार्थ चित्रण किया है। तदुपरान्त मिनी की परवरिश, शिक्षा–दीक्षा तथा माता–पिता के देहान्त का मार्मिक वर्णन लेखक ने किया है।

चतुर्थ अध्याय में मिनी के जरद्‌गव से मुलाकात तथा परस्पर विभिन्नतापूर्ण संघर्ष तथा मैत्री का वर्णन है। जरद्‌गव पुरानी सभ्यता संस्कृति का प्रतीक है तो मिनी उसके विपरीत पाश्चात्य आधुनिक, ज्ञान–विज्ञान का प्रतीक है। लेखक ने दो संस्कृतियों के मिलन पर उत्पन्न होने वाली स्थितियों को जीवन्त शैली में उभारा है। मिनी और जरद्‌गव दोनों एक दूसरे को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। लेखक द्वारा प्रस्तुत किये गए अनेक ऐसे गूढ़ सन्दर्भ हैं जो

जनसामान्य को झकझोरते हैं। धीर–धीरे जरद्गव विलुप्त होता जाता है। जनसामान्य मिनी पर मोहित होता जाता है। चारों ओर मिनी का ही बोल–बाला हो जाता है। इस अध्याय में ज्ञान–विज्ञान के कारण समाज में आए परिवर्तनों का विस्तृत वर्णन लेखक ने किया है। अपने ही देश में प्राचीन संस्कृति का प्रतीक जरद्गव विलीन हो जाता है, कोई उसे पहचानता नहीं है। अंत में, मृतप्राय जरद्गव रूपी भारतीय परम्परा और संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति रूपी मिनी ही पहचानती है।

संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में इस उपाख्यान का विशिष्ट स्थान है। लेखक के चिन्तन एवं वर्णन शैली ने इस रचना को उत्कृष्टता प्रदान की है। इस उपाख्यान में लेखक ने कई उभरती हुई सामाजिक समस्याओं जैसे – प्रथमदृष्टया होने वाले प्रेम की दुःखद परिणति, गृहकलह, अकेली युवती के समक्ष आने वाली समस्याओं का भी यथार्थ चित्रण किया है।

मायाविनी उपाख्यान

'मायाविनी उपाख्यान' नाम से स्पष्ट होता है कि यह भी उपाख्यान शैली में लिखा गया साहित्य है। इस उपाख्यान में लेखक ने प्रकृति एवं मानव के रिश्तों के महत्त्व को प्रस्तुत किया है। मनुष्य नित्य अपने लालच में प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर रहा है और उसके परिणामस्वरूप नित नई आपदाएँ आ रही हैं। लेखक ने सूत जी को एक पुराणकालीन वयोवृद्ध के रूप में चित्रित किया है कि जब वो अपनी जन्मभूमि को देखने आता है तो उसका अनुभव कैसा रहेगा। मालिनी नदी पर बाँध बाँधने के अथक प्रयास के बाद भी उसके अदम्य प्रवाह को रोकने के प्रयास में भूकम्प को न्योता दे बैठते हैं। यहाँ तक कि सूतजी के प्राचीन परिधान को देखकर उन्हें आतंकवादी मानकर गिरफ्तार कर लिया जाता है। सम्पूर्ण उपाख्यान में सूतजी तथा माया का वर्णन है। यहाँ सभी पात्र प्रतीक स्वरूप हैं। इस उपाख्यान में लेखक ने आधुनिकता तथा परम्परा को प्रतीक स्वरूप में चित्रित किया है।

अभिनवशाकुन्तलम्

'अभिनवशाकुन्तलम्' नामक उपाख्यान में सूतजी, कथावक्ता या फिर कथाकार के छात्रजीवन की सहज अनुभूतियों को आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस उपाख्यान का प्रारंभ

सूतजी के आधुनिक वस्त्र को देखकर ऋषि मुनियों द्वारा आश्चर्य व्यक्त किये जाने पर और सूतजी द्वारा उन्हें आपबीती सुनाने से हुआ है।

इस उपाख्यान का समय लगभग स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद का दर्शाया गया है जब कथावक्ता को प्रथमा की पढ़ाई करते समय पहली बार शाकुन्तलम् नाटक पढ़ने को मिलता है। वक्ता का किशोर मन उसे साहित्य न मानकर यथार्थ समझकर डूब जाता है। शकुन्तला को अपना मानकर उसके मोहपाश में बंध जाता है। इसी क्रम में वह गुरूकुल के प्रबंधक साधुशरण जी की पुत्री शकुन्तला के रूप–लावण्य, भोलेपन, सरलता में बह निकलता है। अनेक घटनाक्रम के मध्य रोहित रूपी कथावक्ता शकुन्तला के आकर्षण में बंधता जाता है। जिस प्रकार शकुन्तला और दुष्यन्त का प्रेम वर्षों बाद मिलता हैं, उसी प्रकार रोहित और शकुन्तला वर्षों बाद अचानक एक–दूसरे के सामने आ जाते हैं तथा अनेक तथ्यों का उद्घाटन होता है। तदुपरान्त लेखक ने इनके सफल दाम्पत्य का वर्णन किया है।

निरन्तर परिवर्तित हो रहे समाज में लेखक ने जीवन–मूल्यों, सौन्दर्य और संवेदनाओं को सुरक्षित रखते हुए अपने संस्कारों और मर्यादाओं को जीवन्त रखा है। सामाजिक–पारिवारिक मर्यादाओं के मध्य प्रेम की गम्भीरता का स्वभाविक चित्रण इस उपाख्यान की विशिष्टता है। लेखक की भाषा सहज और सरल है।

मदनदहनम्

'मदनदहनम्' नामक इस चौथे और अंतिम उपाख्यान में लेखक ने शिव–उमा के पौराणिक चरित्रों को परिवर्तित परिवेश में ढाल कर चित्रित किया है। यहाँ शिव के ऑफिस में कार्यरत उमा और उसकी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है। पत्नी सती के निधन के बाद शिव के जीवन में प्रेम और आनन्द भरने की इच्छुक उमा की इच्छाओं से अनभिज्ञ शिव के द्वारा क्रोध करने पर उमा वहाँ से काम छोड़कर शिक्षिका बन जाती है। वहाँ कुमारसम्भव नृत्य नाटिका का सफल मंचन कराने के बाद शिव उससे अपना प्रेम प्रकट करते हैं किन्तु उमा शिव का प्रस्ताव अस्वीकार कर देती हे क्योंकि उसके शिव तो कुमारसंभव में ही रह गये।

इस उपाख्यान में शिव–उमा संवाद, आफिस का दृश्य, उमा के घर का दृश्य व संवाद, प्राचार्या और उमा का संवाद आदि सभी को लेखक ने अपनी कल्पना और सृजनशीलता से जीवन्त कर दिया है।

मञ्जुनाथगद्यगौरवम्

'मञ्जुनाथगद्यगौरवम्' आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा संपादित पुस्तक है। इसमें भट्ट मथुरानाथशास्त्री के द्वारा विरचित नौ कथाएँ, तीन उपन्यास और एक नाटक संकलित है। इस संग्रह का प्रकाशन 2004 में प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ।

10.5 केशवचन्द्रदाशकृत कथाएँ और कहानियाँ

आधुनिक लेखक के समक्ष जो भी सामाजिक समस्याएँ आती है या जो भी सामाजिक वातावरण दिखाई देता है। लेखक उसी पर अपनी लेखनी उठाता है। इसलिए ही साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। केशवचन्द्र दाश की रचनाओं पर भी उनके देश, काल, भाषा, संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। केशवचन्द्र दाश की कहानियाँ अत्यन्त संक्षिप्त हैं। लेखक ने व्याकरणीय दृष्ट बहुत अधिक पैनी नहीं रखी है। छोटे–छोटे वाक्य दो–तीन शब्दों से बने हैं जो स्थितियों का संकेत मात्र करते हैं, शेष पाठक के लिए छोड़ देते हैं। बंगला, उड़िया भाषाओं की कथाशैली के अनुरूप लेखक ने कई–कई अनुच्छेदों तक कोई भी क्रिया पद नहीं रखा है। भाषा और शैली में केशवचन्द्र दाश ने खुलकर नवीन प्रयोग किये हैं।

उपन्यास – केशवचन्द्र दाश के लगभग 15–20 उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इनके नाम – शीलतृष्णा, प्रतिपद्, निकषा, अरूणा, अंजलिः, आवर्तम्, ऋतम्, मधुयानम्, तिलोत्तमा, शिखा, विसर्गः, शशिरेखा, ओंशान्तिः आदि प्रमुख उपन्यास हैं।

कथासंग्रह – निम्नपृथिवी, दिशा विदिशा, ऊर्मिचूडा, पताका, महान्, एकदा आदि लघुकथा संग्रह प्रकाशित हैं।

इन उपन्यासों एवं कहानियों की कथावस्तु आधुनिक समाज के बदलते हुए रंग–ढ़ंग तथा आधुनिक विचारधारा को इंगित करती है। इनके उपन्यास और कहानियाँ सहज–सरल अनलंकृत शैली में लिखे गए हैं।

<u>दिशा–विदिशा</u>

दिशा–विदिशा नामक संकलन में छोटी–छोटी 50 कहानियों का संकलन है। इन कहानियों में नये युग की स्त्रियों की विभिन्न समस्याओं का चित्रण किया गया है। नई–पुरानी पीढ़ियों के विचारों में आए अन्तर, सास–बहू के कलह, पति से दूर रहने वाली और बेटी को अकेले पालने वाली स्त्री की कहानी के माध्यम से लेखक ने कुशलता से मनोवैज्ञानिक विचारों को स्वरूप प्रदान किया है। दिशा–विदिशा नामक कहानी एक ऐसी औरत की है जो अपने दस सदस्यों वाले परिवार का पेट भरने के लिए रोज अपना शरीर बेचती है।

<u>कथानकवल्ली</u>

कथानकवल्ली एक उपन्यास और पांच कहानियों का संकलन है। इस संकलन की कहानी 'दिग्भ्रमः' में आधुनिक परिवेश में एक साथ कालेज में पढ़ने वाले युवक–युवती की कहानी है जो प्रेम करने के बाद भी रूढ़िग्रस्त परिवार के कारण विवाह नहीं कर पाते हैं। बाद में अपने–अपने क्षेत्रों में स्थापित होने तथा विवाहित होने के बाद मिलने पर संतोष व्यक्त करते हैं कि रूढ़ि और मर्यादा के कारण ही सही अपने मार्ग से भटके नहीं।

इसी प्रकार छुआछूत पर आधारित कहानी 'अस्पृश्यताया रहस्यम्' एक ऐसे अस्पृश्य डाक्टर युवक और एक सवर्ण विद्वान की है जो छुआछूत के कारण उस डाक्टर युवक को पढ़ाने से मना चुके होते हैं किन्तु बाद में वही युवक डाक्टर बन कर उनके प्राणों की रक्षा करता है। इसी प्रकार 'दंभज्वरः' की कहानी भी नवीन पाश्चात्य रंग–ढंग में रंगे दो नवयुवकों की है जो एक विद्वान को केवल उनकी वेशभूषा से पुरानपंथी मानकर अंग्रजी में उसकी ही आलोचना करते हैं। बाद में उन्हें ज्ञात होता है कि वो अंग्रेजी के ही विद्वान प्रोफेसर हैं तथा उनके ही बड़े अधिकारी के गुरू भी हैं।

शून्यनाभि – इस कथा संग्रह का आधार दार्शनिक है। इस संग्रह में 7 कथाएँ संकलित हैं जो भिन्न–भिन्न प्रश्नों तथा उपनिषदीय तत्त्वों पर आधारित हैं। अनेक सटीक एवं मनोरंजक उदाहरणों से लेखक ने उपनिषदीय तत्त्वों को उभारा है। इस संकलन में आत्मा, दुःखम्, सुखम्, इन्द्रियम्, ज्ञानम्, प्रमाणम्, शून्यनाभिः कथाएँ संकलित हैं। शून्यनाभिः नामक कथा के अतिरिक्त सभी कथाएँ अत्यन्त संक्षिप्त एवं सांकेतिक स्वरूप में हैं किन्तु किसी न किसी दार्शनिक आधार पर खड़ी हैं। अधिकतर कथाओं का नियोजन लेखक ने संवाद शैली में किया है। लेखक ने गुरू–शिष्य के संवाद द्वारा 'आत्मा' नामक कथा में आत्मा के स्वरूप को बताया है। 'दुःखम्' कथा में लेखक ने माता–पिता को दुःख का मूल कारण समझाया है। वे कहते हैं– 'अधि–व्याधि परतन्त्रता – निःस्वता–मनःपीडा–शारीरिक–पीडादि–प्रतिकूल–प्रभावोत्पादनकारकं दुःखम्।' लेखक ने इन कथाओं के माध्यम से तीनों प्रकार के आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक दुःखों को भी बताया है। 'सुखम्' कथा में वृद्धा और पक्षी के वार्तालाप के माध्यम लेखक ने सुख को परिभाषित किया है – 'अनुकूलानुभवः सुखम्'। लेखक ने भोग और त्याग में संतुलन रखने के साथ–साथ मानसिक संतुलन को भी सुख का कारण बताया है। 'इन्द्रियम्' नामक कथा मे अन्तर्बाह्य इन्द्रियों का तथा 'ज्ञानम्' कथा में कोर्णाक मन्दिर की कथा पर आधारित अनुभवों का वर्णन किया है। 'प्रमाणम्' कथा में सभी प्रमाणों – 'प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द' का तथा अर्थापत्ति, अभाव, सम्भव, ऐतिह्य चेष्टाओं का संक्षिप्त वर्णन किया है। 'शून्यनाभिः' नामक कथा में नायक स्वयं को संसार में कीड़े के समान तुच्छ समझता है किन्तु 'उद्धरेदात्मनात्मानम्' मन्त्र द्वारा उसमें आत्मविश्वास आ जाता है।

निम्नपृथिवी

डॉ0 केशवचन्द्र दाश का 'निम्नपृथिवी' नामक कथासंग्रह एक लघुकथा–संग्रह है। इस कथासंग्रह में दो प्रकार की कथाएं हैं। कुछ कथाएँ सांकेतिक रूप से व्यक्त होने पर भी अपने कथा लक्ष्य को प्राप्त करती हैं और कुछ कथाएँ क्रिया–प्रतिक्रिया स्वरूप हैं। प्रथम प्रकार की कथाएँ वास्तव में मानव–मन की कथाएँ हैं। इनमें काल और परिस्थिति विशेष में मानव मस्तिष्क में उठने वाले मनोभावों का सटीक वर्णन किया गया है। लेखक ने कुशलतापूर्वक

अतीत–वर्तमान–भविष्य तीनों के समन्वित भावों को कथा का रूप प्रदान किया है। इन्हें विचारवान कथाओं की श्रेणी में रखा जा सकता है।

दूसरे प्रकार की कथाओं में समग्र जीवन की कथाएँ वर्णित हैं। मर्मस्पर्शी घटनाओं द्वारा लेखक समाज पर करारा व्यंग्य भी करता है और समस्याओं को भी उभारता है। 'अन्यवर्ग' नामक कथा में ऐसे वर्ग की कहानी में अशिक्षा, शोषण, निर्धनता, विवशता, बाध्यता, दुर्भाग्य आदि का यथार्थ चित्रण लेखक ने किया है। इस संग्रह की पहली कथा– 'युगान्तिका' में रात्रि के मध्य एक नवजात शिशु की राजमार्ग पर गूंजती हुई निर्मम क्रन्दन की ध्वनि के माध्यम से लेखक ने समाज की विद्रूपता, निर्दयता, संस्कारहीनता, अमनुष्यता मानव–मूल्यों पर करारा व्यंग्य किया हैं इस लघुकथा में लेखक ने अत्यन्त कम शब्दों में समाज का यथार्थ चित्रण किया है। 'मुहुर्तस्य आत्मलिपिः', 'मरालः', 'निरुष्मारजनी', 'चरित्रम्' आदि कथाएँ वर्तमान समय की समस्याओं से जूझते हुए मानव–मन की दुविधाओं को, संवेदनाओं को व्यक्त करने में खरी उतरती हैं।

<u>बाल कथासंग्रह</u>

एकदा और महान नामक दो कथा–संग्रह प्रकाशित हैं। 'एकदा' नामक बाल कथा–संग्रह में 10 कथाएँ संग्रहीत हैं जो बालकों के लिए उपयोगी हैं। 'विवादः', 'धनम्', 'सत्यम्', 'अभिमानम्', 'मृदुः', 'अहिंसा', 'तिरस्कारः', 'अभयम्', 'समदर्शी', 'दैनन्दिनी' आदि कथाओं के माध्यम में बालकों में शिक्षा और संस्कार की भावना उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक कथा के अंत में लेखक ने कथा के उद्देश्य या नैतिक शिक्षा को एक श्लोक के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

10.6 पं0 रामकरण शर्माकृत कथाएँ एवं कहानियाँ

पं0 रामकरण शर्मा जी द्वारा लिखे दो उपन्यास– 'सीमा' और 'रयीशः' प्रकाश में आए। रामकरण शर्मा जी की शैली में लम्बे–लम्बे समस्त पदों और वाक्यों का प्रयोग न होकर सरलता–सहजता है। प्रोढ़ता होने के साथ ही उन्होंने उपमा आदि अलंकारों तथा समासों आदि का प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर किया है।

उपन्यास

सीमा – इस उपन्यास में लेखक अपने एक विजातीय मित्र को अपने पिता से सुनी कहानी सुनाता है कि किस प्रकार प्राचीन काल में ऋषि–मुनि अपने 'महासीमासिद्ध' का प्रयोग अपने ज्ञान के बल पर करते थे। सौर विज्ञान के धनी ऐन्द्र देश, कौबेर देश, दुर्ग, वासन आदि देश थे। आक्रमणों आदि को रोकने के लिए परमर्षि सौहार्द और सौमनस्य के ऐसे परमाणु अपने सिद्ध प्रयोग से बिखेरते थे कि सारे देश का हृदय परिवर्तन हो जाता था और सभी आपसी प्रेम और भाईचारे के साथ रहने लगते थे। इस उपन्यास में सात खण्ड हैं।

रयीशः –रयीशः का अर्थ है – रईस। इस उपन्यास में लेखक ने रईस कहकर बड़े–बड़े महानगरों में रहने वाले पूंजीपतियों की तरफ इशारा किया है जो षडयंत्र, आतंकी गतिविधियों, उपद्रवों, अपराधिक गतिविधियों में फंसे रहते हैं। लेखक का मानना है कि ये सभी गतिविधियाँ वर्तमान में इनका पर्याय बन गई हैं किन्तु कभी ऐसी भी परिस्थितियाँ रही होंगी जब ये धनी व्यक्ति अर्थात् रईस व्यक्ति सुसमृद्ध, सुशासनबद्ध, अपराधिक प्रवृत्तियों से दूर सादा–सरल जीवन जीने वाले रहे होंगे। लेखक ने काल्पनिक रूप से पाटलिपुत्र के प्राचीन परिवेश के संदर्भ में ऐसी स्थितियों का चित्रण किया है जिनमें रईस लोग गाँवों और कस्बों में शांतिपूर्ण जीवन जीते थे। भले ही नगरों से उच्च शिक्षा न प्राप्त की हो किन्तु शास्त्र, साहित्य, कला, संगीत में रूचि रखते होंगे तथा विज्ञान उनका अनुचर रहा होगा। अपराधियों को निष्क्रीय बनाने उत्त्म साधन उपलब्ध हों तो ऐसे आदर्श प्रदेश को देखकर सभी अचम्भित रहे होंगे। यह उपन्यास बारह खण्डों में विभक्त है।

10.7 डॉ0 नलिनी शुक्ला कृत् कथाएँ

डॉ0 नलिनी शुक्ला की लघु कथाएँ प्रायः सामाजिक समस्याओं पर ध्यान आकर्षित करती हैं। इनकी कथाएँ आधुनिक समाज में प्रतिदिन की घटनाओं एवं समस्याओं पर आधारित हैं। इन कथाओं में नलिनी शुक्ला जी ने भ्रष्टाचार, कर्त्तव्यहीनता, स्वार्थपरता, अवसरवादिता को बड़े ही सहज–सरल ढ़ंग से कथाओं में पिरोया है। व्यंग्यात्मक शैली में लिखे गए संवाद कथाओं को प्रभावशाली बनाते हैं। नलिनी शुक्ला जी की कथाएँ यद्यपि लघुकथाओं के स्वरूप में हैं तथापि

सम्पूर्ण कथा का मर्म एक ही वाक्य में सम्पूर्ण परिवेश को प्रकाशित करने की क्षमता स्वयं में समेटे हुए है। इनके द्वारा रचित 'कथासप्तकम्' एक लघुकथा संग्रह है।

कथासप्तकम् – 'कथासप्तकम्' नामक लघुकथाओं के संग्रह में नलिनी शुक्ला द्वारा विरचित सात कथाएँ संकलित हैं। इनके नाम – 1. कर्तव्यनिष्ठा, कलरवश्चिन्ता च, 2. अभिवर्धनम्, 3. तन्नूः, 4. प्रत्नवस्त्र पोट्टलिका, 5. मरणासन्नः, शिशुश्च, 6. सुषमायाःपत्रम् तथा 7. अकृतार्थमभिभावकत्वम् हैं। इन सभी कहानियों में पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय संवेदनाओं के साथ–साथ समकालीन समाज की आशाएँ, अभिलाषाएँ और आशंकाएँ भी दिखाई देती हैं।

कर्तव्यनिष्ठा – इस कहानी में लेखिका ने बैंक लूट की घटना का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। धन लिप्सा के कारण मानव मूल्यों निरन्तर हो रहे पतन का भावपूर्ण चित्रण इस कथा में किया गया है। इस कहानी में दो प्रहरियों के चरित्र का वर्णन है तथा दो स्वामिभक्त कुत्तों के बलिदान को भी दिखाया गया है। सुरक्षा अधिकारी के कपटपूर्ण एवं भ्रष्ट मनोदशा का वर्णन है। दोनों सुरक्षा कार्य में लगे प्रहरियों का चित्रांकन अत्यन्त प्रभावशाली एवं सजीव ढंग से किया गया है। उनके चरित्र से पाठकों को कर्तव्यपरायणता की शिक्षा मिलती है।

प्रभावशाली कहानी के संवाद संक्षिप्त होते हुए भी सहज, स्वभाविक अवसरानुकूल प्रभावशाली एवं तीखे हैं। व्यंग्य भी प्रभावशाली है।

कलरवश्चिन्ता – इस कहानी की पृष्ठभूमि पारिवारिक है तथा कथा–वस्तु अत्यंत सशक्त है। इसमें बच्चों की मनोदशा के साथ–साथ मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति है। यह कहानी लगभग प्रत्येक मध्यमवर्गीय परिवार की कहानी सी प्रतीत होती है।

यह कहानी एक ऐसे परिवार की है जहाँ सास के तानों एवं तीखे कटाक्षों से परिवार का बेटा और बहू आत्मोपीड़न से ग्रसित हो जाते हैं और अपने बच्चों का सम्यक लालन–पालन करने से भी डरते हैं। लोक निंदा के भय तथा परिवार को टूटने से बचाने के लिए अपने अरमानों की बलि देने को भी तैयार हो जाते हैं।

कथा की भाषा भावपूर्ण हैं आय!, ओह!, ऊह!, हुम्! आदि शब्दों का प्रयोग लेखिका की शैली की विशेषता को उजागर करता है तथा भाषा को भावानुकूल बनाता है। पात्रों को सजीव चित्रण है।

सुषमायाः पत्रम् – इस कथा में लेखिका ने एक ऐसी नवविवाहिता की मनोदशा का सजीव चित्रण किया है जो अपने मायके के सभी प्रियजनों विशेष तौर पर एक छोटी सी रोती हुई भतीजी को छोड़कर ससुराल आई है। ससुराल आकर वह नवविवाहिता सभी का मुसकुराते हुए अभिवादन करती है किन्तु उसका हृदय अभी भी नन्हीं सी भतीजी के लिए दुखी है। इस कथा में लेखिका ने नारी हृदय का सजीव चित्रण किया है।

नलिनी शुक्ला की प्रभावशाली कहानियाँ देश निर्माण व चरित्र निर्माण का संदेश देती हैं। आधुनिक युग की सामाजिक, पारिवारिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि में रचित ये कथाएँ आज की समस्याओं से जूझते हुए विविध पात्रों की कथाएँ हैं। इनकी भाषा प्रसंगानुकूल, सहजबोधगम्य एवं प्रवाहात्मक है।

10.8 अभ्यास–प्रश्न

1. प्रो0 राजेन्द्र मिश्र की किन्हीं दो कहानियों का सामान्य परिचय दीजिए।
2. पं0 क्षमाराव की कहानियों में मुख्यतया वर्णित सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
3. केशवचन्द्रदाश के किसी एक कथा–संकलन का सामानय परिचय दीजिए।
4. पं0 रामकरण शर्मा के उपन्यासों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

10.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

इकाई–11 मुक्तकाव्य एवं कवि–परिचय

इकाई की रूपरेखा

11.0 प्रस्तावना

11.1 उद्देश्य

11.2 मुक्तक काव्य का स्वरूप

11.3 आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

11.3.1 कवि परिचय

11.3.2 कर्तृत्व

11.4 पं0 बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते

11.4.1 कवि परिचय

11.4.2 कर्तृत्व

11.5 पं0 रतिनाथ झा

11.5.1 कवि परिचय

11.5.2 कर्तृत्व

11.6 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

11.6.1 कवि परिचय

11.6.2 कर्तृत्व

11.7 प्रो0 हर्षदेव माधव

11.7.1 कवि परिचय

11.7.2 कर्तृत्व

11.8 अभ्यास–प्रश्न

11.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

11.0 प्रस्तावना

इस इकाई में मुक्तक काव्य एवं अन्य प्रकार के लघुकाव्यों का वर्णन किया गया है। लघुकाव्य की प्रवृत्ति एवं विधा को उसके विषय के अनुसार बाँटा गया है। इस इकाई में कुछ कवियों के जीवन–परिचय एवं उनके कर्तृत्व का अध्ययन प्रस्तावित है।

11.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद मुक्तक काव्य के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ कवियों के मुक्तक काव्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद नवीन छन्दों – हाइकू, तान्का तथा सीजो के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

11.2 मुक्तक काव्य का स्वरूप

आधुनिक संस्कृत में लघुकाव्य लिखने की परम्परा को मुख्यरूप से उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी की घटनाओं से प्रेरित माना जा सकता है। भारत में नित–प्रतिदिन घटने वाली सामाजिक और राजनैतिक विभिन्न घटनाओं ने संस्कृत में लघुकाव्य की प्रवृत्ति एवं विधा को निर्धारित किया है। भिन्न–भिन्न घटनाओं के कारण लघुकाव्यों के विषय में भी विविधता आई। निरन्तर परिवर्तित हो रहे सामाजिक स्वरूपों एवं मूल्यों ने संस्कृत कवियों को भी लघुकाव्य लिखने को प्रेरित किया। इनमें कुछ प्रबन्धात्मक थे, तो कुछ मुक्तक। छोटी कथाओं या घटनाओं पर आधारित प्रबन्धकाव्य और स्फुट घटनाओं या विषयों को लेकर लिखे जाने वाले मुक्तक काव्य की निरन्तर सर्जना होती रही। विषय–वैविध्य की दृष्टि से इस काल में अनेक प्रकार के लघुकाव्यों जैसे – पुरानकथाश्रित काव्य, स्तुतिपरक काव्य, चरितनायकपरक काव्य, सामाजिक समस्यामूलक काव्य, प्रकृतिवर्णनपरक काव्य, दूतकाव्य, विमानकाव्य, सन्देशकाव्य, शतककाव्य, लहरीकाव्य, मुक्तककाव्य, चम्पूकाव्य आदि की रचना हुई। प्रो0 राजेन्द्र मिश्र

संस्कृत काव्य सर्जना के समृद्धिकाल का प्रमुख वैशिष्ट्य–मुक्त गीतों की सर्जना को मानते हैं। इस काल में स्कन्धहारीय (कहरवा), चैत्रक (चैता), कजरी, नक्तक (नकटा), प्रचार (पचरा), सूतगृहगीत (सोहर), रसिक (रसिया), लांगलिक (लांगुरिया), फाल्गुनिक (फाग) एवं गलज्जलिका (गजल), लोकगीतों आदि की बड़ी मात्रा में सर्जना संस्कृत कवियों ने की।

'मुक्तक' का अर्थ होता है, दूसरे पद्य से जुड़ा न होना। मुक्त पद में 'कन्' प्रत्यय लगने से 'मुक्तक' बनता है। जब कोई पद्य अपने अगले या पिछले पद्य से सम्बन्ध न रखता हो अर्थात् स्वतंत्र हो, उसे मुक्त कहते हैं।

आचार्य अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक की लोचनटीका में मुक्तक काव्य को स्पष्ट किया है। उन्होंने लोचन टीक में मुक्तक को प्रबन्धकाव्य के मध्य भी स्वीकार किया है। जिसकी रसचर्वणा पहले और बाद पद्य से निरपेक्ष रहकर भी की जा सकती है। कवि मुक्तक के प्रति भी उसी प्रकार प्रयत्नशील रहते हैं जिस प्रकार प्रबन्धकाव्य के प्रति रहते हैं।

साहित्यदर्पणकार के अनुसार 'छन्दोबद्ध पदों वाला बन्ध पद्य कहा जाता है। यदि वह पूर्वा पर सन्दर्भों से मुक्त है तो मुक्तक कहा जाता है' – छन्दोबद्धपरं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम्।

11.3 आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

11.3.1 कविपरिचय

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री का जन्म बिहार राज्य के गया जिले में मैगरा नामक गाँव में 1915 ई0 में हुआ। इनके पिता पं0 रामानुग्रह शर्मा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। जानकीवल्लभ शास्त्री जी ने अपने पिता के मार्गदर्शन में पारंपरिक ढंग से संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की तथा मात्र 18 वर्ष की आयु में ही साहित्य से आचार्य की उपाधि प्राप्त कर ली। उच्च शिक्षा के लिए आप काशी हिन्दु विश्वविद्यालय गए।

जानकीवल्लभ शास्त्री का हृदय न केवल मनुष्य के प्रति संवेदनशील था अपितु पशुओं के प्रति भी शास्त्री जी अत्यन्त अनुराग रखते थे। मुजफ्फरपुर में स्थित निराला–निकेतन में आज भी

उनकी गौओं, कुत्ते, बिल्लियों की समाधियाँ स्थापित हैं। शास्त्री जी रायगढ़ के राजदरबार में राजकवि थे परन्तु वहाँ की नौकरी छोड़कर उन्होंने मुजफ्फरपुर में संस्कृत महाविद्यालय में अध्यापन किया, अनन्तर रामदयालु सिंह महाविद्यालय में संस्कृत–हिन्दी के अध्यापन के लिए उनकी नियुक्ति हुई। वे छायावादोत्तर काल के सुविख्यात हिन्दी कवि थे। महाकवि निराला की प्रेरणा से उन्होंने हिन्दी में लिखना प्रारंभ किया था। उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें 'भारत भारती पुरस्कार' से सम्मानित किया था। जानकीवल्लभ शास्त्री सदा से एक प्रतिभावान छात्र रहे। इन्हें रजत–स्वर्ण पदक प्राप्त हुए। छात्र रहते हुए ही आपने संस्कृत में काव्यरचना करना प्रारंभ कर दिया। आपकी काव्यक्षमता को काशी के पंडित समाज ने भी स्वीकारा तथा प्रशंसा की।

11.3.2 कर्तृत्व

सन् 1935 ई0 में मात्र उन्नीस वर्ष की अल्पायु में आपकी संस्कृत मुक्तक काव्यों का संकलन 'काकली' मैगरा से प्रकाशित हुई। इन्होंने विभिन्न विधाओं में रचनाएँ कीं। इनकी प्रतिभा काकली के बाद से सुविख्यात हुई। सरस्वती जी की कृपा सदैव इनके ऊपर रही। 'काकली' के अतिरिक्त 'बन्दीजीवनम्' इनका स्वतंत्रतासंग्राम की पृष्ठभूमि पर आधारित खण्डकाव्य है, परन्तु यह एक अप्रकाशित रचना है। इनकी अनेक संस्कृत रचनाएँ अप्रकाशित रह गई या लुप्त हो गईं। 'भारतीवसन्तगीतिः' (गीतिकाव्य) तथा भ्रमरगान (मुक्तककाव्य) आपकी संस्कृत में प्रमुख रचनाएँ हैं।

संस्कृत काव्य के नये युग का आपने सूत्रपात किया। शास्त्री जी संस्कृत कविता में रोमांटिक प्रवृत्ति के पुरोधा कवि माने गए हैं। इन्होंने अपनी प्रयोगशीलता के द्वारा संस्कृत काव्य को नया स्वरूप दिया। आपने गजल जैसी नवीन विधा में भी रचना की है। शास्त्री जी ने हिन्दी में अनेक विधाओं में रचनाएँ कीं।

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री जी हिन्दी व संस्कृत के कवि, लेखक एवं आलोचक थे। उन्होंने 1994 तथा 2010 में दो बार 'पद्मश्री' सम्मान लेने से मना कर दिया था। 2011 में मुजफ्फरपुर में अपने निवास स्थान निराला–निकेतन में 98 वर्ष की आयु में अंतिम सांस ली।

11.4 पं0 बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते

11.4.1 कवि परिचय

पं0 बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते का जन्म 30 नवम्बर, 1918 को हुआ था। आपके पिता प्रकाण्ड विद्वान, कविकुलगुरू महामहोपाध्याय पंडित श्रीनारायण शास्त्री खिस्ते थे। बटुकनाथ शास्त्री जी ने अपने समय के श्रेष्ठ विद्वानों श्री पं0 लक्ष्मणशास्त्री जी तैलंग, महामहोपाध्याय श्री दामोदर लाल जी गोस्वामी, श्री पंडित भालचन्द्र शास्त्री जी तथा अपने पिता श्री नारायणशास्त्री जी खिस्ते से विविध शास्त्रों का गहन अध्ययन किया। संस्कृत शिक्षा ग्रहण करते हुए आपने 1941 तक अपना अध्ययन पूर्ण कर लिया किन्तु अंग्रेजी के प्रभाव को देखते हुए 1954 में आपने एम. ए. की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। छात्र जीवन में आपको अनेक पुरस्कार तथा परीक्षा में विशेष योग्यता प्राप्त हुए। 1944 ई0 से 1947 तक काशी के मारवाड़ी संस्कृत कालेज में तथा 1947 से 1971 तक गवर्नमेंट संस्कृत कॉलेज में अध्यापन किया। 1971 से उसी संस्था के परिवर्तित रूप सम्पूर्णानन्द संस्कृत कॉलेज में अध्यापन किया।

11.4.2 कर्तृत्व

अध्यापन के साथ ही आपने कई ग्रंथों का संपादन–कार्य भी किया। शोध–कार्य में निरत रहते हुए, आपने अनेक छात्रों को शोध–कार्य के लिए निर्देशित किया। आपके लेख तथा संस्कृत–हिन्दी की पद्य रचनाएँ अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। पत्रिकाओं में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण व प्रशंसित लेखों का संकलन 'साहित्यमंजरी' नामक पुस्तक में किया गया है। इसमें 9 लेख महाकवि कालिदास से सम्बद्ध हैं। कालिदास के काव्य–ग्रंथों के अतिरिक्त एक अन्य ग्रन्थ 'चिद्गगनचन्द्रिका' से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण सामग्री बटुकनाथशास्त्री जी की पुस्तक 'साहित्यमंजरी' में है। संस्कृत में निर्मित होने पर भी इन निबन्धों की भाषा क्लिष्टता रहित और सरल है।

पं0 बटुकनाथशास्त्री जी रचनाएँ गुण, अलंकार तथा रीति से युक्त हैं। इनकी पद्य रचना में अनुप्रास का चमत्कार अत्यंत आकर्षक होता है। इन्होंने अनेक विषयों पर स्फुटकाव्यों की

रचना की हैं इनके काव्य विषयों में राष्ट्रीय भावना, राष्ट्र नेताओं के प्रति श्रद्धा, प्रकृति चित्रण, ऋतुवर्णन, समसामयिक स्थितियों आदि हैं। 'कल्लोलिनी' इनका प्रसिद्ध काव्यसंग्रह है। 'जयत्यसौ वसुन्धरा' नामक कविता में इन्होंने धरती की वन्दना की है तथा 'कृष्णमेघः' में मेघ की छटा का वर्णन किया है।

11.5 पं0 रतिनाथ झा

11.5.1 कवि परिचय

पं0 रतिनाथ झा का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जिला, वर्तमान में सिद्धार्थनगर के तलपुरवा नामक गाँव में 15 जुलाई, 1922 को एक सम्भ्रान्त मैथिल ब्राह्मण परिवार में हुआ था। पारिवारिक परम्परा के अनुसार मकरसंक्रान्ति को इनका जन्मदिन माना जाता है। जन्म के दो–चार दिन बाद ही इनकी माता का निधन हो जाने के कारण इनकी चाची ने इनका लालन–पालन पुत्रवत् किया। बचपन में शिक्षा के प्रति इनकी अधिक रुचि नहीं थी किन्तु बाद में बिहार के बेतिया में ननिहाल जाकर कड़े अनुशासन में रहकर इनकी अध्ययन के प्रति अरुचि दूर हो गई तथा इनकी विलक्षण मेधा सही मार्गदर्शन मिलने पर प्रगट हुई। मध्यमा की परीक्षा में आपने प्रथम श्रेणी में सर्वाधिक अंक प्राप्त किया। तदनन्तर शास्त्री, साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य, एम.ए. आदि की परीक्षाओं में गोल्ड मेडल प्राप्त किया। एम.ए. करते हुए संस्कृत भाषा पर उनकी अद्वितीय पकड़ बन गई थी। अंग्रेजी में दिये जाने वाले व्याख्यान को आप उसी क्षण धाराप्रवाहरूपेण संस्कृत में लिख लेते थे।

विलक्षण और अप्रतिम प्रतिभा के धनी पं0 रतिनाथ झा ने रिसर्च असिस्टेंट के पद से अपनी सेवा का प्रारंभ किया तथा बाद में वे काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में व्याख्याता के पद पर नियुक्त हुए। काशीपंडित परिषद् द्वारा 1974 में इन्हें 'पण्डितराज' की उपाधि से सम्मानित किया गया। इन्हें उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय आदि के द्वारा अनेकों बार सम्मानित किया गया है।

11.5.2 कर्तृत्व

इन्होंने 'श्री मन्महादेवशास्त्रिणामभिनन्दनग्रन्थ', 'भारती–स्तोत्रकण्ठहारः', 'कविभारती–कुसुमाञ्जलिः' आदि ग्रन्थों का सम्पादन तथा 'कादम्बरी–कथामुखम्' और 'हर्षचरितम् प्रथमोच्छवासः' का अनुवाद किया है। आपकी 2000 से अधिक प्रकीर्ण रचनाएँ एवं अभिनन्दनपत्र प्रकाशित हैं। आपकी स्वतंत्र मौलिक रचनाएँ – 'श्रीमदनमोहनमालवीयशतकम्', 'श्रीमहात्मागान्धीशतकम्', 'श्रीअरविन्दशतकम्', 'महावीराभ्युदयमहाकाव्यम्' तथा 'प्रेमलताजीवितम्' हैं। 'महावीराभ्युदयमहाकाव्यम्' वर्तमान में विलुप्त हो गया है। इन सभी रचनाओं तथा असंख्य स्फुट रचनाओं तथा समस्यापूर्तियों के द्वारा काशी के कविसमाज के साथ–साथ संस्कृत जगत् में भी आपकी बहुत ख्याति रही है।

11.6 आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी

11.6.1 कवि परिचय

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के जीवन का विस्तृत परिचय हम इकाई–1 'महाकाव्य' की इकाई में पढ़ चुके हैं। रेवाप्रसाद द्विवेदी जी ने सीताचरितम् (उत्तरसीताचरितम्) तथा स्वातन्त्र्यसम्भवम् के साथ कई मुक्तक काव्य भी लिखे हैं।

11.6.2 कर्तृत्व

आचार्य द्विवेदी के काव्यसंग्रह या मुक्तक काव्यों में 'शतपत्रम्', 'प्रमथः' तथा 'रेवाभद्रपीठम्' प्रमुख है। 'शतपत्रम्' का प्रकाशन 1987 में, प्रमथः का 1988 में तथा रेवाभद्रपीठम् का प्रकाशन 1990 में हुआ।

आचार्य द्विवेदी काव्य रचना के क्षेत्र में अद्वितीय हैं। 'शतपत्रम्' नामक मुक्तक में उन्होंने नवीन उपमानों का खुलकर प्रयोग किया हैं। प्रमथः में नौ कविताएँ संकलित हैं। प्रमथ में शिवगण को परमाणु का प्रतीक माना है। 'प्रलापाः' शीर्षक में लक्ष्मी को चुनौती भरे शब्दों में सम्बोधित करना कवि को विनोदप्रवृत्ति को प्रकट करता है। इसी प्रकार 'निसर्गः' कविता में कवि की व्यंग्यात्मक शैली प्रगट हुई है। 'रेवाभद्रपीठम्' काव्य आचार्य द्विवेदी का गीतिकाव्य हैं इस काव्य में कवि ने नर्मदा की स्तुति की है। इस काव्य में कवि ने नर्मदा के तट पर बसे गाँवों, वहाँ के

जन–जीवन, रहन–सहन, रीति–रिवाजों का यथार्थ चित्रण किया है। यह आंचलिक संस्कृति को प्रस्तुत करने वाला अनूठा काव्य है। आंचलिकता तथा यथार्थ को अनुभूत कराने के उद्देश्य से कवि ने ग्रामजीवन में प्रचलित शब्दों या लोकभाषा की पदावली का प्रयोग भी अपने कुछ पद्यों में किया है। कवि की रचना में जनजातीयों के जीवन के चित्र शायद पहली बार समकालिक संस्कृत साहित्य में दिखाई दिया है। भक्ति भावना, सरसता, लोकजीवन का सूक्ष्म अंकन तथा भाषा शैली के परिष्कार के कारण यह काव्य अत्यन्त उत्कृष्ट है।

11.7 प्रो0 हर्षदेव माधव

11.7.1 कवि परिचय

प्रो0 हर्षदेव माधव आधुनिक संस्कृत साहित्य के काव्यजगत में अपने शैली–प्रवर्तन के द्वारा क्रान्ति लाने वाले तथा संस्कृत कविता को विश्व कविता के समानान्तर लाने वाले एक सशक्त कवि हैं। आपने गुजरात के अहमदाबाद नगर में ही अपना जीवन कविता को समर्पित किया है। बाल्यकाल से ही हर्षदेव माधव की कविताएँ प्रकाशित होने लगीं थी। 1975 से ही आपकी रचनाएँ अनेक प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही हैं। आपने एच0के0 आर्ट्स कालेज, अहमदाबाद के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद पर रहते हुए निरन्तर संस्कृत की साधना की है। उत्कृष्ट रचनाधर्मिता के लिए आपको मध्य प्रदेश सरकार द्वारा दो बार 'अखिल भारतीय कालिदास सम्मान' तथा संस्कृत अकादमी, नई दिल्ली द्वारा 2006 में सम्मान प्राप्त हुआ। साहित्य अकादमी, गुजरात द्वारा आप पाँच बार पुरस्कृत किये गये। 2013 में उ0 प्र0 संस्कृत संस्थान द्वारा 'विशिष्ट सम्मान' तथा 'कल्पवल्लीसम्मान', भारतीय भाषा परिषद्, कोलकाता द्वारा प्राप्त हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आप कनाडा के 'रामकृष्ण संस्कृत अवार्ड' से सम्मानित हुए तथा अन्य विविध पुरस्कारों के अतिरिक्त आप गुजरात सरकार के सर्वोच्च सम्मान 'गुजरात राज्य गौरव' सम्मान से 2010 में सम्मानित हुए हैं।

11.7.2 कर्तृत्व

हर्षदेव माधव जी ने मुक्तक को एक नितान्त नवीन एवं पुरानी परम्परा से भिन्न स्वरूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने संस्कृत कविता में कल्पनावाद (इमेजिनेशन), प्रतीकवाद (सिम्बोलिज्म), अतिवास्तववाद (सर्‌रिअलाइजेशन) एवं घनवाद (क्यूबिज्म) इत्यादि वादों का प्रयोग कर नई कविता की शुरूआत की है। आपकी भाषा एवं भाव दोनों में विलक्षणता है। हर्षदेव माधव ने 'मिश्रदेशे' 'जापानदेशे' की जैसी कविताएँ भी लिखी हैं। आपके काव्यों में कुछ गजल और गीतियाँ भी हैं पर उनके गीतों में एक विशिष्टता दिखाई देती है। कवि हर्षदेव माधव की कविताओं में प्रतीक द्वारा अभिव्यक्ति, गणित की संज्ञाओं या गणितीय प्रयोगों द्वारा कविता, प्रतिच्छाया (Shadow) काव्य या पिरामिड (Pyramid) काव्य आदि के द्वारा अभिव्यक्ति नितान्त आधुनिक चित्रकाव्य के नवीनतम रूप हैं। हर्षदेव माधव का प्रथम काव्य 'रथ्यासु जम्बूवर्णाणां शिराणाम्' है जो 1985 में तथा द्वितीय काव्य 'अलकनन्दा' 1990 में प्रकाशित हुआ है। हर्षदेव माधव जी की कविताओं में गुजराती का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। अपनी कविता 'दिशा' में उन्होंने 'छिन्नालः' शब्द का प्रयोग किया है। गुजराती में उसका अभिप्राय नाक कटने से है। इसी प्रकार 'बंगुरी' के स्थान पर 'बंगुरिका' पर भी आंचलिक प्रभाव है और 'नेत्रयोःसिमसिमायते तीव्रतपे' में धूप में आँखों का खुलना बन्द होना सिमसिमायते शब्द द्वारा व्यक्त किया गया है जिस पर स्पष्ट रूप से गुजराती का प्रभाव दिखाई देता है। 'ऋषेः क्षुब्धे' नामक कविता में कवि माधव ने गाणतिक संज्ञाओं को कविता के रूप में प्रस्तुत किया है –

ऑफिस – चिन्ता

× गृहिणी + उपनेत्रं ÷ क्षय

= जीवितम्

हर्षदेव माधव वर्तमान युग के सर्वाधिक प्रयोगधर्मी कवि के रूप में आधुनिक संस्कृत जगत में चर्चित हैं। कवि माधव की काव्य चेतना मुक्त छन्द के क्षेत्र में क्रांतिकारी चेतना कही जा सकती है। नवीन बिम्ब के लिए कवि ने 'हाइकू' छन्द का प्रयोग किया है। मुक्तक में 'हाइकू' एक छन्द नहीं है, बल्कि एक विधा है। इसमें अभिव्यक्ति में नवीनता है। यह अपनी सूक्ष्मता के कारण प्रतीत आदि के द्वारा व्यक्त होता है।

ऋषेः क्षुब्धे चेतसि नामक कविता में हाइकू का प्रयोग –

अभिसारिका

हस्ते दीपः

नेत्रयोराग्नेय कीटः।

इस हाइकू में अभिसारिका के हाथों का दीपक प्रियतम से मिलने की उत्कृट अभिलाषा का द्योतक (प्रतीक) है और आँखों में जुगनू का होना प्रेम की तरलता, उत्साह, चंचलता और मिलन के विश्वास को दिखाता है।

हर्षदेव माधव की इसी कविता 'ऋषेः क्षुब्धे चेतसि' में प्रवाह और गति छन्दोबद्ध कविता से भी अधिक देखने को मिलती है। उपमान और उपमेय की विलक्षणता भी अद्भुत है –

कॉलेजकन्या ग्रन्थालयेः / दुग्धोत्सुकाः सुश्री मार्जायः।

इस हाइकू में कालेजकन्या के लिए प्रयुक्त सुश्री शब्द ही हाइकू की गुरुता एवं वैशिष्ट्य बता रहा है।

हर्षदेव माधव ने 'हाइकू' के साथ–साथ 'तान्का' और 'सीजो' में भी कविताएँ लिखी हैं। तान्का काव्य में लाघवता के साथ–साथ सशक्त अभिव्यक्तियाँ दिखाई देती हैं। उन्होंने ध्वनि और व्यंजना के साथ–साथ पारदर्शी बिम्बों की रचना की है। हर्षदेव माधव के सीजो काव्य में 15+15+15 अक्षरों की तीन पंक्तियाँ मिलती हैं। इन्होंने गीत, गजल और अछान्दस तीनों ही काव्य स्वरूपों में इस छन्द से जोड़ दिया है।

डॉ0 हर्षदेव माधव ने आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र पर आधारित 'आधुनिकं वागीश्वरीकण्ठसूत्रम्' नामक एक अलंकारशास्त्र की रचना की है जिसमें उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों काव्यशास्त्र के समन्वय का प्रयत्न किया है।

11.8 अभ्यास–प्रश्न

1. 'मुक्तक' की व्युत्पत्ति बताते हुए उसकी विशिष्टता बताएँ।

2. कवि हर्षदेव माधव की काव्यशैली पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

3. 'हाइकू' क्या है ?

4. आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री के जीवन पर प्रकाश डालिए।

11.9 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. आधुनिक संस्कृत काव्य की परिक्रमा, लेखक – मंजुलता शर्मा, प्रकाशन– राष्ट्रियसंस्कृत संस्थान, नई देहली

2. संस्कृत–वाङ्मय का बृहद् इतिहास, सप्तम खण्ड, सम्पादक – डॉ0 जगन्नाथ पाठक, प्रकाशन– उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ

इकाई–12 दूतकाव्य, शतककाव्य, चम्पूकाव्य एवं अन्य विधाएँ

इकाई की रूपरेखा

12.0 प्रस्तावना

12.1 उद्देश्य

12.2 दूतकाव्य का आधुनिक लक्षण

12.2.1 मृगाङ्कदूतम्

12.3 विमानकाव्य का आधुनिक लक्षण

12.4 लहरीकाव्य का आधुनिक लक्षण

12.5 स्तोत्रकाव्य/शतककाव्य

12.6 चित्रकाव्य

12.7 चम्पूकाव्य

12.7.1 चम्पूकाव्य के भेद

12.8 अन्य विधाएँ

12.8.1 कजरी

12.8.2 चैत्रक (चैता)

12.8.3 सूतगृहगीतम् (सोहर)

12.8.4 बटुकगीत (बरुआ)

12.8.5 प्रचरण (पचरा)

12.8.6 नक्तक (नकटा)

12.8.7 उत्थापन (उठान)

12.8.8 लांगलिक (लांगुरिया)

12.8.9 स्कन्घहारीय (कँहरवा)

12.8.10 औष्ट्रहारिक (ऊँटहारागीत)

12.9 अभ्यास–प्रश्न

12.10 सन्दर्भ–ग्रन्थ

12.0 प्रस्तावना

खण्डकाव्य ही अपने इतिवृत्त के आधार पर अलग–अलग नामों से ही जाना जाता है। दूत के कार्यों (दौत्यकर्म) का वर्णन होने के कारण दूतकाव्य, सन्देश प्रेषण का वर्णन होने से सन्देशकाव्य कहा जाता है। इसी प्रकार गीततत्त्व की प्रधानता होने पर गीतिकाव्य, स्तुतिपरक काव्य होने पर स्तोत्रकाव्य कहा जाता है। इसी प्रकार किसी एक ही विषय पर सौ या उससे अधिक पद्यों की संख्या होने पर उसे खण्डकाव्य को शतक काव्य कहा जाता है। नीति का वर्णन होने पर नीतिकाव्य, पहेलियों का वर्णन होने पर प्रहेलिकाकाव्य कहा जाता है। वर्तमान में कवियों में यात्रावर्णन के अनुभव को काव्य रूप में प्रस्तुत करने का तथा विमानयात्रा का वर्णन काव्य रूप में करने की विशेष अभिरुचि दिखाई देती है, इसे ही विमानकाव्य कहा जाता है।

चम्पूकाव्य में गद्य एवं पद्य दोनों का मिश्रण होता है, इसलिए इसे मिश्रकाव्य भी कहा जाता है। साहित्यदर्पणकार के अनुसार – 'गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते' चम्पू गद्य–पद्य मिश्रित होता है। विरुद एवं करम्भक को भी चम्पूकोटि की ही रचना माना जाता है।

12.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी खण्डकाव्य की अन्य संज्ञाओं को जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद शतककाव्य का लक्षण जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी चम्पूकाव्य का लक्षण जान सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी, 'विरुद' एवं 'करम्भक' को जान सकेंगे।

12.2 दूतकाव्य का आधुनिक लक्षण

'दूतकाव्यमिदं प्रोक्तं दौत्यकर्मप्रसङ्गतः।

सनदेशप्रेषणव्याजैरस्य सन्देशकाव्यता।।'

खण्डकाव्य अपनी इतिवृत्त के आधार पर यात्राकाव्य, नर्मकाव्य तथा रागकाव्य, लहरीकाव्य आदि कहा जाता है। दूत के कार्य अर्थात् दौत्यकर्म होने पर दूतकाव्य कहा जाता है। कालिदास के 'मेघदूतम्' में मेघ को कवि ने दूत के रूप में प्रस्तुत किया जिसके माध्यम से कवि अपनी प्रिया को संदेश भिजवाता है इसलिए इस काव्य का नाम ही 'मेघदूत' रखा है। इसीप्रकार हंस को दूत के रूप में प्रस्तुत किये जाने वाले काव्य का नाम ही 'हंससन्देश' रखा गया है। आधुनिक दूतकाव्य के रूप में प्रो0 राजेन्द्रमिश्र की रचना 'मृगाङ्कदूतम्' है। अन्य आधुनिक दूतकाव्य 'कामदूतम्', 'तरङ्गदूतम्', 'हनुमद्दूतम्', 'मयूरदूतम्', 'मित्रदूतम्', 'भृङ्गदूतम्' आदि हैं। 'इन्दुसन्देश', 'चातकसन्देश', 'सुन्दरीमेघसन्देशः', 'विप्रसनदेशः' आदि आधुनिक सन्देशकाव्य है।

12.2.1 मृगाङ्कदूतम्

मृगाङ्कदूतम् नामक इस दूतकाव्य में कवि राजेन्द्र मिश्र ने चन्द्रमा को दूत बनाया है तथा उसके माध्यम से उन्होंने अपने मित्रों की कुशलता पूछी हैं यह काव्य कवि ने अपने बालीद्वीप की तीन वर्षीय प्रवास अवधि में लिखा था। इस रचना का कवि ने हिन्दी में अनुवाद भी किया है। एक प्रकार से यह दूतकाव्य भौगोलिक दृष्टि से भारत को जावा एवं बालीद्वीप से जोड़ता है। कवि ने चन्द्रमा को दूत बनाकर भारत में निवास कर रहीं अपनी माँ एवं अन्य स्थानों पर रह रहे मित्रों को सन्देश भेजा है। यह काव्य मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखा गया है।

12.3 विमानकाव्य का आधुनिक लक्षण

विमानयात्रानुभवैः समृद्धमधुनातनम्।
विमानकाव्यमित्याख्यं साम्प्रतं हि महीयते।।
यात्राकाव्यं नर्मकाव्यं रागकाव्यं तथैव च।

विमानयात्रा के अनुभवों, विमान से पृथ्वी का अवलोकन आदि घटनाओं पर आधारित रचनाओं का प्रणयन आधुनिक काव्य की एक नवीन विधा बन गई है, इसे ही विमानकाव्य कहा जाता है। इसके अन्तर्गत प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी जी की 'धरित्रीलहरी' तथा प्रो0 मिश्र प्रणीत 'विमानयात्राशतकम्' काव्य हैं। यात्राकाव्य में विभिन्न स्थानों की यात्राओं का वर्णन प्रस्तुत करने

वाले काव्य को यात्राकाव्य कहा गया है जैसे– प्रो0 राजेन्द्रमिश्र ने अपने यात्रा–वृत्तान्तों का वैशालीशतकम्, गुर्जरशतकम्, उज्जयिनीशतकम्, यवद्वीपसाहित्यशतकम् में काव्यात्मक रूप से प्रस्तुत किया है।

12.4 लहरीकाव्य का आधुनिक लक्षण

लहरीकाव्यमप्येतत् खण्डकाव्यं समुच्यते।
प्रतिपाद्यं यदा काव्ये लहरीसन्निभं भवेत्।।

जिस काव्य का प्रतिपाद्य लहरी के समान होता है तो लहरीकाव्य कहते हैं। सागर की तरंगे जैसे एक–दूसरे से जुड़ी रहती हैं और अनेक लहरों की उत्पन्न करते हुए भी परस्पर अभिन्न लगती हैं। उसी प्रकार काव्य में भी जब भक्ति एवं शृंगार के सन्दर्भ अथवा अनेक प्रवृत्तियाँ आपस में भिन्न होते हुए भी मूलभाव को पुष्ट करती हैं और लहरी के समान भाषा–सौन्दर्य में वृद्धि करती हैं तो उस काव्य को विद्वान लहरीकाव्य की संज्ञा देते हैं – यह विचार प्रो0 मिश्र ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रंथ में प्रस्तुत किये हैं। प्रो0 मिश्र की कृति विस्मयलहरी, प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी की कृति लहरीदशकम्, रामभद्राचार्यकृत सरयूलहरी, शतावधान, पण्डिता क्षमारावकृत 'मीरालहरी', श्रीधरभास्करवर्णेकरकृत मातृभूलहरी आदि आधुनिक लहरीकाव्य है।

12.5 स्तोत्रकाव्य/शतककाव्य

खण्डकाव्य जब देवताओं की स्तुतिपरक होता है, तो स्तोत्रकाव्य कहा जाता है। इसी प्रकार खण्डकाव्य में एक ही विषय से सम्बन्धित सौ पद्य होते हैं तो उसे शतककाव्य कहते हैं। प्रो0 राजेन्द्र मिश्र की रचना 'पराम्बाशतकम्', 'नवाष्टकमालिका' तथा 'शनिशतकम्' स्तोत्रकाव्य हैं। शतककाव्यों के संबंध में हम पूर्व की इकाईयों में अध्ययन कर चुके हैं। 'अभिराजसप्तशती' नामक कोश ग्रन्थ में प्रो0 मिश्र प्रणीत सात शतक काव्य समाहित हैं। जिनके नाम – 1. नव्यभारतशतकम् 2. मातृशतकम् 3. प्रभातमङ्गलशतकम्, 4. सुभाषितोद्धारशतकम् 5. चतुर्थीशकम् 6. भारतदण्डकम् 7. सम्बोधनशतकम् हैं। 'पञ्चकुल्या' नामक कृति में पांच शतक काव्य समाहित हैं। जिनके नाम – 1. विमानयात्राशतकम् 2. बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम् 3.

यवसाहित्यशतकम् 4. सुरभारतीदण्डकम् 5. देववाणीहुङ्कारशतकम् हैं। शीर्षक से ही इन काव्य का प्रतिपाद्य पता चलता है। आधुनिक संस्कृत में शतककाव्य प्रचुर मात्रा में लिखे गए हैं।

इस प्रकार शतककाव्य लघुकाव्य का ही एक रूप हैं। प्राचीन संस्कृत–साहित्य की ही भांति आधुनिक संस्कृत–साहित्य में भी सौ श्लोकों वाले शतककाव्य तथा सात सौ श्लोकों के सप्तशती–काव्य अधिक मात्रा में लिखे गए। किसी एक ही विषय पर सौ श्लोक लिख देना लघुकाव्य का एक उत्कृष्ट रूप है। विषय के अनुसार शतककाव्य देवस्तुतिपरक, लोकनीतिपरक तथा राष्ट्रीय भक्ति से संबंधित होते हैं। देवस्तुतिपरक काव्य स्तोत्रशतकम् तथा लोकनीतिपरक नीतिशतकम् कहे जाते हैं। कुछ शतककाव्य हास्य–व्यङ्ग्य तथा यात्राओं पर भी आधारित होते हैं।

12.6 चित्रकाव्य

संस्कृत में चित्रकाव्य की प्राचीन परम्परा का निर्वाह आधुनिक संस्कृत कवियों ने भी किया है। काव्य प्रधानरूप से शब्दगत चमत्कार पर आधारित होते हैं जिनका मुख्य उद्‌देश्य मनोरंजन एवं बौद्धिक व्यायाम दोनों होता है। संस्कृत काव्य की रचना में होने वाले विविध प्रयोग जैसे – प्रहेलिका, प्रश्नोत्तर, चित्र–रचना, समस्यापूर्ति आदि इस चित्रकाव्य के अन्तर्गत ही आते हैं। अर्वाचीन कवियों ने भी शब्दों के माध्यम से विविध प्रकार के आकार चित्र बनाने की परम्परा को अक्षुण्ण रखा। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने अपने 'साहित्यवैभव' एवं 'जयपुरवैभव' नामक एक पृथक् सर्ग भी लिखा है। इनके अतिरिक्त इस विधा पर अनेक लघुकाव्यों का प्रणयन कवियों ने किया है। जैसे – कविचक्रवर्ती देवी प्रसादकृत 'चित्रोपहार–काव्य', दामोदर मिश्रकृत 'चित्रबन्ध–काव्य', रामरूपपाठककृत 'चित्रकाव्यकौतुक', रामावतारशर्माकृत 'चित्रबन्धावतारिका', वी–रामचन्द्रकृत 'रामचरित–चित्रकाव्य', रूद्रदेव त्रिपाठीकृत 'चित्रालङ्कार–चन्द्रिका', श्रीजीवन्यायतीर्थ कृत 'सारस्वतशतकम्', नित्यानंदकृत 'हनुमद्‌दूतम्', मधुसूदन तर्कवाचस्पतिकृत 'हनुमत्सन्देशम्', पं0 मूलचन्दशास्त्रीकृत 'वचनदूतम्' आदि चित्रकाव्य लिखे गए।

समस्यापूर्ति को आधार बनाकर आयोजित किये गए कवि–सम्मेलन के आधार पर अनेक कवियों की समस्यापूर्ति विषयक पद्यों को 'कविभारतीकुसुमाञ्जलि' और 'वाणीविलसितम्' प्रकाशित किया गया है।

12.7 चम्पूकाव्य

गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते – अर्थात् गद्य–पद्य से मिश्रित काव्य को चम्पू कहते हैं। इस विधा में कवि को पद्य एवं गद्य दोनों विधाओं में लिखने का अवसर मिलता है। कथा या आख्यायिका में भी कहीं–कहीं गद्य के साथ पद्य का भी प्रयोग किया जाता है, परन्तु इनकी संख्या नगण्य है। चम्पूविधा में लेखन के प्रति रुचि भारत के दक्षिण–प्रान्तों के कवियों में अधिक दिखाई पड़ती है।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र जी ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'अभिराजयशोभूषणम्' में चम्पू की विधा को विस्तृत रूप से वर्णित किया है। उनका मानना है कि प्राचीन आचार्यों द्वारा गद्य तथा पद्य शैलियों के विशिष्टकोटिक मिश्रण के कारण जिसे मिश्रकाव्य कहा गया है उसी काव्य–भेद को कुछेक आचार्य चम्पूकाव्य कहते हैं। उनका मानना है कि कथा और नाटक में भी गद्य और पद्य का मिश्रण होता है, तो फिर चम्पूकाव्य कथा और नाटक से अलग कैसे है ? उनका कहना है कि कथा और नाटक की प्रवृत्ति गद्यात्मक ही होती है, गद्य के साथ पद्य का मेल कहीं भी स्वभाविक नहीं होता। ऐसा केवल कवि के द्वारा पूर्वाग्रह के कारण ही किया जाता है।

कथा जिसकी प्रवृत्ति मूलतः गद्यात्मक होती है, वहाँ किसी आदर्श अथवा चिरन्तन सत्य को प्रतिष्ठित करने के लिए प्रसंग के अनुकूल पद्य की रचना होती है। संवादात्मक नाटक में ऋतु वर्णन, नायिका के रूप–सौन्दर्य के वर्णन या व्यवहारादि का वर्णन होने पर साहित्यिक सौन्दर्य या आकर्षण उत्पन्न करने के उद्देश्य से गद्यात्मक संवादों से उत्पन्न चित्तोद्वेग को दूर करने के लिए कवि रससमन्वित पद्यों की रचना करता है। जो गद्य से अभिन्न सा प्रतीत होता है। इस प्रकार कथा एवं नाटक का गद्य–पद्य मिश्रण कृत्रिम, पूर्वाग्रहयुक्त तथा सहेतुक होता है।

चम्पू में कथा एवं नाटक की अपेक्षा गद्य–पद्य का मिश्रण सहज होता है। किसी एक विधा गद्य अथवा पद्य में कवि का कोई दुराग्रह नहीं होता। चम्पूकाव्य में कवि अपनी रुचि के अनुसार गद्य तथा पद्य का प्रयोग कर सकता हे। चम्पूकाव्य की प्रकृति ही गद्य तथा पद्य के मिश्रण की है।

मिश्रकाव्यमिति प्रोक्तं गद्यपद्यविमिश्रणात्।
तदेव कैश्चनाचार्यैश्चम्पूकाव्यमपि स्मृतम्।।
कथायां नाटके चापि मिश्रणं गद्यपद्ययोः।
दृश्यते चेत्ततः कस्माच्चम्पूस्तदतिरिच्यते।।

– अभिराजयशोभूषणम्

12.7.1 चम्पूकाव्य के भेद

चम्पू अंकों या उच्छवासों में विभक्त होती है। कुछ आचार्यों ने चम्पू को उक्ति–प्रत्युक्ति वाले विष्कम्भक से रहित माना है। प्रबन्ध और मुक्तक भेदों की दृष्टि से चम्पू दो प्रकार की होती है– मुक्तक और प्रबन्ध। पुनः मुक्तक के करम्भक, विरुद तथा जयघोषणादि भेद होते हैं –

'प्रबन्धमुक्तकाभ्याश्च चम्पूरपि मता द्विधा।
करम्भकश्च विरुदं मुक्तकं जयघोषणा।।'

करम्भक – करम्भक विविध भाषाओं से निर्मित होता है। ऐसा आचार्य विश्वनाथ का मानना है। आचार्य विश्वनाथ ने सोलह भाषाओं से मिलाकर 'प्रशस्तिरत्नावली' की रचना की है, जो करम्भक का उदाहरण है।

विरुद – साहित्यदर्पणकार के अनुसार गद्य–पद्य मिश्रित राजस्तुति को विरुद करते हैं। विरुद का उदाहरण 'विरुदमणिमाला' है।

जयघोषणा – जयघोषणा का उदाहरण अप्राप्त है।

प्राचीन आचार्यों के प्रबन्धात्मक चम्पू के उदाहरण हैं – नलचम्पू, मदालसाचम्पू, यशस्तिलकचम्पू, जीवन्धरचम्पू, रामायणचम्पू, भारतचम्पू, नृसिंहचम्पू आदि।

काव्य की विभिन्न विधाओं की भांति चम्पूकाव्यों में भी देवस्तुति परक चम्पूकाव्यों की रचनाएँ भी हुईं जैसे – चम्पूराघव, कंसवधचम्पू, गौरीविलासचम्पू आदि। इन सभी की रचना 18वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी के मध्य हुई। इसी प्रकार आश्रयदाताओं की प्रशस्तिपरक, तीर्थ क्षेत्रों का माहात्म्य, यात्राविवरणात्मक चम्पूकाव्यों की भी रचना इस अवधि में हुई।

आधुनिक युग के चम्पूकाव्यों में राघवाचार्य प्रणीत 'वैकुण्ठविजयचम्पू', धर्मदत्त झा प्रणीत 'सुलोचना–माधवचम्पू', बदरीनाथ झा प्रणीत 'गुणेश्वरचरितचम्पू', हरिनन्दनभट्ट प्रणीत 'सम्राटचरित्' चम्पूकाव्य, रघुनन्दन त्रिपाठी प्रणीत 'श्रीहरिहरचरितम्' चम्पूकाव्य, राघवेन्द्राचार्य पंचमुखि प्रणीत 'विरूपाक्षवसन्तोत्सवचम्पू', विट्ठलोपाध्याय प्रणीत 'प्रहलादचम्पू' रूद्रदेव त्रिपाठी प्रणीत 'चतुर्वेदचरितचम्पू', 'मोहनचरितचम्पू', 'राजेन्द्रचन्द्रोदयचम्पू', श्रीनिवास प्रणीत 'आनन्दरंगविजयचम्पू', 'मोहनचरितचम्पू', के0 कृष्णजोइसकृत 'शरन्नवरात्रचम्पू', गोविन्दभट्ट प्रणीत 'सर्वज्ञेन्द्रचम्पू' तथा 'वनेश्वरविद्यालंकार' तथा प्रो0 राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'अभिराजचम्पू' आदि प्रमुख हैं।

12.8 अन्य विधाएँ

आधुनिक युग के कवियों ने अनेक विधाओं में रचनाएँ की हैं, जिन विधाओं में पहले केवल हिन्दी या लोकभाषाओं में रचनाएँ की जाती थीं। इन नवीन विधाओं में स्कन्धहारीय (कहरवा), चैत्रक (चैता), कजरी, नक्तक (नकटा), प्रचार (पचरा), सूतगृहगीत (सोहर), रसिक (रसिया), लांगलिक (लांगुरिया), फाल्गुनिक (फाग) एवं गलज्जलिका (गजल) आदि प्रमुख हैं।

12.8.1 कजरी

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र ने अपनी पुस्तक 'नई सहस्राब्दी में संस्कृत' में लिखा है कि 'प्रियसंगम–जनित रतिसौख्यक के विनाश को जो अभिव्यक्त कर दे उसे 'कजरी' कहते हैं। महारास का यह संविधानक ही मेरे विचार से कजरी नामक लोकगीत का उद्भव बिन्दु है।'

प्रो0 मिश्र ने लिखा है कि श्रीमद्भागवत के गोपीगीत में गोपियों ने प्रियतम माधव को जो उलाहने दिये हैं, जो कुछ भी आत्म निवेदन किया है, वही उतना आज भी इस लोकगीत का प्राणतत्त्व है। अभिराजयशोभूषणम् में प्रो0 मिश्र ने कजरी के विषय में लिखा है –

कोशलेषु च काशीषु गीयते हि घनागमे। गीतिका कजरीनाम्नी नैकरागसमाश्रिता।।
वियोगिन्या हि गीतेऽस्मिन् प्रेषितं नायंक प्रति। उपालम्भाः प्रदीयन्ते विस्मृतिक्षोभकारकाः।।

12.8.2 चैत्रक (चैता)

चैत के महीने में, हर्ष एवं आह्लाद से ओत–प्रोत तथा नई फसल की समृद्धि से गार्हस्थ्य–वैभव की सूचना देने वाला चैता नामक गीत गाया जाता है। चैता नामक गीत में कभी–कभी परदेश गये प्रियतम वाली नवयौवना नायिका मर्मस्पर्शी शब्दों में अपने कामजनित आतंक को अभिव्यक्त करती है।

अभिराजयशोभूषणम् में चैत्रक का लक्षण इस प्रकार दिया गया है –

चैत्रकं गीयते चैत्रे हर्षसम्मोदनिर्भरम्।
नवाऽन्नागमसम्भारसम्पदिंगितवैभवम्।।
चैत्रकेऽपि क्वचिद् बाला कापि प्रोषितवल्लभा।
व्यनक्ति स्वीयमातंक स्मरजं मार्मिकैः पदै।।

12.8.3 सूतगृहगीतम् (सोहर)

बच्चे की जन्म आदि मंगल अवसर पर गाया जाने वाले गीत को सोहर कहते हैं। संस्कृत में भी इस प्रकार के गीतों की रचना की जा रही है। प्रो0 मिश्र ने इसका लक्षण इस प्रकार दिया है–

पुत्रजन्मविवाहदिमङ्गलावसरे पुनः।
गीयते ननु नारीभिर्गीतं सूतगृहाभिधम्।।

12.8.4 बटुकगीत (बरुआ)

यज्ञोपवीत (उपनयन) संस्कार के अवसर पर, बटु की शिक्षा के आशयों को प्रकाशित करने वाला रमणीय बटुक अथवा बटुगीत (बरुआ) गीत गाया जाता है। प्रो0 मिश्र ने इसका लक्षण इस प्रकार दिया है–

यज्ञसूत्रोत्सवे रम्यं बटुशिक्षाशयात्मकम्।
वटुकं वटुगीतं वा लोकगीतं महीयते।।

12.8.5 प्रचरण (पचरा)

विवाह के अवसर पर नाना प्रकार के आशय वाले लोकगीत, देवताओं को निमंत्रित करने वाले आशय वाले गीत तथा मंगलोत्सव–कार्य खुशी के साथ प्रचार करने के कारण इस विधा के गीत को प्रचरण (पचरा) कहा जाता है।

प्रचरण का लक्षण–

समागते विवाहेऽय विविधाशयभांजि हि।
लोकगीतानि गीयन्तेऽङ्गनाभिः प्रायशो निशि।।
तत्रादौ प्रचरणं तद्गीयते मङ्गलात्मकम्।
सर्वदेवकुलग्रामदेवताऽऽमन्त्रणात्मकम्।।
यतो ह्यनेन गीतेन प्रचारः क्रियते मुदा।
मङ्गलोत्सवकृत्यस्य ततश्चेदं प्रचारणम्।।

12.8.6 नक्तक (नकटा)

पुत्र विवाह के अवसर पर बारात के घर से प्रस्थान करने पर पुत्र पक्ष की महिला रात्रि में जागरण करती हुई जो गीत मनोविनोद के लिए गाती हैं, उसे नक्तक (नकटा) कहते हैं –

कन्यागृहं गतेष्वेव पुरुषेषु गृहस्त्रियः।
नृत्यन्तो निशि गायन्ति लोकगीतं हि नक्तकम्।।

12.8.7 उत्थापन (उठान)

मांगलिक उत्सव के बाद पड़ोस आदि की महिलाएँ अन्तिम मंगल गीत गाती हैं जिसमें ठिठोली, आह्लाद आदि होता है, उसे उत्थापन (उठान) कहते हैं। इसका लक्षण अभिराजयशोभूषणम् में इस प्रकार है –

रमण्यः प्रतिवेशिन्य उत्सवस्य समापने।
उत्तिष्ठन्त्योऽपि गायन्ति किव्यन्तिमगीतकम्।।
हास्याभिनयनाट्यादिसन्ततं मोदसम्भृतम्।
गीतं तदुच्यते रम्यं मङ्गलोत्थानगीतकम्।।

12.8.8 लांगलिक (लांगुरिया)

प्रो0 मिश्र ने अपने अभिराजयशोभूषणम् लांगलिक का लक्षण इस प्रकार दिया है –

लाङ्गलेन धरां कर्षन् स्वेदसिक्तकलेवरः।
हवलाहोऽपि यद्गीतं गायति प्रोन्मदो मुदा।।
खेदं स्वकं लघूकर्तुं मन्ये वृषभयोऽपि
श्रुण्वताश्च मनोरंजि लांगलिकं तदुच्यते।।

जब पसीने में डूबा हुआ किसान हल चलाते हुए अपनी थकान मिटाने के लिए मस्ती में झूमता हुआ जो गीत गाता है, उसे लांगलिक या लांगुरिया कहते हैं।

12.8.9 स्कन्धहारीय (कँहरवा)

लांगलिक की तरह ही भारी–भरकम पालकी को ढोने वाले कहार रास्ते की थकान को भुलाने के लिए बारी–बारी से जो गीत गाते हैं, उसे स्कन्धहारीय (कँहरवा) कहा जाता है, इससे वधू का भी मनोरंजन होा है। इसका लक्षण मिश्र जी ने इस प्रकार दिया है–

वहन्तश्शिविकां गुर्वीमेवमेव हि वाहकाः।
गायन्ति स्कन्धहारीयं समवेतस्वरोच्चयैः।।
अध्वश्रमापनोदीदं गीयमानं क्रमेण च।

स्कन्धहारीयमाख्यातं वधूट्याश्चापि मोददम्।।

12.8.10 औष्ट्रहारिक (ऊँटहारागीत)

रात्रि के समय ऊँट से व्यापार के लिए जाने वाले व्यापारी अपनी आलस्य और नींद को दूर भगाने के जो लय–ताल पर आधारित गीत गाते हैं, उसे औष्ट्रहारिक कहते हैं। इसका लक्षण अभिराजयशोभूषणम् में इस प्रकार दिया गया है–

रात्रौ क्रमेलकारूढाः सार्थवाहा यथाक्रमम्।
तन्द्रां निद्रामपाकर्तुं यच्च गायन्ति गीतकम्।।
तदौष्ट्रहारिकं गीतं लयवाहि समुच्यते।
शृण्वतां पामराणां च हृदयोन्मादकारकम्।।

इन सभी आधुनिक काव्यविधाओं पर कवियों ने अपनी लेखनी उठाई है। प्रो0 मिश्र की मृद्वीका, मधुपर्णी, वाग्वधूटी आदि रचनाएँ इन विधाओं का उदाहरण हैं।

12.9 अभ्यास–प्रश्न

1. दूतकाव्य किसे कहते हैं, किसी एक दूतकाव्य के विषय में बताइए।
2. विमानकाव्य का लक्षण देते हुए उसे स्पष्ट कीजिए।
3. चित्रकाव्य किसे कहते हैं ?
4. चम्पूकाव्य की विधा को स्पष्ट कीजिए।
5. आधुनिक संस्कृत–काव्य की नवीन विधाओं पर प्रकाश डालिए।

12.10 सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास, लेखक – डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी
2. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा, लेखक – डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी

3. गीतगोविन्द

4. अर्वाचीन संस्कृत काव्य एवं काव्यशास्त्र, सम्पादक – डॉ0 स्मिता अग्रवाल

5. अभिराजीय रागकाव्य–समीक्षा, लेखक – डॉ0 हितेश्झ कुमार चौटे

6. संस्कृत–कविता का अभिराज–युग, लेखक – डॉ0 राजकुमार मिश्र 'कुमार'

7. अभिराज–वाङ्मयदर्पण, सम्पादक – प्रो0 अनिल प्रताप गिरि

8. आधुनिक संस्कृत काव्य की परिक्रमा, लेखक – डॉ0 मंजुलता शर्मा